तप पूत सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरी
श्री गणेशमल जी महाराज की १०३वी जन्म जयन्ति
के सन्दर्भ मे

तपःपूत सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरी
गुरु गणेश जीवन-दर्शन

लेखक—
मेवाड़ भूषण धर्म सुधाकर स्व० गुरुदेव श्री प्रतापमल जी म० के शिष्य
मरुधराभूषण श्री रमेशमुनि जी

प्रेरक—
गुरु गणेश ज्ञानप्रदीप महाराष्ट्र तपोकेशरी
श्री बसतलाल जी महाराज
सेवामूर्ति व्याख्यानवाचस्पति
श्री रतनमुनि जी म० "रत्नाकर"

सम्पादक—
कवि, वक्ता
श्री विजय मुनि "विकास"

प्रकाशक
श्री गुरु गणेश जैन निवृत्ति आश्रम
अनाकाई

□ पुस्तक—[illegible] सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरी
गुरु-गणेश जीवन-दर्शन

□ लेखक—मरुधरा भूषण श्री रमेशमुनि

□ सम्पादक—वक्ता कवि श्री विजय मुनि "विकास"

□ प्रेरक—महाराष्ट्र तपोकेशरी श्री बसन्तलाल जी म०
सेवामूर्ति श्री रतन मुनि जी म० "रत्नाकर"

□ प्रथमावृत्ति—वि० सं० २०३९ माघ, वसन्त पंचमी
५००० सन् १९८३ जनवरी

□ प्रकाशक—गुरु गणेश जैन निवृत्ती आश्रम
मु० पो०—अनकाई ता० येवला
जिला—नासिक (महाराष्ट्र)

□ मूल्य : अर्ध मूल्य छह रुपया सिर्फ [illegible]

□ मुद्रक—श्रीचन्द सुराना के लिए
एन० के० प्रिन्टर्स, आगरा।

समर्पित

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय मेवाडभूषण

धर्म सुधाकर गुरुदेव श्रीप्रतापमल जी महाराज के

ज्येष्ठ शिष्य पद पर आसीन होने का जिनको सौभाग्य प्राप्त हुआ।

मेरे वैराग्य भावो को अपनी स्नेहिल वाणी से,

सुदृढ आचार-सहिता एव मधुर स्वभाव से सिंचन किया।

और सम्यक्ज्ञान के आलोक से आलोकित भी

मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता गुरु-गणेश ज्ञान-प्रदीप,

महाराष्ट्र तपोकेशरी सम्यक्त्व धर्म प्रसारक

श्री वसंतलाल जी महाराज के
पावन कर-कमलो मे

"तप पूत सद्गुरु नाथ कर्नाटक केशरी
गुरु-गणेश जीवन-दर्शन"

सभक्ति-सश्रद्धा
समर्पित

मुनि रमेश

सद्गुरुनाथ गणेशमल जी महाराज

सक्षिप्त जीवन परिचय

जन्म भूमि—भावी विलाडा (राजस्थान)

पिता—धर्मप्रेमी श्रीमान् पूनमचन्द जो

माता—सौ० धर्मशीला श्रीमती घुलीबाई

वश तथा गोत्र—ओसवाल, ललवानी

जन्म सवत—१९३६ कार्तिक शुक्ला षष्ठो

दीक्षा सवत—१९७० मृगसर सुदि नवमी

दीक्षा स्थल—नगर सूल जि० नासिक (महा०)

दीक्षा गुरु—तपस्वी प्रखरवक्ता श्रद्धेय श्री प्रेमराज जो महाराज

सम्प्रदाय—कोटा सम्प्रदाय

भाषा ज्ञान—सस्कृत प्राकृत मराठी, कन्नड, उर्दू, आदि अनेक भाषाओ का आपको अच्छा ज्ञान था।

शास्त्रीय ज्ञान—जेनागम बत्तीस शास्त्र, वेद पुराण, महाभारत, रामायण, तथा अनेको थोकडे कठस्थ।

शिष्य समुदाय—श्री खेमचन्द जो महाराज, श्री राजमल जी महाराज श्री अगरचन्दजी महाराज

वर्तमान मे शिष्य प्रशिष्य—महान तपस्वी उग्रविहारो दक्षिणकेशरी खद्दरधारी श्री मिश्रीलाल जी महाराज, सेवाभावी श्री सम्नत मुनिजी महाराज।

प्रमुख विशेषता—सरल, गभीर, स्पष्ट वक्ता, अन्तिम समय तक एकातर उपवास करते रहे।

रचनात्मक कार्य—खादी प्रचार, सम्यक्त्व प्रचार, धर्म प्रचार गौशाला आदि-आदि।

अतिम प्रयाण—स० २०१८ माघ कृष्णा अमावस्या दि० ४-२-६२ रविवार, जालना (महाराष्ट्र)

□□

शत - शत वन्दन विनय भाव युत
तप पूत गुरुदेव चरण ।
तप - जप - शम - दम की महिमा से
मण्डित है भूलोक गगन ।

मगल वचन

वसे गुरुकुले णिच्च, जोगव उवहाणव।
पियकरे पियवाई, से सिक्ख लद्धुमरिहइ ॥
जहा सखम्मि पय णिहिय, दुहओ वि विरायइ।
एव बहुस्सुए भिक्खू, धम्मो कित्ती तहा सुय ॥
जहा से सयभूरमणं, उदही अक्खओदए।
णाणा रयणपडिपुण्णे, एव हवई बहुस्सुए ॥

—जो सदा गुरुकुल मे रहने वाला, समाधिभाव मे लीन रहने वाला, उपधान तप करने वाला, प्रिय करने और प्रिय बोलने वाला हो, वही शिक्षा प्राप्त करने के योग्य होता है।

—जैसे शख मे रहा हुआ दूध दो प्रकार से शोभा पाता है, उसी प्रकार बहुश्रुत भिक्षु मे धर्म, कीर्ति और श्रुत शोभा पाते हैं।

—जिस प्रकार स्वयभू रमणसमुद्र, अक्षय जल और नाना प्रकार के रत्नो से भरा हुआ है उसी प्रकार बहुश्रुत श्रमण सद्गुणो से शोभायमान होता है।

—भगवान महावीर

प्रस्तुत ग्रन्थ प्रकाशन मे उदारतापूर्वक सहयोग प्रदान करने वाले सद्गृहस्थो की शुभ नामावली

२१०००) श्री सी० चम्पालाल जी, उत्तमचन्द जी गाधी जवाली (मारवाड)
हाल मुकाम ५०० टी० एच० रोड, मद्रास

११०००) श्री खीवराज जी गादिया सौ० चचलवाई गादिया औरगावाद
[गणेश ऑफसेट महावीर पेपर प्राडक्टस प्रा० लि०]

५५५१) श्री पारसमल जी सौ० किरणवाई तालेडा, मद्रास

५०००) श्री श्रीमति चादकु वरवाई एव सूरजदेवी साखला, वेंगलोर

२१०१) श्री केशरवाई दीपचन्द मेमोरियल ट्रस्ट, औरगावाद

२१०१) श्री सुवालाल जी सदीपकुमार जी छल्लानी, औरगावाद

२१००) श्री गणेश वस्त्र निकेतन, (राधाकृष्णनाका) औरगावाद

१५०३) श्री हस्तीमल जी वावूलाल जी डक, मद्रास

१११११) श्री गणेशमल जी उत्तमचन्द जी पोखरणा, मद्रास

१११११) श्री मुखराज जी गौतमचन्द जी पोखरणा, मद्रास

११११) श्री शेषमल जी नौरतनमल जी चौपडा, मद्रास

११११) श्री एच० सम्पत्तलाल जी सचेती, मद्रास

११११) श्री सम्पतराज जी शान्तिलाल जी छोरलिया, मद्रास

११११) श्री हीराचन्द जी रायचन्द जी सचेती वन्धु परिवार, गुडियात्तम

११००) श्री मिश्रीलाल जी भंवरलाल जी जैन, मद्रास

११११। श्री सा० मागीलाल जी रतनचन्द जी गाधी, वेंगलोर

११११) श्री वर्धमान स्था० जैन श्रावक सघ
द्वारा श्री पन्नालाल जी मोहनलाल जी भण्डारी, नादुर्डी

११११) श्री शान्तिलाल जी अशोककुमार चौपडा, वसवन्तपीपलगाव

२१११) श्री ब्रह्मेचा वन्धु मागीलाल जी जमराज जी ब्रह्मेचा, लासलगाव

१११?) श्री प्रेमचन्द फूलचन्द फूलफगर, औरगावाद

१०००) श्री माणकचन्द जी राजमल जी वाफना, वडगाव (मावल)

११११) श्री गुन्देचा टैक्स टाईल्स रायपुर (म० प्र०)

११११) श्री आर० वी० राठोड, नासिक

११११) श्री कमलावाई लालचन्द जी विनायकिया, व्यावर

११११) श्री मदनलाल जी कन्हैयालाल जी गुन्देचा, रत्नागिरी

□□

सम्पादकीय

तप-जप-ध्यान-मौन-आचार-विचार-व्यवहार मे कुशल, निडर-निष्पक्ष प्रवचनकार, सयम-साधना क्षेत्र के सफल सेनानी, सम्यक्त्व धर्म-प्रसारक, आत्म तत्त्व चितक, कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी "सद्गुरुनाथ किंवा बाबाजी महाराज" से सम्बोधित किये जाने वाले परम श्रद्धेय सद्मार्गोपदेशक बाल ब्रह्मचारी पूज्य श्री गणेशमल जी महाराज का व्यक्तित्व एक सौरभ सम्पन्न उद्यान के समान था ।

जिस प्रकार उद्यान मे पहुँचने वाले पथिक की थकान तो दूर होती ही है, साथ ही उसके मानस का परिष्कार भी होता है, ठीक उससे भी कही अधिक सत जीवन रूप उद्यान से ससारी पथिको को उपलब्धि होती है, जैसे ससारी भटकन का परिश्रम, मोह-माया, मिथ्यात्व की उलझन, राग-द्वेष विषय-कषाय की दुर्गन्ध सभी सत-गुणो की सौरभ से साफ हो जाती है । पूज्य बाबाजी महाराज का जीवन भी इसी प्रकार का था ।

"जेय कन्ते पिए भोए जिसे कान्त-प्रिय भोगोपभोग की उपलब्धि हो रही है, ससार की सम्पदा चरण छूना चाह रही है, किन्तु सामर्थ्यवान् होकर भी उसे छोडने का दृढ सकल्प कर लेता है, इतना ही नही, प्राप्त भोगो को स्वेच्छा से छोड देता है । तपस्वीराज भी इसी गाथा के अनुसार भगवान महावीर की वाणी का अनुकरण करने वाले थे । उनका दिव्य तपोमय जीवन अपने लिये तो कल्याणकारी था ही, साथ ही उनके सम्पर्क मे आने वाली आत्माओ का भी कल्याणक था । जिनवाणी के सम्प्रेरक मुँहपत्ति बधाने वाले गुरु-गणेश (श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज) ने सन्मार्ग से भटक गई सैकडो-हजारो आत्माओ को सम्यक् दिशादर्शन दिया ।

निरभिमानी, निराडम्वर पूर्वक सतत साधना धर्म मे जागरूक रहने वाले, श्वेताम्बर स्थानकवासी श्रमण सस्कृति को प्राणवान बनाने वाले, सोई जनता को पुन जागृत करने वाले असीम आस्था के केन्द्र भगवान महावीर की अमर वाणी को प्रमुखता देने वाले महान् साधक सत-आत्मा, अपनी इच्छाओ को जीतने वाले, स्वय के लिये दृढप्रतिज्ञ, वज्र के समान कठोर साथ ही आत्मीय गुणो मे फूल के समान कोमल थे श्री कर्नाटक केशरी ।

सदैव सादा जीवन उच्च विचार को परिपुष्ट करने मे प्रयत्नशील, "सति मग्ग च वूहए' की ध्वनि को वल देने वाले तप-त्याग से आध्यात्मिक

वैभव को प्राप्त करने वाले श्री गणेशलाल जी महाराज का जीवन एक ज्योति-पुन्ज के रूप मे जैन समाज के बीच ही नही, जैनेतर जगत् मे भी प्रभावोत्पादक बनकर उभरा। वे अत्यन्त निष्पृह साधक थे, अपनी श्रमण मर्यादा के पालन मे प्रतिपल-प्रतिक्षण कटिबद्ध रहना उनका परम-चरम ध्येय था।

कष्ट सहिष्णु, महामुनि परम गुणि, धीर-वीर-गम्भीर गुरु-गणेशलाल जी महाराज की "तप पूत सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरी गुरु-गणेश जीवन-दर्शन" नामक पुस्तिका के लेखक मेरे गुरुदेव परम श्रद्धेय, मरुधरा भूषण, साहित्य मनीषी, सुलेखक प० रत्न श्री रमेश मुनिजी महाराज है, मैं अपने आपको अत्यन्त सौभाग्यशाली मानता हूँ जो कि—मुझे इस ग्रन्थ का सम्पादन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

पूर्ण जानकारी के अभाव मे कही कोई प्रसग छूट गया हो अथवा कोई शाब्दिक त्रुटि रह गई हो तो सुज्ञ बन्धु गुणानुरागी हो सार को ग्रहण कर लें।

परम श्रद्धेय गुरु-गणेश के चरणो मे असीम आस्था के साथ अनन्त-अनन्त वन्दना पूर्वक श्रद्धाजलि।

—विजय मुनि 'विकास'

पूर्व पीठिका

भारतीय ऋषि परम्पराओ मे स्थानकवासी जैन श्रमण, मुनि पुगव की आचार-विचार सहिता सदियो से तेजस्वी यशस्वी तथा वीरत्ववान रही है। सामाजिक किंवा धार्मिक कोई भी रीति-रिवाज सत्य-तथ्य पर आधारित हो यही उन्हे प्रिय था, साथ ही बिना हिचकिचाहट वे स्वय उसका आचरण-अनुकरण करते थे। उनका लक्ष्य स्व-पर कल्याण का सदैव रहता आया है। सद्‌भावना रूप सरिता से नि सृत मगलधारा अनवरत प्रवाहमान रहती थी—

सुखी रहे सब जीव जगत् मे,
कोई कभी नहीं घबरावे।
वैर-पाप अभिमान छोड जग—
नित्य नये मगल गावे ॥

जिनधर्मानुयायी क्रान्तद्रष्टा मुनिप्रवर शुभकामनाओ के साथ मिथ्या मान्यताओ, अन्धानुकरण अर्थात् जड क्रिया कांडो मे मिथ्या प्रचार को दूर करते हुए समय-समय पर सम्यक् आराधना-साधना का नारा बुलद करने मे सक्रिय रहे है, फलस्वरूप प्रबुद्ध वर्ग को सावधान होने का अवसर प्राप्त होता रहा, साथ ही उन्हे हेय-ज्ञेय-उपादेय का विवेक भी हुआ।

अहिंसा के अवतार समता दर्शन के प्रणेता, अणुव्रत, महाव्रत धर्म के व्याख्याता भगवान महावीर के अहिंसा, अनेकात, अपरिग्रह सिद्धान्त को भारत भर मे इस छोर से (काश्मीर से कन्या कुमारी तक) उस छोर तक पहुँचाने का अर्थात् भगवान महावीर के आत्मवाद धर्म-दर्शन का प्रचार-प्रसार करने का सम्पूर्ण श्रेय मुनि परम्परा को है। आज जो मानव-समाज मे जिनधर्म के सस्कारो का वैभव हमे दृष्टिगोचर होता है, यह उसी श्रमण परम्परा की पावन देन है। जिनधर्म के प्रचार-प्रसार मे आने वाली कठिनाइयो, परिषहो, विरोधियो के वितडावादो को सहन करते हुए विरोध को भी विनोद का रूप देते हुए श्रमण मुनिप्रवर अपने कदम बढाते रहे, इस बीच बडी-बडी लोम-हर्षक आपदाएँ आईं, पर उन सभी का सामना करते हुए भगवान महावीर के शासन को चमकाने-दमकाने का महान् गौरव प्राप्त किया है हमारे चरितनायक सत-मुनिराजो ने।

उसी तेजस्वी परम्परा के प्रतीक प्रात स्मरणीय परम श्रद्धेय तप पूत समकित धर्म भास्कर कर्नाटक केशरी सद्गुरुनाथ गुरु-गणेश श्री गणेशमलजी महाराज रहे है। जिनका साधनामय जीवन बडा ही सबल तथा जन-जन के लिए प्रेरक रहा है। जिनकी नियमोपनियम की भूमिका अत्यन्त सुदृढ थी। आचार-विचार के कठोर परिपालक के रूप मे आप अपनी शानी के एक अलौकिक सत रत्न थे।

उपाध्याय प्रवर बहुश्रुत गुरुदेव श्री कस्तूरचन्द जी महाराज एव जैनागम तत्वविशारद प्रवर्तक श्रद्धेय गुरुदेव श्री हीरालालजी महाराज की आज्ञा लेकर भगवान महावीर के धर्मशासन की प्रभावना एव मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता गुरु गणेश ज्ञान प्रदीप महाराष्ट्र तपोकेशरी श्री बसन्तलाल जी म०, उपदेशाचार्य श्री राजेन्द्र मुनि जी म०, वीरपुत्र श्री सोहन मुनिजी म० एव सेवामूर्ति श्री रतनमुनि जी 'रत्नाकर' के दर्शनो की तीव्र उत्कठा से प्रेरित होकर जब मैं अपने परम पुण्यवान सहयोगी मुनियो के साथ महाराष्ट्र की ओर आया और अपने ज्येष्ठ गुरु भ्राता के दर्शन किये तब मुझे अपार आनन्दानुभूति हुई। काफी वर्षों के पश्चात् गुरु भ्राता का स्नेहिल मिलन हुआ। पारस्परिक विविध प्रसगो का आदान-प्रदान हुआ एव स्व० मेवाड भूषण गुरुदेव श्री प्रतापमलजी म० के अन्तिम सस्मरण की झाकी तपस्वीराज को कह सुनाई।

परम श्रद्धेय मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता श्री बसन्तलालजी म० ने मुझे कहा—कर्नाटक केशरी गुरु गणेश श्री गणेशमलजी म० का जीवन दर्शन तुम्हे लिखना है। क्योकि—पूर्व मे गुरुदेव मेवाडभूषणजी म० का जीवन दर्शन तुम्हारी लेखनी से लिखा गया, अत यह पावन कार्य तुम्हे करना है। तद-नुसार मुनिद्वय (गुरु गणेश ज्ञान प्रदोप श्रो बसन्तलालजी म० तथा सेवामूर्ति श्री रतन श्री रतन मुनि जी म०) की सबल प्रेरणा ने मुझे लिखने का साहस दिया। जितनी सामग्री मुझे मिली उसी के आधार पर मैंने यह सक्षिप्त जोवन दर्शन, सस्मरण खण्ड, साधु-साध्वा परिचय तैयार किया है।

जीवन दर्शन की बिखरो हुई सामग्रो को एकत्रित करने का महान् कार्य बेंगलोर निवासी धर्मप्रेमी सुश्रावक स्व० श्रामान् अनराजजा साखला की धर्मपत्नी चादबाई ने किया। इसके मूल प्रेरक सेवामूर्ति श्री रतनमुनि जी रहे है। सम्पादक का कार्य कवि वक्ता श्री विजयमुनि जी 'विकास' ने किया। साथ ही प्रेस लिपि का श्रेय भो श्रो विजयमुनि जी को है। श्री नरेन्द्र मुनिजो, सन्त रत्न प्रवचनकार श्री प्रमोदमुनिजी, युवातपोनिधि श्री अभयमुनिजी, मधुर गायक श्री नवीन मुनिजी, सिद्धान्त शास्त्री श्री कमल मुनिजो म० आदि

सभी सन्त तथा साध्वी मण्डल का इस शुभ कार्य मे कविता, सस्मरण, श्रद्धाजलि आदि द्वारा पूरा-पूरा सहयोग रहा है। गुरुदेव की सुकृपा तथा सभी श्रद्धालु आत्माओ के सहयोग से इस छोटे से प्रयास मे मुझ बल मिला।

प्रुफ सशोधन तथा पुस्तक की साज-सज्जा आदि को व्यवस्थित रूप देने का श्रेय कलम कलाधर श्रीमान् श्रीचन्द जी सुराना को है।

मुझे आशा ही नही पूर्ण विश्वास है कि—इस सुन्दर कृति से अधिक से अधिक कर्नाटक केशरी जी म० के भक्त गण उस महान तपोमय व्यक्तित्व से परिचित होगे।

—मुनि रमेश

नासिक (जैन स्थानक)
दीपमालिका पर्व

उसी तेजस्वी परम्परा के प्रतीक प्रात स्मरणीय परम श्रद्धेय तप पूत समकित धर्म भास्कर कर्नाटक केशरी सद्गुरुनाथ गुरु-गणेश श्री गणेशमलजी महाराज रहे है। जिनका साधनामय जीवन बडा ही सबल तथा जन-जन के लिए प्रेरक रहा है। जिनकी नियमोपनियम की भूमिका अत्यन्त सुदृढ थी। आचार-विचार के कठोर परिपालक के रूप मे आप अपनी शानी के एक अलौकिक सत रत्न थे।

उपाध्याय प्रवर बहुश्रुत गुरुदेव श्री कस्तूरचन्द जी महाराज एव जैनागम तत्वविशारद प्रवर्तक श्रद्धेय गुरुदेव श्री हीरालालजी महाराज की आज्ञा लेकर भगवान महावीर के धर्मशासन की प्रभावना एव मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता गुरु गणेश ज्ञान प्रदीप महाराष्ट्र तपोकेशरी श्री बसन्तलाल जी म०, उपदेशाचार्य श्री राजेन्द्र मुनि जी म०, वीरपुत्र श्री सोहन मुनिजी म० एव सेवामूर्ति श्री रतनमुनि जी 'रत्नाकर' के दर्शनो की तीव्र उत्कठा से प्रेरित होकर जब मैं अपने परम पुण्यवान सहयोगी मुनियो के साथ महाराष्ट्र की ओर आया और अपने ज्येष्ठ गुरु भ्राता के दर्शन किये तब मुझे अपार आनन्दानुभूति हुई। काफी वर्षों के पश्चात् गुरु भ्राता का स्नेहिल मिलन हुआ। पारस्परिक विविध प्रसगो का आदान-प्रदान हुआ एव स्व० मेवाड भूषण गुरुदेव श्री प्रतापमलजी म० के अन्तिम सस्मरण की झाकी तपस्वीराज को कह सुनाई।

परम श्रद्धेय मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता श्री बसन्तलालजी म० ने मुझे कहा—कर्नाटक केशरी गुरु गणेश श्री गणेशमलजी म० का जीवन दर्शन तुम्हे लिखना है। क्योकि—पूर्व मे गुरुदेव मेवाडभूषणजी म० का जीवन दर्शन तुम्हारी लेखनी से लिखा गया, अत यह पावन कार्य तुम्हे करना है। तद-नुसार मुनिद्वय (गुरु गणेश ज्ञान प्रदीप श्री बसन्तलालजी म० तथा सेवामूर्ति श्री रतन श्री रतन मुनि जी म०) की सबल प्रेरणा ने मुझे लिखने का साहस दिया। जितनी सामग्री मुझे मिली उसी के आधार पर मैंने यह सक्षिप्त जीवन दर्शन, सस्मरण खण्ड, साधु-साध्वी परिचय तैयार किया है।

जीवन दर्शन की बिखरी हुई सामग्री को एकत्रित करने का महान् कार्य बैगलोर निवासी धर्मप्रेमी सुश्रावक स्व० श्रीमान् अनराजजी साखला की धर्मपत्नी चादबाई ने किया। इसके मूल प्रेरक सेवामूर्ति श्री रतनमुनि जी रहे हे। सम्पादक का कार्य कवि वक्ता श्री विजयमुनि जी 'विकास' ने किया। साथ ही प्रेस लिपि का श्रेय भी श्री विजयमुनि जी को है। श्री नरेन्द्र मुनिजी, सन्त रत्न प्रवचनकार श्री प्रमोदमुनिजी, युवातपोनिधि श्री अभयमुनिजी, मधुर गायक श्री नवीन मुनिजी, सिद्धान्त शास्त्री श्री कमल मुनिजी म० आदि

इसीलिए कहा गया है—

तपसा धार्यते पृथ्वी

पृथ्वी तप से ही स्थिर है, तप प्रभाव से ही समस्त जीव-जगत् चलायमान है, गतिशील है। तपोबल से ही समस्त सृष्टि नियत क्रम पर चल रही है।

तप की अचिन्त्य महिमा का साक्षाद् दर्शन होता है—तपोधनी गुरु गणेश के जीवन मे।

तप की तेजस्विता उनके जीवन पट पर जरी के धागो की तरह चमकती हुई प्रतीत होती है।

दया की मधुरिमा उनके अमृत वर्षी चक्षुओ से जैसे प्रतिपल प्रवाहित हो रही थी।

करुणा, परोपकार और त्याग की सुरसुरी उनके अन्त करण मे सतत प्रवहमान थी।

वे निस्पृह फक्कड थे, सत्य को कहने मे स्पष्ट बिना लाग लपेट के, सत्य की अमृतगुटी पिलाने मे विश्वास करते थे।

सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र का त्रिभुज ही उनके जीवन गणित का मूल सूत्र था।

मिथ्या आडम्बर, अन्धविश्वास, मिथ्यादृष्टि देवो की उपासना के वे कट्टर विरोधी थे।

वे सत्य का सरल पथ बताते थे।
वे तप का एकमेव सम्बल देते थे।

त्याग और करुणा का जीवन व्रत देते और बस, जो सत्य को समर्पित हो गया, तपो देवता के चरणो मे एकनिष्ठ भाव से अर्पित हो गया, उसके दु ख, दारिद्र्य, भय, सकट, विपत्तियाँ सब छिन्न-विच्छिन्न हो गये। गुरु गणेश की कृपा प्राप्त करने का एकमात्र मार्ग था—तप साधना, सम्यग् श्रद्धा और सत्य उपासना, मुखपत्ति, खद्दर गौ-सेवा—यही उनकी पूजा की दक्षिणा थी, यही उनकी तपोयज्ञ की आहुति थी।

जैन श्रमण परम्परा के इतिहास मे, बडे-बडे मान्त्रिक, चमत्कारी सिद्ध पुरुष, रस-सिद्ध विभूति सम्पन्न हुए है, पर तपोविभूति से, मात्र पवित्र तप साधना से विघ्न-भय-बाधाओ को दूर कर चमत्कार पैदा करने वाले साधक विरल हुए हैं।

प्रस्तावना

तप सूर्य को नमन !

आगम मे तप की अचिन्त्य महिमा का वर्णन करते हुए कहा है—

भवकोडी सचिय कम्म तवसा निज्जरिज्जई।

तप की निर्मल-कठोर साधना से करोडो जन्मो के सचित पाप कर्म भस्मसात् हो जाते है।

तप एक ज्वाला है, मन के, तन के विकारो, कलुषताओ और कर्म-आवरणो को जलाकर भस्मसात् कर डालती है।

तप एक ज्योति है, अन्तर मे सुप्त शक्तियो को प्रकाशमान कर देती है, अन्धकारावृत जीवन पथ को आलोक से भर देती है।

तप एक साधना है, असीम अद्भुत अगणित आत्म-शक्तियो का द्वार खोल देती है।

तप स्वय मे एक चमत्कार है, असख्य असख्य चमत्कारो की केन्द्रीभूत शक्ति है।

तप से मन शुद्ध होता है, विकार नष्ट होते हैं, मन सबल, सक्षम और निर्विकार होकर शक्ति स्रोत बन जाता है।

यह प्रचड आलोक रश्मियाँ बिखेरता सूर्य,
यह असख्य अमृत किरणें बिखेरता चन्द्र,
यह असीम जल कल्लोलो से तरगायमान समुद्र, यह विशाल धरा,
ये उत्तु ग गिरि शिखर,
यह प्रवहमान प्रभजन !

सब तपस्वी के चरणो को शतशत नमन करते हैं। तपस्वी की अचिन्त्य शक्ति से सकेतित होते हैं। देव, दानव, गाधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर सभी तपस्वी की वन्दना कर उसकी शुभाशीर्वाद पूर्ण अनुज्ञा-आज्ञा की प्रतीक्षा करते है।

समस्त भूमडल, नभोमडल तपस्वी के सकेतो पर डोलायमान हो जाता है, तपस्वी की वक्र दृष्टि से कम्पित हो उठता है और तपस्वी की कृपा दृष्टि के अमृत वर्षण से प्रफुल्लित हो जाता है।

इसीलिए कहा गया है—

तपसा धार्यते पृथ्वी

पृथ्वी तप से ही स्थिर है, तप प्रभाव से ही समस्त जीव-जगत् चलायमान है, गतिशील है। तपोबल से ही समस्त सृष्टि नियत क्रम पर चल रही है।

तप की अचिन्त्य महिमा का साक्षाद् दर्शन होता है—तपोधनी गुरु गणेश के जीवन मे।

तप की तेजस्विता उनके जीवन पट पर जरीके धागो की तरह चमकती हुई प्रतीत होती है।

दया की मधुरिमा उनके अमृत वर्षी चक्षुओ से जैसे प्रतिपल प्रवाहित हो रही थी।

करुणा, परोपकार और त्याग की सुरसुरी उनके अन्त करण मे सतत प्रवहमान थी।

वे निस्पृह फक्कड थे, सत्य को कहने मे स्पष्ट बिना लाग लपेट के, सत्य की अमृतगुटी पिलाने मे विश्वास करते थे।

सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र का त्रिभुज ही उनके जीवन गणित का मूल सूत्र था।

मिथ्या आडम्बर, अन्धविश्वास, मिथ्यादृष्टि देवो की उपासना के वे कट्टर विरोधी थे।

वे सत्य का सरल पथ बताते थे।
वे तप का एकमेव सम्बल देते थे।

त्याग और करुणा का जीवन व्रत देते और बस, जो सत्य को समर्पित हो गया, तपो देवता के चरणो मे एकनिष्ठ भाव से अर्पित हो गया, उसके दु ख, दारिद्रय, भय, सकट, विपत्तियाँ सब छिन्न-विच्छिन्न हो गये। गुरु गणेश की कृपा प्राप्त करने का एकमात्र मार्ग था—तप साधना, सम्यग् श्रद्धा और सत्य उपासना, मुखपत्ति, खद्दर गौ-सेवा—यही उनकी पूजा की दक्षिणा थी, यही उनकी तपोयज्ञ की आहुति थी।

जैन श्रमण परम्परा के इतिहास मे, बडे-बडे मान्त्रिक, चमत्कारी सिद्ध पुरुष, रस-सिद्ध विभूति सम्पन्न हुए है, पर तपोविभूति से, मात्र पवित्र तप साधना से विघ्न-भय-बाधाओ को दूर कर चमत्कार पैदा करने वाले साधक विरल हुए है।

गुरु गणेश उन्ही विरल तपोयोगियो की परम्परा की चमकती हुई मूल्यवान मणि थे।

दक्षिण भारत की भूमि उनकी तपोविभूति से पावन हुई, पर, भारत की समस्त प्रजा, पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण—उनके आशीर्वाद से अनुगृहीत रही है। जिसको भी उनका आशीर्वाद प्राप्त हो गया, वह धन्य हो गया, जीवन स्वर्ण निखर उठा उसका, गुरु गणेश की साधना, जिसने भी देखी, सुनी वह उनके प्रति श्रद्धावनत रहा, आजभी दक्षिण भारत मे हजारो श्रद्धालु उनके उपकारो उपकृत है।

वर्तमान मे गुरु गणेश के आध्यात्मिक प्रतिनिधि तपोधनी ध्यानयोगी श्री वसन्त मुनि जी है। उनकी गुरु भक्ति-पवन ने प्रेरित किया। गुरुदेव के जीवन-सागर को आलोडित करने की विशाल योजना बनी, और इस गुरुतर दायित्व का कुशल सवाहन किया है, सुलेखक मरुधरा भूषण श्री रमेशमुनि जी महाराज ने।

श्री रमेशमुनि जी की साहित्य शैली बडी प्राणवान है। तथ्यो को सहज रूप मे समुद्घाटित करने की अपार क्षमता है उनमे। वे जो भी लिखते है वह सारवत्ता गहराई और उदात्तता लिये है। जीवन चरित्र लेखन मे वे सिद्धहस्त है। अतीत के तथ्यो को प्राणवान बनाकर उपस्थित कर दिया है। उपन्यास सी रोचकता और दर्शन-ग्रन्थ सी प्रेरकता है इसमे। जो भी पढेगा, वह एक प्रेरणा से प्रफुल्लित हो उठेगा। एक श्रद्धा और भावना से प्रीणित होकर तपोयोगी के प्रति विनम्र हो उठेगा।

इस ऐतिहासिक सद्प्रयत्न के लिए इसके प्रेरक, लेखक, सहयोगी सभी धन्यवादार्ह है और एक शुभ सकल्प को समय पर सफल करने के लिए प्रशसा पात्र है।

१० जनवरी, आगरा

—श्रीचन्द सुराना 'सरस'

□□

खद्दरधारी दक्षिण केसरी तपस्वी श्री मिश्रीलाल जी महाराज
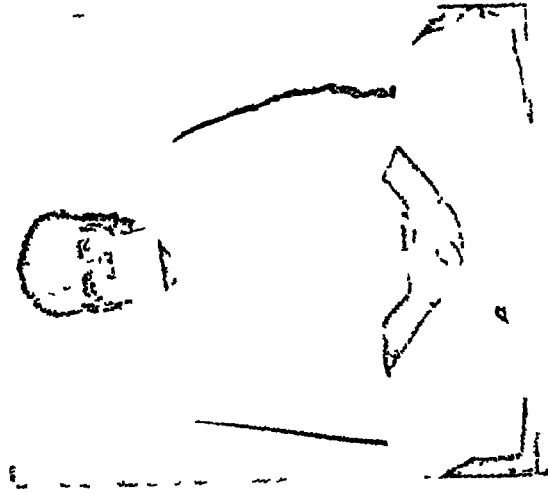
कवि, मधुर गायक श्री ऋषभ मुनिजी महाराज

ग्रन्थ के विद्वान लेखक
मरुधराभूषण श्री रमेशमुनि जी महाराज

उत्साही सम्पादक
कवि श्री विजय मुनि जी महाराज
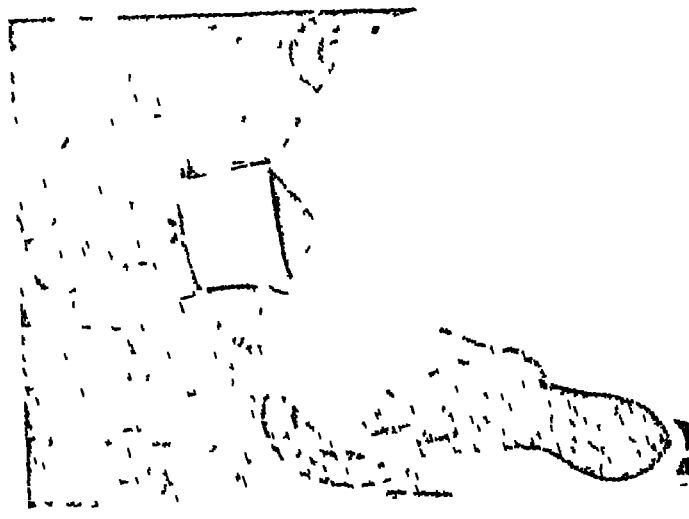
सुलेखक मरुधरा भूषण जी महाराज एक परिचय

"तप पूत सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरी गुरु-गणेश जीवन-दर्शन" नामक पुस्तक के लेखक मरुधराभूषण साहित्यमनोषी प० श्री रमेश मुनिजी महाराज हैं, जिनके जीवन का सक्षिप्त परिचय यहाँ देना प्रासगिक ही नही, आवश्यक भी है।

आपका जन्म जोधपुर (जिला) के अन्तर्गत मजल गाँव मे हुआ। आपके पिता श्रीमान् बस्तीमल जी कोठारी ओसवाल समाज के जाने-माने सुसम्पन्न धर्मनिष्ठ प्रतिष्ठित श्रेष्ठी है। आपकी माता श्रीमती सौ० धर्मशीला आशाबाई थी। श्रीमती आशाबाई की कुक्षि से दो कन्याओ ने जन्म लिया, तत्पश्चात् आपका जन्म हुआ। आपके जन्म लेने से कोठारी तथा सालेचा परिवार मे खुशियाँ छा गई। शास्त्र मे पुत्र को निधि माना गया है तदनुसार दोनो परिवार की ओर से आपका "रतनचन्द" नाम रखा गया। बाल्यकाल के पश्चात् शैक्षणिक अभ्यास किया, फिर पैतृक व्यवसाय व्यापार को सभाला। आपकी व्यवहारिक-व्यापारिक कुशलता से प्रसन्न होकर धवा (जोधपुर) निवासी सेठ जसराज भूरट ने अपनी विनयगुण शोला पुत्री 'वीराबाई' का आपके साथ विवाह कर दिया।

एकदा सहसा आपके अन्तर्मन मे पवित्र प्रेरणा का उदय हुआ कि—"आत्मन्! ससार कीचड मे मत उलझ! आत्म-साधना (सयम) की राह पकड इसी मे तेरा हित रहा हुआ है।"

बस, अन्तर हृदय से जाग्रत हुई भावना के अनुसार आप अपने भरे-पूरे परिवार को छोडकर मेवाडभूषण गुरुदेव श्री प्रतापमल जी महाराज जैनागम तत्त्व विशारद प्रवर्तक श्री होरालाल जो महाराज के चरणो मे कलकत्ता जा पहुँचे। आपकी सयम लेने की भावना को बलवान बनाने का सर्वश्रेय प्रवर्तिनी विदुषी महासती श्री बालकु वर जो महाराज को है। गुरुदेव की सेवा मे रहकर प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त किया, तत्पश्चात् झरिया (बिहार) नगर मे प० रत्न श्री जयतिलाल जी महाराज की उपस्थिति मे ता० ६-५-५४ को जैन भागवती दीक्षा स्वीकार कर मेवाडभूषण श्री प्रतापमल जी महाराज का शिष्यत्व प्राप्त किया। आपकी धर्मपत्नी को भी दीक्षा लिये लगभग २० वर्ष हो गये।

दीक्षा के पश्चात् आप ज्ञानोपार्जन मे जुट गये, अपने गुरुदेव के निकट रहकर सस्कृत-प्राकृत-हिन्दी-इंग्लिश भाषा का अच्छा अभ्यास किया। आपने सस्कृत मे विशारद, हिन्दी मे साहित्यरत्न तथा पाथर्डीबोर्ड की जैन सिद्धान्त आचार्य प्रथम खण्ड की परीक्षाएँ दी। इस प्रकार अध्ययन-अध्यापन से आपकी वक्तृत्व शैली मे, शास्त्रीय भावो के साथ प्रभावोत्पादक रोचकता का आविर्भाव हुआ। शनै -शनै लेखन कार्य मे भी गति बढने लगी। आप समाज के बीच एक अच्छे लेखक, कथाकार, सम्पादक तथा प्रवचनकार के रूप मे उभरे। आपके सयमी जीवन को उन्नत बनाने का सम्पूर्ण श्रेय श्रद्धेय गुरुदेव मेवाड भूषण श्री प्रतापमल जी महाराज एव महाराष्ट्र तपोकेशरी गुरु-गणेश ज्ञान प्रदीप श्री बसन्तलाल जी महाराज को है।

आपकी सयम निष्ठता, सहज सरलता, विवेकशीलता से प्रभावित होकर जोधपुर (राज०) श्रावक सघ ने "मरुधरा भूषण" तथा साहित्य क्षेत्र मे बढती प्रगति को देखकर चित्तौडगढ श्रावक सघ ने "साहित्य मनीषी" पदवी से आपको अलकृत किया। आपने अब तक लगभग ३०-३५ पुस्तकों का लेखन, सम्पादन का कार्य कर दिया है। आगे भी गतिशील हैं।

आप बडे ही अनुशासनप्रिय साधक हैं, शास्त्र-थोकडो के चिंतन-मनन तथा साहित्य सर्जना मे अपना समय लगाते रहते है। आपके जीवन मे कठोरता के साथ माधुर्यता का सामजस्य इतना अच्छा है जिसके कारण छोटे मुनि शिष्य, गुरु भ्राता आपके सहवास को विशेष पसन्द करते है। आप महाराष्ट्र तपोकेशरी श्री बसन्तलाल जी महाराज के लघु गुरु भ्राता हैं।

इस वर्ष आपको कर्नाटक केशरी खद्दरधारी श्री गणेशलाल जी महाराज का जीवन-दर्शन लिखने की प्रेरणा तपस्वीराज से मिली, तथा यत्किंचित् जो आलेखन आपसे बना, उसके लिये अपने आपको महान् सौभाग्य शाली मानते है।

—विजय मुनि 'विकास'

□□

अनुक्रमणिका

१ जीवन-दर्शन खण्ड १—७२

२. सस्मरण खण्ड ७३—११८

३. इतिहास और परम्परा खण्ड ११९—१३१

कोटा सम्प्रदाय की सतियाँ १३३—१४४

४ शुभकामना-श्रद्धार्चना १४५—१७६

□□

खण्ड १

तपःपूत सद्गुरुनाथ कर्णाटक केसरी

गुरुदेव श्री गणेशमल जी म०

□□

खण्ड १

तप-पूत सद्गुरुनाथ कर्णाटक केसरी

गुरुदेव श्री गणेशमल जी म०

अहिंसा प्रतिष्ठाया तत् सन्निधौ वैरत्याग :–

योगसूत्र के इस सिद्धान्त को तपस्वीराज गुरु-गणेश के जीवन मे चरितार्थ होता देखा गया है।

गुरु गणेश के आध्यात्मिक प्रतिनिधि गुरु गणेश-ज्ञान प्रदीप तपोकेशरी, प्रेरणा केन्द्र श्री बसन्तीलाल जी महाराज

पूज्य बाबा जी के स्वर्गवास के बाद का चित्र
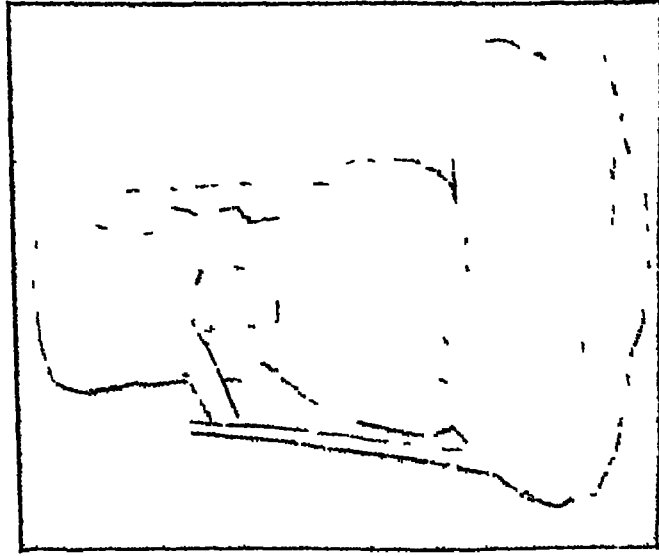
बुझ गई ज्योति, किसी ने यों कहा,
हस, बन्धन मुक्त सचमुच हो गया

दीन-अपग-असहाय जीवो के प्रति तपस्वीराज
की करुणा का मूर्तिमान चित्र
चौसाला (जि० बीड) की श्री महावीर जैन गोशाला

जीवन का उषाकाल

संत संस्कृति और ससार

धर्मदर्शन-विज्ञान एव सस्कृति के विकासोत्थान मे त्यागी तपस्वी-सत-जनो का महत्त्वपूर्ण योगदान आज से नही अपितु सदियो से रहा है, जिसे कभी नकारा नही जा सकता। विशाल आगम साहित्य तथा वेद-उपनिषद्-पुराण सभी इस बात के साक्षी रहे है। सतो के हृदयस्पर्शी सदेशो के माध्यम से जिस सभ्यता ने सत्य-शिव का पावन पथ प्रस्तुत किया उसने सचमुच दिग्भ्रात मानव जगत् को जागृत ही नही अपितु सम्यक् रूप से उन्हे जीवन जीने की राह दिखाई। वही सभ्यता भविष्य मे आर्य सस्कृति के उज्ज्वल रूप मे प्रगट हुई। सुसस्कारो का धरातल जब अधिकाधिक परिष्कृत होता गया तब मानव जगत् मे कल्याण का मार्ग तो प्रशस्त हुआ ही, साथ ही पशु जगत् भी उस आर्य सस्कृति के प्रभाव से अप्रभावित न रह सका, अपितु सुसस्कारो की ओर आकृष्ट होता चला गया।

जो समाज अपने पूर्वजो के यशस्वी-तेजस्वी वृत्तान्तो से, उनके बहु-आयामी व्यक्तित्व एव कर्तृत्व से अपरिचित रहा है, वह समाज सुनीति एव रीति के शिखर पर कैसे पहुँच पायेगा? विद्वानो के शब्दो मे—महत् पुरुषो का ज्योतिर्मय जीवन ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप वह मजुल आचार मजूषा है, जिसमे अणुव्रत-महाव्रत आदि विविध आत्मधन से परिपूरित इतिहास की अनुपम धरोहर मानी जाय तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। वस्तुत भव्यात्माओ को आत्मानन्द की अनुपम उपलब्धि इससे होती है।

सत-चिन्तन और विज्ञान

इस अणुयुग मे प्रतिपल नये-नये वैज्ञानिक आविष्कारो का प्रादुर्भाव होता जा रहा है। अनुसन्धान प्रक्रिया मे प्रत्येक देश प्रतिस्पर्धा मे जुटा हुआ है। भौतिक विकास तीव्रगति से चरम सीमा को छूता हुआ सा प्रतिभासित हो रहा है। अनन्त आभामण्डल मे रात-दिन उपग्रहो की दौडा-दौड लगी हुई है। विज्ञजनो का अभिमत है कि—इन आविष्कारो के गर्भ मे भी सतो के गूढ उपदेशो की ही देन है। भगवान महावीर का युग आत्म-विकास का

युग था। उस युग मे आत्मिक ऊर्जा शक्ति का सम्पूर्ण विकास हो चुका था। उस जमाने मे भगवान महावीर स्वामी (जो सर्वज्ञाता सर्वदर्शी थे) ने अतीत-अनागत एव वर्तमानकालीन अनन्त द्रव्यो का स्पष्टत रहस्योद्घाटन ही नही किया अपितु गौतम गणधर जैसे अगणित मुमुक्षुओ की शकाओ का निराकरण कर दिया। उस युग की अभिव्यक्ति बनाम आध्यात्मिक ज्ञान को आज का जिज्ञासु कल्याण के रूप मे तो भौतिकवादी जड विकास मे लगा रहा है। "जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि।" यही बात दशवैकालिक की प्रथम गाथा मे घटित हो रही है—

धम्मो मगलमुक्किट्ठ अहिंसा सजमो तवो।
देवा वि त नमसति जस्स धम्मे सया मणो॥

उक्त आगमोक्त गाथा मोक्ष मार्ग का सागोपाग निरूपण प्रस्तुत कर रही है, तो भौतिक दृष्टि से स्वर्ण रसायन विज्ञान मे यह गाथा अपने आप मे बहुत कुछ यथार्थता लिए हुए है। आगम-साहित्य भण्डार मे ऐसे अनेको पाठ, गाथाएँ है, जिनमे आध्यात्मिक तथा भौतिक विज्ञान दोनो ही समन्वित रूप से समाहित है।

'जीओ और जीने दो' का सदेश देने वाली श्रमण सस्कृति ने अपावन को पावन, अनाचारी को सदाचारी, पलायनवादी को प्रगतिवादी तथा शोषणवादी को समर्पणवादी बनने का दिग्दर्शन प्रस्तुत किया है। रावण मे राम बनने की योग्यता का निरूपण करके उन नास्तिक विचारको को आस्तिक भाव मे स्थिर किया है। इतना ही नही प्रत्येक भव्यात्माओ मे परमात्मा बनने की अनन्त शक्ति निहित है, यह स्पष्ट किया। साथ ही यह भी कहा—जिसमे किसी ईश्वरीय शक्ति का कुछ भी हस्तक्षेप नही है। सभी अपने-अपने भाग्य के निर्माणकर्ता होते है। उपरोक्त तथ्यो और उद्गारो से परिपूर्ण श्रमण सस्कृति का अमर पथ आज भी जन-जन ही नही जीव-मात्र के कल्याण की भावना लिए बैठा है।

मध्यकाल कुछ ऐसा व्यतीत हुआ है—जिसमे समाज केवल द्रष्टा बनकर जीता रहा। साधनाभाव के कारण कई प्रतिभासम्पन्न सतो-मुनियो का उज्ज्वल जीवन वृत्त व्यवस्थित रूप से न लिपिबद्ध हो सका और न सकलन ही । वस्तुत साहित्य जगत् का दुर्भाग्य ही रहा कि—अगणित महान्-महान् सत-महर्षियो की गरिमामय जीवनियाँ रहस्यमय ही रह गई क्योकि वे लिपिबद्ध न हो पाई, इसीलिए जैसा चाहते हैं वैसा विस्तृत जानकारी युक्त इतिहास नही मिल रहा है।

इस अणु युग मे लेखन कार्य ने बहुत जोर पकडा है। इस लेखन-प्रकाशन दौड मे जैन विद्वान् लेखक वृन्द भी पीछे नही रहे। साधनाभाव युग मे भी सस्कृत-प्राकृत साहित्य कोष के विकास मे जैन श्रमणो का अपूर्व योगदान रहा है। आज साधनो की सहज उपलब्धि है, वस्तुत वर्तमान युग साहित्य भण्डार से उत्तरोत्तर विकासशील दृष्टिगोचर हो रहा है। गद्य-पद्य-नाटक-एकाकी-उपन्यास-कहानी-सस्मरण-काव्यो के समान जीवन-वृत्त भी साहित्य जगत् की मूल्यवान निधि मानी जाती है, जिसका पठन-मनन करते हुए असख्य पथिको ने अपने भावी जीवन का सुन्दरतम निर्माण किया है। जैसा कि—

"महापुरुषो को पढहु चरित्र।
ताते होई जीवन सु पवित्र ॥"

(—गोस्वामी तुलसीदास)

प्रखर प्रतिभावान, तप पूत, वहु आयामी व्यक्तित्व के आगार, शुद्ध खद्दर तथा मुँहपत्ति प्रचारक, स्पष्ट अभिभाषक, मिथ्यात्व अवरोधक, समकित गुणपोषक, जिनशासन प्रभावक, प्रात स्मरणीय, कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेशमलजी महाराज का ज्योतिर्मय जीवन निम्न तेजस्वी शृखला के अन्तर्गत स्पष्ट रूप से आ रहा है। दिन हो कि रात, सोते-जागते, उठते-बैठते, वन मे-जन मे, गाँव हो कि शहर सभी जगह जन सुधार का अमर उद्घोष तथा वही कार्य प्रणाली थी सद्गुरुदेव की।

गौरव मयी मातृभूमि

मरुधरा (मारवाड) की पावन धरा का मस्तक भारतवर्ष मे सदैव उन्नत रहा है, जिसका गौरवमयी मुकुट अपने आप मे तेजस्वी इतिहास की कडियो से जुडा हुआ है। उस माँ का शौर्यपूर्ण आचल आज भी देदीप्यमान है, जिसके कण-कण मे उन धर्मवीर-कर्मवीर एव वीरागनाओ की यशोगाथा प्रतिध्वनित हो रही है। सम्य-समय पर मरुधरा माँ ने ऐसे वीर-पुत्रो को जन्म दिया है, जो धर्म-दर्शन तथा सस्कृति की रक्षा के लिए अमर हो गये किन्तु मातृभूमि तथा आन-बान-शान पर बिल्कुल आँच नही आने दी।

अनचाहे इस धरा पर सकटरूपी कटक मडराते रहे। कभी विदेशी दस्युओ की ओर से तो कभी प्रकृति के प्रतिकूल प्रकोप (आधी-तूफान, अतिवृष्टि-अनावृष्टि) से तथापि यह देखने को मिलेगा कि उन सपूतो का मनोवल कभी गिरा नही और न कभी हतप्रभ ही हुआ। निडरता की मशाल लिये—"चरैवेति-चरैवेति" इस भाव को चरितार्थ कर कदम-दर-कदम

वढना ही उनका लक्ष्य रहा है। लोमहर्षक बाधाओ से वे कभी घबराये नही और न ही कभी अत्याचारी, अनाचारी, भ्रष्टाचारियो का प्रतिकार करने मे हिचकिचाये।

शीलरूपी किरीट से जिसका मस्तक शोभित है, दानरूपी कगन से जिसके युगल कर उदारता लिये हुए है, तपरूप मुक्ताहार से जिसका वक्ष-स्थल दीप्तिमान है, "सादा जोवन उच्च विचार" रूप विविध आभरणो से सुसाज्जित सुमडित मरुधरा माँ का आनन अहिसा, मैत्री, सहबधुत्व भाव का मूक सदेश दे रहा है।

'गायति देवा किल गीतकानि।' मोदवर्धनी मरुधरा के अक (गोद) मे मानव, देव, दानव, कवि, गायक, लेखक, योगी, भोगी सभी जन्म लेने की अपेक्षा रखें या इस पवित्र माँ की मुग्ध कठ से स्तुति करे तो क्या बडी बात है?

मरुधर देश मे जैन तथा वैदिक विचारधारा का समकालीन विकास विस्तार होता रहा है। स्नेह तथा सहानुभूति इस माँ की दो आँखे है, फल-स्वरूप युगो-युगो से धर्म-दर्शन की यह क्रीडास्थली रही है। यही कारण है कि आज भी इस पावन वसुन्धरा पर म्लेच्छ विचारधारा बहुत कम है। छोटे-छोटे गाँव, शहर के आबाल वृद्ध सभी के मुखारविन्द से "अहिसा परमो-धर्म" की सुमधुर स्वरलहरी मे जय गुजार सुन पायेगे। भगवती दया की अर्चा-अभ्यर्थना झोपडी से महल पर्यंत आज भी हो रही है। "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।" सचमुच ही जननी तथा जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढकर है।

उच्च वश के उच्च नक्षत्र

ओस वश (ओसवाल) जाति की जन्मदात्री मरुधरा माँ की कमनीय कूँख रही है। ओसवाल जाति के सुस्थिरीकरण मे काचन-मणि-सा मार्ग-दर्शन दिया जैनाचार्य प्रवर ने, जिनका स्तुत्य सहयोग बडा ही कल्याणदायी रहा। फलस्वरूप तत्कालीन जन समाज का सुसस्कारो-सुविचारो के माध्यम से सुन्दर परिष्कार किया गया, आचार-विचार का समन्वित रूप जिनके जीवन मे साकार हो उठा। वही आस्तिक समाज आगे चलकर जिन धर्मा-नुयायी बना। श्रेष्ठ आचार-विचार के परिपालन मे ओसवाल जाति का विशेष योगदान रहा तभी तो सारे भारत मे 'महाजन' इस विशेषण से विख्यात हुई। आज लाखो की सख्या मे ओसवाल जाति भारत के सभी प्रान्तो मे न्यूनाधिक सख्या मे मिलेगी। व्यवस्था की दृष्टि से इस जाति को

१४४४ गोत्रो मे विभक्त कर दिया गया है, ताकि आने वाली विकृतियो से समाज बच सके तथा अपना शुद्ध रूप कायम रख सके।

'बिलाडा' (मारवाड) निवासी ओसवशीय ललवानी गोत्रीय श्रेष्ठी श्रीमान् पूनमचद जी अपनी धर्मपत्नी धर्मपरायणा श्रीमती धूलीवाई के साथ सुखद क्षणो मे दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर रहे थे। साधारण व्यापार-व्यवसाय, अल्प लेन-देन मे भी वे असीम सुख का अनुभव करते थे। आज के समान न उनके मन-मस्तिष्क मे महत्वाकाक्षा थी और न लोभ का भूत ही उनके सिर पर सवार था। कहा भी है—

"श्रीमान् को ?" "यस्यास्ति तोष।"—जिसका मन सतोष रूपी धन से आप्लावित है, वही श्रीमत कहलाता है।

द्रव्य-धन की अपेक्षा पूनमचदजी को भाग्य ने भाव-धन पर्याप्त रूप से प्रदान किया था, देव-गुरु-धर्माराधना, सामायिक, पौषध, उपवास, जगम-तीर्थोपासना, सुपात्रदान आदि शुभ-शुद्ध कार्यो मे पति-पत्नी दोनो की अनुकरणीय अभिरुचि थी। "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।" तदनुसार यदा-कदा भावी बिलाडा नगर मे पचमहाव्रतधारी साधुमार्गीय मुनि-महासति वृन्द का शुभागमन हो जाया करता था, मानो पूनमचदजी तथा धूलीदेवी की अन्तरेच्छा उन सत-सतियो को उस ओर खीच लाती थी। आगम वाड्मय की अभिव्यक्ति है—"जाति-सम्पन्न (मातृ पक्ष) कुल-सम्पन्न (पितृ पक्ष) अर्थात् दोनो पक्ष पवित्र परम्परा के प्रतीक रहे है।" यदि पति-पत्नी दोनो विचार-आचारवान हो, प्रकृति की दृष्टि से सौम्य-सरल-सौजन्यता की प्रतिमूर्ति हो तो उन सुसस्कारी, सदाचारी पति-पत्नी को सन्तान भी सुशील, विनय-विवेकवान्, मातृ-पितृ-भक्त, शुभ विचारक, दयालु, जनोद्धारक, स्व-पर पीडा की परख करने वाली होती है, अर्थात् पीडा को मिटाने का प्रयास करने वाली। जैसा कि—

"As is the father, so is the son"

हिन्दी भाषा के एक कवि के स्वर मे—

जैसे होगे सघन विटप—
तो छाया भी वैसी होगी।
जैसे होगे मात-पिता,
तो सन्तति भी वैसी होगी॥

पुण्य धरा पर पुण्यात्मा

एकदा सौभाग्यशालिनी माता धूली के हृदयागण मे शुभ भावना का

उपवन लहराया, उनके मानस मे विचार उर्मियाँ उठी—'मै अधिकाधिक धर्माराधना करूँ, सत-साध्वी वृन्द के पावन दर्शन करके जीवन शुद्ध करूँ, अपने हाथो से पुण्य सुकृत करूँ, दीन-दु खी-दर्दी जनो की सेवा करूँ, भूले-भटके राहियो को सम्यक् पथ के पथिक बनाऊँ, मैंने जो-जो नियम स्वीकारे है उनका दृढता से पालन करूँ तभी मेरा जीवन सफल होगा।' उक्त विचार गर्भस्थ आत्मा की उत्तम विशेषताओ का सकेत है। एक अनुभवी की भाषा मे—"पूत के पग पालने मे क्या पेट मे दृष्टिगोचर होते है।" मिल्टन के शब्दो मे—

"The childhood shows the man
As the morning shows the day"

अर्थात्—सन्तान के अच्छे या बुरे लक्षण गर्भ मे ही प्रगट हो जाते है।

शुभ जन्म तथा नाम

तदनुसार वि स १९३६ कार्तिक शुक्ला ६ बुधवार की शुभ रात्रि के चतुर्थ प्रहर मे माता धूली की पावन कुक्षी (पुण्य धरा पर) से एक तेजस्वी पुण्यात्मा का जन्म हुआ। माँ की स्वास्थ्य स्फूर्ति मे विशेष निखार आता गया। धीरे-धीरे सभी कार्य-कलापो का श्रीगणेश (मगल) होता गया। फलस्वरूप नवजात शिशु का 'गणेशमल' नाम रखा। सकल ललवानी परिवार मे तो हर्ष उमड ही रहा था, साथ ही सारे नागरिक भी प्रसन्नचित्त थे। मगल गीतो के साथ गुड बाटा गया।

लाभ मे महालाभ

नवजात शिशु गणेश का अत्यन्त लाड-प्यार, शिष्टाचार युक्त पालन होने लगा। शिशु के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी पिता की अपेक्षा माँ पर अधिक रही है। माँ की भोजन, चर्या यदि व्यवस्थित न हो तो बालक के स्वास्थ्य मे गडबडी जरूर हो जायेगी, इसीलिये सुशील माँ को पथ्यापथ्य तथा भक्ष्याभक्ष्य का विवेक रखना अत्यन्त आवश्यक है। माँ धूलीदेवी हर प्रकार से चौकन्नी होकर अपने नवजात पुत्र की परिपालना करने लगी। समय के साथ गणेश भी वृद्धि पाने लगा।

माँ धूली ने अपने समझदार पुत्र को ज्ञानार्थ पाठशाला मे नियुक्त कर दिया, क्योकि अब वह लगभग पाँच वर्ष का हो चुका था। उन्ही दिनो गणेश मल की माता ने द्वितीय पुत्र को जन्म दिया। माँ-बाप की शोभा (प्रतिष्ठा) मे अभिवृद्धि हुई। अत नव शिशु का 'शोभाचन्द्र' नाम रखा गया। काचन-मणि सा सुन्दर मेल गणेश तथा शोभाचन्द्र से हुआ। अब उस परिवार मे क्या कमी? जहाँ (मगलसूचक) गणेश तथा (प्रतिष्ठा-स्वरूप) शोभाचन्द्र युगल भ्राता की रमणीय जोडी का सगम हुआ है।

"लाभ मे महालाभ।" तदनुसार गणेशमल को भाई की प्राप्ति हुई। पुण्य प्रभाव कुछ ऐसा ही मिला कि—गणेशमल शैशवकाल से ही प्रज्ञाशील था। बुद्धिमान छात्र के लिए अध्यापक को अधिक परिश्रम किंवा माथापच्ची करने की आवश्यकता नही रहती। हमारे गणेशमल भी ऐसे ही तेलिया बुद्धि के भण्डार थे। वे पढते कम गुणते अधिक, रटते कम रमाते अधिक। पढने की अनूठी अभिरुचि ने उन्हे विनय-विवेकवान बना दिया। विनय-विवेकशीलता से कौन अध्यापक प्रसन्न नही होगा? यही कारण था गणेशमल पर स्वय अध्यापक के प्रसन्न रहने का, साथ ही दिल खोलकर वे अपना गूढ अनुभव सरल करके समझाते। पढाने मे अध्यापक को भी आनन्द की अनुभूति होती। जैसे—सुन्दर (उर्वरा) भूमि पर बीज बोने मे स्वय कृषक आनन्दित होता है, ठीक वैसे ही विनयी को ज्ञान देने मे गुरु। आगम की भाषा मे—"सपइ विणियस्स", अर्थात् विनयवान के भाग्य मे सम्पत्ति। कुछ ही वर्षों मे गणेश मल विद्यार्थी का ज्ञान-कोष वृद्धि पाने लगा। गणित, सामान्य-सामाजिक ज्ञान तथा महाजनी लिखा-पढी मे आशातीत सफलता प्राप्त करके अपने पिता श्री पूनमचन्द जी व माता धूलीदेवी को सन्तुष्ट किया। बालक गणेशमल की उत्तरोत्तर प्रगति देखकर माता-पिता ने सोच लिया—"पुण्यात्मा पुत्र ने महालाभ प्राप्त किया है। घर की पूरी-पूरी जवाबदारी सम्भालने मे थोडे ही दिनो मे यह सक्षम हो जायेगा। यह समर्थ होगा तो हमे धर्माराधना करने मे आनन्द आयेगा।"

आघात पर आघात

"कालस्य गहना गति।"—काल की गति बडी विचित्र होती है, इसके गहन गर्भ मे क्या-क्या छिपा हुआ है यह छद्मस्थ कैसे जान पायेंगे? गणेशमल सोलहवें वर्ष मे प्रवेश पाये ही थे कि अचानक माँ धूली का पार्थिव शरीर काल के विकराल गाल मे समा गया, अर्थात् अल्प समय मे ही नश्वर देह का माँ धूली ने परित्याग कर दिया एव सद्भाव के कारण उसने सद्गति प्राप्त की। माँ धूली अपने प्राण प्यारे युगल पुत्रो को छोडकर महायात्रा की ओर चल पडी। मातृ-वियोग सन्तान के लिए कितना दर्दनाक होता है, यह भुक्तभोगी ही जान पायेगा। माँ का ममता भरा मन दूर हो जाने अर्थात् बिछुड जाने से दोनो भाइयो को असह्य व्यथा हुई। नित्य प्रति विलापात किये बिना नही रहते मानो सर्वस्व खो गया हो। कई दिनो तक माँ की स्नेहिल स्मृतियाँ उनके दिमाग मे तैरती रही। प्यार भरा पालन-पोषण रह-रहकर उन्हे याद आता। कभी-कभी स्वप्न मे वे दोनो देखते—माँ धूली प्यार से मस्तक पर हाथ फेरती हुई स्मित मुद्रा मे आशीर्वाद दे रही

उपवन लहराया, उनके मानस मे विचार उर्मियाँ उठी—'मै अधिकाधिक धर्माराधना करूँ, सत-साध्वी वृन्द के पावन दर्शन करके जीवन शुद्ध करूँ, अपने हाथो से पुण्य सुकृत करूँ, दीन-दुखी-दर्दी जनो की सेवा करूँ, भूले-भटके राहियो को सम्यक् पथ के पथिक बनाऊँ, मैंने जो-जो नियम स्वीकारे है उनका दृढता से पालन करूँ तभी मेरा जीवन सफल होगा।' उक्त विचार गर्भस्थ आत्मा की उत्तम विशेषताओ का सकेत है। एक अनुभवी की भाषा मे—"पूत के पग पालने में क्या पेट मे दृष्टिगोचर होते हैं।" मिल्टन के शब्दो मे—

"The childhood shows the man
As the morning shows the day"

अर्थात्—सन्तान के अच्छे या बुरे लक्षण गर्भ मे ही प्रगट हो जाते है।

शुभ जन्म तथा नाम

तदनुसार वि स १९३६ कार्तिक शुक्ला ६ बुधवार की शुभ रात्रि के चतुर्थ प्रहर मे माता धूली की पावन कुक्षी (पुण्य धरा पर) से एक तेजस्वी पुण्यात्मा का जन्म हुआ। माँ की स्वास्थ्य स्फूर्ति मे विशेष निखार आता गया। धीरे-धीरे सभी कार्य-कलापो का श्रीगणेश (मगल) होता गया। फल-स्वरूप नवजात शिशु का 'गणेशमल' नाम रखा। सकल ललवानो परिवार मे तो हर्ष उमड ही रहा था, साथ हो सारे नागरिक भी प्रसन्नचित्त थे। मगल गीतो के साथ गुड बाटा गया।

लाभ मे महालाभ

नवजात शिशु गणेश का अत्यन्त लाड-प्यार, शिष्टाचार युक्त पालन होने लगा। शिशु के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी पिता की अपेक्षा माँ पर अधिक रही है। माँ की भोजन, चर्या यदि व्यवस्थित न हो तो बालक के स्वास्थ्य मे गडबडी जरूर हो जायेगी, इसीलिगे सुशील माँ को पथ्यापथ्य तथा भक्ष्याभक्ष्य का विवेक रखना अत्यन्त आवश्यक है। माँ धूलीदेवी हर प्रकार से चौकन्नी होकर अपने नवजात पुत्र की परिपालना करने लगी। समय के साथ गणेश भी वृद्धि पाने लगा।

माँ धूली ने अपने समझदार पुत्र को ज्ञानार्थ पाठशाला मे नियुक्त कर दिया, क्योकि अब वह लगभग पाँच वर्ष का हो चुका था। उन्ही दिनो गणेश मल की माता ने द्वितीय पुत्र को जन्म दिया। माँ-बाप की शोभा (प्रतिष्ठा) मे अभिवृद्धि हुई। अत नव शिशु का 'शोभाचन्द्र' नाम रखा गया। काचन-मणि सा सुन्दर मेल गणेश तथा शोभाचन्द्र से हुआ। अब उस परिवार मे क्या कमी? जहाँ (मगलसूचक) गणेश तथा (प्रतिष्ठा-स्वरूप) शोभाचन्द्र युगल भ्राता की रमणीय जोडी का सगम हुआ है।

"लाभ मे महालाभ।" तदनुसार गणेशमल को भाई की प्राप्ति हुई। पुण्य प्रभाव कुछ ऐसा ही मिला कि—गणेशमल शैशवकाल से ही प्रज्ञाशील था। बुद्धिमान छात्र के लिए अध्यापक को अधिक परिश्रम किंवा माथापच्ची करने की आवश्यकता नही रहती। हमारे गणेशमल भी ऐसे ही तेलिया बुद्धि के भण्डार थे। वे पढते कम गुणते अधिक, रटते कम रमाते अधिक। पढने की अनूठी अभिरुचि ने उन्हे विनय-विवेकवान बना दिया। विनय-विवेकशीलता से कौन अध्यापक प्रसन्न नही होगा ? यही कारण था गणेशमल पर स्वय अध्यापक के प्रसन्न रहने का, साथ ही दिल खोलकर वे अपना गूढ अनुभव सरल करके समझाते। पढाने मे अध्यापक को भी आनन्द की अनुभूति होती। जैसे—सुन्दर (उर्वरा) भूमि पर बीज बोने मे स्वय कृषक आनन्दित होता है, ठीक वैसे ही विनयी को ज्ञान देने मे गुरु। आगम की भाषा मे—"सपइ विणियस्स", अर्थात् विनयवान के भाग्य मे सम्पत्ति। कुछ ही वर्षों मे गणेश मल विद्यार्थी का ज्ञान-कोष वृद्धि पाने लगा। गणित, सामान्य-सामाजिक ज्ञान तथा महाजनी लिखा-पढी मे आशातीत सफलता प्राप्त करके अपने पिता श्री पूनमचन्द जी व माता धूलीदेवी को सन्तुष्ट किया। बालक गणेशमल की उत्तरोत्तर प्रगति देखकर माता-पिता ने सोच लिया—"पुण्यात्मा पुत्र ने महालाभ प्राप्त किया है। घर की पूरी-पूरी जवाबदारी सम्भालने मे थोडे ही दिनो मे यह सक्षम हो जायेगा। यह समर्थ होगा तो हमे धर्माराधना करने मे आनन्द आयेगा।"

आघात पर आघात

"कालस्य गहना गति।"—काल की गति बडी विचित्र होती है, इसके गहन गर्भ मे क्या-क्या छिपा हुआ है यह छद्मस्थ कैसे जान पायेंगे ? गणेशमल सोलहवें वर्ष मे प्रवेश पाये ही थे कि अचानक माँ धूली का पार्थिव शरीर काल के विकराल गाल मे समा गया, अर्थात् अल्प समय मे ही नश्वर देह का माँ धूली ने परित्याग कर दिया एव सद्भाव के कारण उसने सद्गति प्राप्त की। माँ धूली अपने प्राण प्यारे युगल पुत्रो को छोडकर महायात्रा की ओर चल पडी। मातृ-वियोग सन्तान के लिए कितना दर्दनाक होता है, यह भुक्तभोगी ही जान पायेगा। माँ का ममता भरा मन दूर हो जाने अर्थात् बिछुड जाने से दोनो भाइयो को असह्य व्यथा हुई। नित्य प्रति विलापात किये बिना नही रहते मानो सर्वस्व खो गया हो। कई दिनो तक माँ की स्नेहिल स्मृतियाँ उनके दिमाग मे तैरती रही। प्यार भरा पालन-पोषण रह-रहकर उन्हे याद आता। कभी-कभी स्वप्न मे वे दोनो देखते—माँ धूली प्यार से मस्तक पर हाथ फेरती हुई स्मित मुद्रा मे आशीर्वाद दे रही

है। कभी बोलती—"बेटा! अच्छी तरह से रहना।" इस प्रकार का आभास होता, जिसमे भी गणेशमल को अधिक अनुभव होता।

अपने पुत्रो की दयनीय दशा को देखकर पूनमचन्दजी को कई बार विचार आता—'बच्चो का व्यवस्थित रूप से लालन-पालन जैसा उनकी माँ कर सकती थी वैसा मुझसे नही हो पाता। अहा! कैसा विचित्र ससार तथा पुद्गलो का परिवर्तन है? कहाँ हम दोनों सोचते थे कि धर्म-आराधना-साधना मे लगेंगे और बीच मे ही जोडा खण्डित हो गया।' बच्चो के सिर पर हाथ फिराते हुए कभी-कभी वे बोल पडते—

"बेटा! ससार का स्वभाव बडा अनघड है, यहाँ सयोग मे वियोग तथा वियोग मे वेदना की भरमार है। कोई आता है, कोई जाता है। ससार एक सराय (धर्मशाला) का रूप है। कुछ दिन ठहरकर प्रस्थान करना ही पडता है। जब-तक ससार मे रहेगे तब-तक बराबर आना-जाना लगा रहेगा। लाभ-अलाभ, सुख-दु ख, सयोग-वियोग जगत् मे परिभ्रमण करने वाले जीव के साथ लगे ही रहते है। इसीलिए जितना पाप कृत्यो से बचा जाय उतना ही अच्छा है। कौन जाने किस समय यह पछी उड जाये? इससे पहले धर्म-करणी जितनी भी बने उतनी कर लेने मे सार है, यदि कुछ भी सुकृत नही किया तो पीछे पश्चात्ताप ही हाथ लगेगा। अच्छा करोगे तो निश्चय अच्छे बनोगे।" इस प्रकार अपने दोनो बच्चो को पूनमचन्दजी सद्शिक्षा द्वारा ससार का स्वरूप समझाते किन्तु स्वय के भी सयम (दीक्षा) का योग नही था सो नही ले पाये और पत्नी के स्वर्गवास के तेईस दिन पश्चात् अर्थात् चौबीसवें दिन उन्हे दिल का दौरा हुआ, वे अपने बिलखते हुए दोनो बच्चो को छोडकर इस ससार से विदा हो गये। माँ के चले जाने पर गणेशमल तथा शोभाचन्द्र को एक सहारा था पिता पूनमचन्दजी का, पर वह भी क्रूर काल को नही भाया सो आखिर दोनो के बीच से पूनमचन्दजी को उठा ही लिया। पहले माता फिर पिता दोनो (२४) चौबीस दिन के भीतर चले गये। अब दोनो बच्चे अकेले ही रह गये। वैराग्य शतक की पहली गाथा मे कहा है—

ससारम्मि असारे नत्थि सुह वाहि वेअणापउरे।
जाणतो इह जीवा न कुणइ जिणदेसिय धम्म॥

इस असार ससार मे किंचित् मात्र भी सुख नही है। यह ससार व्याधि (शारीरिक दु ख), वेदनाओ (मानसिक दु खो) से परिपूर्ण भरा हुआ है। जगत् की स्थिति ऐसी जानता हुआ भी जीव जिनेश्वर प्ररूपित धर्म को नही करता है। बस, यही बात धर्मप्रिय सेठ पूनमचन्द जी के साथ घटी, वे सयम स्वीकार नही कर पाये।

अभी मातृ-वियोग की व्यथा से मुक्त हुए नही कि पिताश्री का देहावसान हो गया। मर्मान्तक वज्रपात ने दोनो भाइयो के दिल को तो चोट पहुँचाई ही साथ ही जिसने भी यह सुना-देखा उनके दिल दहल उठे। दोनो भाई आखिर बालक ही तो ठहरे। सर्वस्व आधार टूट जाता है उन पर क्या गुजरती है यह तो भुक्तभोगी ही जानता है।

कुछ लोगो ने दोनो भाइयो को समझाया भी—

"तुम दोनो यह न सोचें कि—हम निराधार है, हमे अपना ही समझकर जो भी आवश्यकता हो कहे। हम प्रयत्नपूर्वक उसे निपटायेंगे। हमे अपना ही समझें, नि सकोचपूर्वक हम तुम्हारा सहयोग करेंगे।" किन्तु आघात पर आघात लगने से गणेशमल तथा शोभाचन्द्र की आत्मा कराह उठी, उन्होने निश्चय कर लिया कि—अब यहाँ नही रहना। अन्य गाँव मे जाना ही उचित रहेगा। यहाँ रहेगे तो प्रतिपल माता-पिता की वह स्नेहिल याद हमे सताती रहेगी, उनकी वह दैनिक क्रिया हमारी आँखो के सामने तस्वीर के समान तैरती रहती है। याद रहे यह तो जरूरी है, किन्तु मोहवशात याद सतावे यह ठीक नही। इससे यही अच्छा है किसी अन्य प्रान्त मे चले जावें। इस प्रकार स्वय के विचारो से प्रेरित होकर दोनो भाइयो ने देश छोड दिया। इसीलिए कहा भी है—

धुन के पक्के कर्मठ मानव,
जिस पथ पर बढ जाते हैं।
एक बार तो रौरव को भी,
स्वर्ग बना दिखलाते हैं॥

"महान् मानव बनने वाले स्वच्छन्द वृत्ति से नही किन्तु स्वतन्त्रता से जीना चाहते है।" सयमपूर्वक जीने मे यदि सघर्षमय समय भी आ जाय तो वे पीछे न हटकर उसका डटकर सामना करते है, मगर घबराते नही। यही उनकी महान् विशेषता रही है। जैसा कहा है—

"मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दु:ख न च सुखं।" मनस्वी आत्मा सुख किंवा दु खद स्थिति के बीच द्रष्टा तथा भोक्ता रहकर भी समाधान की खोज का प्रयत्न करते है। स्वाभिमान उनका परम धन है। एक लक्ष्य, अटल पुरुषार्थ ही उनका सबल पाथेय है। कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रकृति स्वय तुष्टमान (प्रसन्न) होकर पुण्यात्माओ को महान् बनाने मे सहयोगी बनती है। वह धैर्य-वानो का आह्वान करती है। हुआ वैसा ही, दोनो भाई मातृभूमि को छोडकर

महाराष्ट्र प्रान्त के मनमाड नगर मे चले आये। दोनो भाइयो ने सोचा था—यहाँ अपन पढाई भी कर लेंगे साथ ही कुछ नौकरी करके जीवन बितायेंगे पर यह विचारधारा निष्ठुर काल को मजूर कहाँ हुई ? वृहत्कल्पभाष्य मे कहा है—"मच्चू अकलुण हिअओ, न हु दिसइ आवयतो वि।" मौत निर्दयी है, आती हुई दिखाई नही देती। आयुष्य कर्म खत्म होने पर मौत आकर घर दबोचती है। मौत ने अपना निशाना छोटे भाई शोभाचन्द्र पर डाला। बीमारी ने उसे घेर लिया। गणेशमल ने साहसपूर्वक उपचार कराया भी सही किन्तु कोई असर नही हुआ। भाई गणेशमल के देखते-देखते शोभाचन्द्र स्वर्ग की राह पर चल पडा। निराधार धरा पर गणेशमल को उसने एकाकी रहने को विवश कर दिया। वैसा होना ही था। निर्दय काल को राम-श्याम की मन-मोहन जोडी पर भयकर ईर्ष्या जगी, उससे दोनो भाइयो का भ्रातृ-वात्सल्य देखा नही गया अतएव वह लघु बान्धव को ले गया। गणेशमल के सामने मातृ-पितृ वियोग की अपेक्षा लघु बान्धव का वियोग कसौटी की नाजुक घडी थी। कसौटी के बीच से गुजरने वाला मनुष्य ही अपने जीवन मे चमक-दमक प्राप्त करता है। दिव्य ज्योति उसे ही मिलती है जो सघर्ष को साहस से पार करता है। जैसे-जैसे कष्ट सहिष्णु बनता है वैसे-वैसे जीवन की नीव (बुनियाद) सुदृढ बनती जाती है। जैसा कि—

"सचमुच वह महान् है जो सहन करता हुआ अपने आप मे सुदृढ बन कर रहा है।"

स्वाभिमान की सुरक्षा

"तप्त तप्त पुनरपि पुन काचन कान्तवर्णम्।" सोना जैसे-जैसे आग मे तपता है वैसे-वैसे उसमे निखार आता है। वही सोना ससारियो की दृष्टि मे ग्राह्य तथा विश्वसनीय माना गया है, बस वैसे ही सघर्ष रत मनुष्य अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर बढता रहता है तो स्वय सफलता-श्री उस पुण्यात्मा के चरणो मे लोटती है। सफलता-श्री उसका आदर-सम्मान करती है। एक के बाद एक आघात पर आघात लगने पर भी साहसिक पथिक विचलित तथा निराशावादी नही बनता अपितु विशेष परिश्रम के साथ सघर्षों से लोहा लेता है वही आगे जाकर जगत् तथा जन-जन वन्दनीय-आदरणीय बन जाता है। कहा भी है एक शायर ने—

"सुर्ख रू होता है इन्सा आफतें आने के बाद।
रग लाती है हिना पत्थर पर घिस जाने के बाद॥"

युवक हृदयी गणेशमल के पुरुषार्थ ने सम्यक् करवट ली, भाग्य के

प्रबल जोर के कारण ही जो परिचित थे वे तो सम्मान दे ही रहे थे किन्तु कुछ अपरिचित जन भी उन्हे गोद लेने को तैयार हो गये।

"हम तुम्हे अपने यहाँ रखना चाहते है, तुम हमारे यहाँ रह जाओ, हमारे यहाँ लाखो की पूँजी है, यहाँ धन बहुत है मगर इसकी रक्षा करने वाला कोई नही है, तुम मालिक बनकर मौज-मजे से खाओ-कमाओ तथा बडो की प्रतिष्ठा बढाओ।" कुछ लोगो ने इस प्रकार अपने विचार प्रगट किये।

गणेशमल ने कहा—"मुझे दो बाप नही करने और न ही ऐसा धन चाहिए। परिश्रम के बलबूते पर जो धन कमाऊँगा, उसी का मालिक बनूँगा, यथार्थ मे वही मेरा असली धन होगा। पैसे वाला बनना जरूरी नही, जरूरी है ईमानदारीपूर्वक व्यापार द्वारा जीवन यापन करना। सत्यता की रक्षा करना ही श्रेष्ठ है। यदि सत्य-ईमानदारी होगी तो धन का भण्डार स्वत प्रगट हो जायेगा।"

कुछ ही दिनो मे गणेशमल का मन मनमाड से उचट गया। मनमाड छोडकर बेलापुर चले आये। वहाँ एक श्रीमत के यहाँ नौकरी रूप मे लगन-पूर्वक रहने लगे। लगभग ढाई वर्ष तक नौकरी करते रहे, वफादारीयुक्त श्रीमत के यहाँ कार्य करते रहे। एक दिन जाली हुण्डी लिखने के लिये श्रेष्ठी ने गणेशमलजी से कहा तब निडरतापूर्वक उत्तर देते हुए उन्होने जबाव दिया कि—"सच्ची हुण्डी लिखवायेंगे तो लिख सकता हूँ, मेरे हाथ सत्य हकीकत लिख सकते हैं, असत्यता के लिये मैं अपने हाथ काले नही कर सकता हूँ। असत्य लिखना मेरे जीवन के लिये कलक होगा। ऐसे काले कारनामे मुझसे नही होगे।"

सेठ का मानस बदला हुआ था, बोले—

"यदि जाली हुण्डी नही बनायेंगे तो व्यापार कैसे चलेगा ?"

"भले व्यापार साधारण चले, मुझे मजूर है किन्तु पैसो के लिये नकली हुण्डी बनाना सरासर अन्याय है, विश्वासघात है, जो अपने ऊपर विश्वास करके आयेगा उसके साथ धोखा होगा। ऐसा कार्य न मैं आज करूँगा, न कल, भले ही मुझे दुकान छोडनी पडे। न्याय हेतु नौकरी को तिलाजलि दे सकता हूँ, मगर अन्यायपूर्वक जीवन जीना मैं कतई स्वीकार नही करूँगा।"

लालच मे आकर श्रीमत ने ढाई वर्ष का वेतन देने से इन्कार कर दिया।

"उदारस्य तृण वितम्।" उदारचेताओ की दृष्टि मे धन महत्त्वपूर्ण नही होता, उनकी नजरो मे ईमान-सत्य-शील-अहिसा का महत्त्व है। वे महत्त्वाकाक्षी न होकर आत्मगुणाकाक्षी होते है। चाँदी के टुकडो के पीछे उलझना नही चाहते, धन-सत्ता से नि स्पृह रहकर अध्यात्म-पथ पर चलना ही उन्हे इष्टकारी होता है।

गणेशमलजी ने वेतन अवरोधक श्रीमत से झगडा नही किया, बस सप्रेम विदाई ले ली, ऊपर से कहा—

"मुझे आपके पैसो की आवश्यकता नही है, न मुझे चाहिये। आपने इतने दिन घर-दूकान पर रख लिया यही बहुत बडी बात है।"

आपकी सत्यनिष्ठा से बेलापुर मे ही रहने वाला एक मुस्लिम भाई बहुत प्रभावित हुआ। उसने आपको व्यापार मे सहयोग दिया, स्वय के पुरुषार्थ तथा मुस्लिम बन्धु के सहयोग से अच्छे ढग से व्यापार चलने लगा। कुछ ही दिनो मे सारे नगर मे आपके व्यापार कार्य की प्रशसा होने लगी।

व्यसन मुक्त तथा युक्त, दोनो प्रकार से जीवन व्यतीत किया जाता है पर दोनो मे जमीन-आसमान का अन्तर है। मनुष्य जैसा बनना चाहता है वैसा बन सकता है, किन्तु व्यसनी जीवन अपयश अर्थात् दुर्गन्ध लेकर जीता है, अव्यसनी यशपूर्वक। गणेशमलजी ने अपने को व्यसनो से बिल्कुल परे रखा, इसीलिये वे गृहस्थावास मे ही प्रसिद्धि पा गये। स्वाभिमानपूर्वक जीने मे श्री गणेशमल जी को अत्यन्त आनन्द की अनुभूति होती। स्वाभिमान को अचल रखने के लिये ही उन्होने इतना परिश्रम किया।

सगाई-प्रस्ताव को वैराग्य ने हराया

श्री गणेशमल जी अब तक बहुत कुछ सभल चुके थे, नैतिक जीवन की सौरभ आस-पास के क्षेत्र मे अच्छी तरह से फैली। सुहानी महक से प्रभावित होकर 'नगर शूल' गाँव के मान्यवर श्रेष्ठी श्रीमान् खेमचन्दजी बाफना ने अपनी पुत्री का विवाह आपके साथ करने का निश्चय किया। विवाह का प्रस्ताव लेकर वे आपके पास आये। अपनी पुत्री के साथ विवाह करने का आपसे अनुरोध किया तब आपने एकान्त मे बैठकर विचार किया कि—

विवाह के बँधन मे बधना अच्छा या गृहत्यागी बनना? "पूर्वजन्म के शुभ सस्कारो से शुभ विचारो की दुनिया खडी होती है।" बस, वैसे ही उन्होने सोचा—"नेहपासा भयकरा।" भगवान् महावीर की वैराग्यमयी वाणी मे—स्नेह-बन्धन भयकर है। अनेको जीव अहर्निश शादी-विवाह के स्वप्न देखा करते हैं। मन-ही-मन सकल्प-विकल्पो की बालु भित्ति तैयार

करते तथा बिगाडते रहते है। भोगासक्त नर-नारियो की दयनीय दशा को देखकर ज्ञानियो को अवश्य तरस आती है। क्योकि कहा है—"भोगी भमइ ससारे।" भोगान्ध मानव ससाररूप महाटवी मे चक्रवत् घूमता रहता है, परिभ्रमण करता रहता है, और अभोगी भोग को रोग का मूल कारण मानता हुआ कर्मबन्ध से निर्लेप बनने का प्रयत्न करता है, अर्थात् प्रतिपल उसकी कामना विषय वासनाओ से परे रहने की बनती है। आत्म-हितैषी भोगासक्त नही बनता है। तभी तो कहा है—"अभोगी विप्पमुच्चई।" निरासक्त ही मोहमुक्त होता है।

चितन की मनोभूमि चलती रही—"शरीर नाशवान है, आयु रूप जीवन-नीर (जैसे फूटे घट से बूँद-बूँद खाली होती है वैसे ही) नष्ट होता जा रहा है, इन्द्रियो के क्षणिक सुखो मे भोगो की काली घटा जो महा दु खद है, मडराती रहती है। भोग मे रोग-शोक जुडा हुआ है, टूटने वाली आयु की डोर को पुन जोडना अशक्य-सा लगता है। मेरे माता-पिता, भाई तीनो देखते-देखते चले गये अर्थात् मौत के शिकार हो गये। उन्हे न मैं रोक पाया, न सगे-सम्बन्धी और न कुल के देवी-देवता। अन्तिम समय मे मुझे उन्होने शिक्षा दी बेटा—

"I was what you are, I am what you will be"

"पहले मैं तुम जैसा था अब तुम्हारी भविष्य मे वही दशा बनेगी जिसमे अर्थात्—जिस स्थिति मे आज मैं हूँ।" वे भी दीक्षा की भावना लेकर जी रहे थे, पर उनका सकल्प जो दीक्षा लेने का था, पूरा नही हो सका अर्थात् वे अपनी उत्तम भावना को साकार नही कर पाये।

यदि मैं भी भोग-विलास के दलदल मे उलझ गया तो धर्माराधना एव आत्मिक-साधना से वचित रह जाऊँगा। बन्धन से मुक्त रहना ही मेरे लिए श्रेयस्कर रहेगा। अत मुक्त रहकर प्रशस्त मन से विवाह न करके वैराग्य भाव मे आरूढ होकर सयम-पथ की सम्यक् आराधना ही करूँगा। उपरोक्त भावो मे दृढ होकर गणेशमलजी ने आगन्तुक महानुभाव बाफना जी से बेहिचक विनम्रतापूर्वक कह दिया—"आप अपनी पुत्री के विवाह के लिए अन्य वर की तलाश करें, मुझे भोग के जटिल जाल मे नही बँधना है, मैं तो सयम-पथ का पथिक बनूँगा, अर्थात् दीक्षा स्वीकार करूँगा। माता-पिता तथा भाई जब तीनो ही मेरे देखते-देखते चले गये, जिन्होने इतना घनिष्ठ प्यार दिया वे भी नही रह पाये मुझे अकेला ही छोड गये, न कोई देवी-देव बचा पाये न कोई इलाज-उपचार कारगर हुआ फिर मैं क्यो क्षणिक सुखो मे फसूँ।" श्री गणेशमलजी ने कहा।

"उदारस्य तृण वित्तम् ।" उदारचेताओ की दृष्टि मे धन महत्त्वपूर्ण नही होता, उनकी नजरो मे ईमान-सत्य-शील-अहिंसा का महत्त्व है। वे महत्त्वाकाक्षी न होकर आत्मगुणाकाक्षी होते है। चाँदी के टुकडो के पीछे उलझना नही चाहते, धन-सत्ता से नि स्पृह रहकर अध्यात्म-पथ पर चलना ही उन्हे इष्टकारी होता है।

गणेशमलजी ने वेतन अवरोधक श्रीमत से झगडा नही किया, बस सप्रेम विदाई ले ली, ऊपर से कहा—

"मुझे आपके पैसो की आवश्यकता नही है, न मुझे चाहिये। आपने इतने दिन घर-दूकान पर रख लिया यही बहुत बडी बात है।'

आपकी सत्यनिष्ठा से वेलापुर मे ही रहने वाला एक मुस्लिम भाई बहुत प्रभावित हुआ। उसने आपको व्यापार मे सहयोग दिया, स्वय के पुरुषार्थ तथा मुस्लिम बन्धु के सहयोग से अच्छे ढग से व्यापार चलने लगा। कुछ ही दिनो मे सारे नगर मे आपके व्यापार कार्य की प्रशसा होने लगी।

व्यसन मुक्त तथा युक्त, दोनो प्रकार से जीवन व्यतीत किया जाता है पर दोनो मे जमीन-आसमान का अन्तर है। मनुष्य जैसा बनना चाहता है वैसा बन सकता है, किन्तु व्यसनी जीवन अपयश अर्थात् दुर्गन्ध लेकर जीता है, अव्यसनी यशपूर्वक। गणेशमलजी ने अपने को व्यसनो से बिल्कुल परे रखा, इसीलिये वे गृहस्थावास मे ही प्रसिद्धि पा गये। स्वाभिमानपूर्वक जीने मे श्री गणेशमल जी को अत्यन्त आनन्द की अनुभूति होती। स्वाभिमान को अचल रखने के लिये ही उन्होने इतना परिश्रम किया।

सगाई-प्रस्ताव को वैराग्य ने हराया

श्री गणेशमल जी अब तक बहुत कुछ सभल चुके थे, नैतिक जीवन की सौरभ आस-पास के क्षेत्र मे अच्छी तरह से फैली। सुहानी महक से प्रभावित होकर 'नगर शूल' गाँव के मान्यवर श्रेष्ठी श्रीमान् खेमचन्दजी बाफना ने अपनी पुत्री का विवाह आपके साथ करने का निश्चय किया। विवाह का प्रस्ताव लेकर वे आपके पास आये। अपनी पुत्री के साथ विवाह करने का आपसे अनुरोध किया तब आपने एकान्त मे बैठकर विचार किया कि—

विवाह के बँधन मे बधना अच्छा या गृहत्यागी बनना ? "पूर्वजन्म के शुभ सस्कारो से शुभ विचारो की दुनिया खडी होती है।' बस, वैसे ही उन्होने सोचा—"नेहपासा भयकरा।" भगवान् महावीर की वैराग्यमयी वाणी मे—स्नेह-बन्धन भयकर है। अनेको जीव अहर्निश शादी-विवाह के स्वप्न देखा करते हैं। मन-ही-मन सकल्प-विकल्पो की बालु भित्ति तैयार

करते तथा बिगाडते रहते हैं। भोगासक्त नर-नारियो की दयनीय दशा को देखकर ज्ञानियो को अवश्य तरस आती है। क्योकि कहा है—"भोगी भमइ ससारे।" भोगान्ध मानव ससाररूप महाटवी मे चक्रवत् घूमता रहता है, परिभ्रमण करता रहता है, और अभोगी भोग को रोग का मूल कारण मानता हुआ कर्मबन्ध से निर्लेप बनने का प्रयत्न करता है, अर्थात् प्रतिपल उसकी कामना विषय वासनाओ से परे रहने की बनती है। आत्म-हितैषी भोगासक्त नही बनता है। तभी तो कहा है—"अभोगी विप्पमुच्चई।" निरासक्त ही मोहमुक्त होता है।

चिंतन की मनोभूमि चलती रही—"शरीर नाशवान है, आयु रूप जीवन-नीर (जैसे फूटे घट से बूँद-बूँद खाली होती है वैसे ही) नष्ट होता जा रहा है, इन्द्रियो के क्षणिक सुखो मे भोगो की काली घटा जो महा दु खद है, मडराती रहती है। भोग मे रोग-शोक जुडा हुआ है, टूटने वाली आयु की डोर को पुन जोडना अशक्य-सा लगता हैं। मेरे माता-पिता, भाई तीनो देखते-देखते चले गये अर्थात् मौत के शिकार हो गये। उन्हे न मै रोक पाया, न सगे-सम्बन्धी और न कुल के देवी-देवता। अन्तिम समय मे मुझे उन्होने शिक्षा दी बेटा—

"I was what you are, I am what you will be"

"पहले मैं तुम जैसा था अब तुम्हारी भविष्य मे वही दशा बनेगी जिसमे अर्थात्—जिस स्थिति मे आज मैं हूँ।" वे भी दीक्षा की भावना लेकर जी रहे थे, पर उनका सकल्प जो दीक्षा लेने का था, पूरा नही हो सका अर्थात् वे अपनी उत्तम भावना को साकार नही कर पाये।

यदि मैं भी भोग-विलास के दलदल मे उलझ गया तो धर्माराधना एव आत्मिक-साधना से वचित रह जाऊँगा। बन्धन से मुक्त रहना ही मेरे लिए श्रेयस्कर रहेगा। अत मुक्त रहकर प्रशस्त मन से विवाह न करके वैराग्य भाव मे आरुढ होकर सयम-पथ की सम्यक् आराधना ही करूँगा। उपरोक्त भावो मे दृढ होकर गणेशमलजी ने आगन्तुक महानुभाव बाफना जी से बेहिचक विनम्रतापूर्वक कह दिया—"आप अपनी पुत्री के विवाह के लिए अन्य वर की तलाश करें, मुझे भोग के जटिल जाल मे नही बँधना है, मैं तो सयम-पथ का पथिक बनूँगा, अर्थात् दीक्षा स्वीकार करूँगा। माता-पिता तथा भाई जब तीनो ही मेरे देखते-देखते चले गये, जिन्होने इतना घनिष्ठ प्यार दिया वे भी नही रह पाये मुझे अकेला ही छोड गये, न कोई देवी-देव बचा पाये न कोई इलाज-उपचार कारगर हुआ फिर मैं क्यो क्षणिक सुखो मे फसूँ।" श्री गणेशमलजी ने कहा।

आगत महानुभाव श्री गणेशमलजी की वैराग्य भरी वाणी से बडे प्रभावित हुए, वे धन्यवाद देकर चले गये।

धर्म पथिक गुरु प्रवर की सान्निध्यता

कुछ ही दिन व्यतीत हुए होगे, एक दिन अचानक श्री गणेशमलजी के पेट मे भयकर दर्द पैदा हुआ। अतिशय दर्द से वे कराह उठे, सोचने लगे—यदि इसी दर्द के बीच मेरी आयु पूर्ण हो गई तो सयम लेने की भावना अपूर्ण रह जायेगी। सयम पथ पर चलता हुआ त्याग-प्रत्याख्यान सहित प्राणोत्सर्ग होगा तो सद्गति मिलेगी, कही जीवन अधूरा ही न रह जाय ? "यदि चार प्रहर के भीतर पेट-दर्द का शमन हो गया तो अतिशीघ्र दीक्षा स्वीकार करूँगा।" इस प्रकार अनाथी मुनि के समान मन ही मन निश्चय कर लिया। "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।" हुआ वैसा ही, नवकार महामत्र के ध्यान मे श्री गणेशमलजी तन्मय हो गये। दृढ निश्चय तथा महामत्र के प्रभाव से चार प्रहर पूर्ण होते-होते तो श्री गणेशमलजी का पेट-दर्द ठीक हो गया। उत्तम भावना के प्रबल वेग ने रोग को भगाकर ही दम लिया, अर्थात् पुन शरीर स्वस्थ हो गया।

बस, व्यापार को तिलाजलि देकर निकल पडे महान् गुरु को प्राप्त करने।

श्री गणेशमलजी को पता लगा कि—इस वर्ष बेलापुर मे कोटा सम्प्रदाय के महामुनि वात्सल्य वारिधि यथानाम तथागुणसम्पन्न तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी महाराज का चातुर्मास है। यह बात वि० स० १९६३ की है। "तपस्वीराज रत्नत्रय की पावन सुरसरि प्रवाहमन करते हुए, अर्थात् प्रवचन गगा का भव्यात्माओ को पान कराते हुए, जिनवाणी के प्रचार-प्रसार से मोह तन्द्रा मे पडे हुए व्यक्तियो को सजग करने मे सलग्न है।" बलवती भावना के साथ वे बेलापुर तपस्वीराज के सन्निकट जा पहुँचे। धर्म-पथ-प्रबोधक सद्गुरु का साक्षात्कार शिष्य के लिए असीम मनोरथपूरक, सयम-धन की अभिवृद्धि करने वाला रहा है। गुरु प्रवर का पावन साहचर्य पाकर अनगढ पत्थर भी जब पूजनीय बन जाता है तो मनुष्य के जीवन का निर्माण नही होगा ? अवश्य। गुरु की प्रेरणा से शिष्य साधना के पवित्र मार्ग पर चल पडता है। गुरु प्रदत्त शिक्षा-मत्र शिष्य के जीवन निर्माण का महा-मत्र होता है। इसीलिए जिन-मार्ग के पथ पर गति करने वाले गुरु प्रवर को "धर्म पथ प्रबोधक" कहकर पुकारा है। "भव जलनिधि पोतस्त बिना नास्ति कश्चित्।" अर्थात् भवोदधि मे डबने वालो के लिए गुरु रूप पोत (जहाज) ही सब कुछ है।

मुनि पुगव श्री प्रेमराज जी म० को देखकर अर्थात् उनके दर्शन करके श्री गणेशमलजी ने ऐसा अनुभव किया कि "यहाँ मुझे आत्म-दर्शन, आत्म-कल्याण का अनुपम पथ अवश्य मिलेगा।" चरणो मे विनम्र प्रार्थना करते हुए अपना परिचय दिया तथा वे बोले—

"गुरुदेव! मैंने भोगो की नश्वरता, ससार की असारता तथा देह की क्षणभगुरता का स्पष्टत अनुभव किया है। ससारियो की स्वार्थपराणमता भी मुझसे छिप न सकी। जिन्हे मैं अपना समझता था वे मेरे माता-पिता-भाई भी मुझे अकेला छोडकर महाप्रयाण कर गये। मैंने जगत् मे दृष्टि पसार कर देखा तो सहारारूप अर्थात् सहायक स्वरूप दो ही नजर आये, जिसमे प्रथम आपश्री अर्थात् गुरु और दूसरा धर्म। आत्म-साधना का सम्यक्रूपेण पथ-दर्शन आप द्वारा ही होगा, इसीलिए मैं आपके श्रीचरणो मे दीक्षा लेने को आया हूँ। मेरी उत्कट अभिलाषा आपश्री ध्यान मे रखेंगे। पच महाव्रत देने का अनुग्रह करें, इसके लिए मैंने प्रण भी किया है। आपश्री के मार्ग-दर्शन मे मेरा धारा हुआ कार्य सिद्ध हो जाय, यही मेरा सानुनय आग्रह है।"

"देवानुप्रिय! तुमने जो शुभ सकल्प सजोया है, यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। पुण्यशाली-भव्यात्मा ही ऐसा महान् विचार करने मे सक्षम है। साधु बनना बहुत अच्छा है पर इसमे मेहनत ज्यादा है। बडे-बडे व्यक्ति भी इस पथ पर कदम बढाने मे हिचकिचाते है तो साधारण मानव की बात ही क्या? भ० महावीर का आत्म-मार्ग जितना सरल, उतना ही कठिन है। मेरु पर्वत के शिखर पर पहुँचना सरल हो सकता है, लोहे के चने चबाये जा सकते है, किन्तु श्रमण-धर्म की चढाई उससे भी कठिन है, महा कठिन है। पच महाव्रत, पाच समिति, तीन गुप्ति का सम्यक्तया आराधन बडी दुष्कर प्रक्रिया है। केश लु चन को कायर व्यक्ति तो देख भी नही सकता। धीर-वीर पुरुष इन कठिनाइयो को सहजतया पार कर जाते हैं। सघर्षों से लोहा लेने की जिसमे क्षमता होती है वही इस मार्ग पर बढ पाता है, वह कठिनाइयो के बीच से गुजरता हुआ भी सयम-पथ को सरल मानता है। इसीलिए यह सरल किवा कठिन दोनो तट से जुडा हुआ है।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"गुरुदेव! बडे बुजुर्ग जन कहते आये हैं कि स्वर्ण जब तक आग को नही सहता तब तक शुद्धता के शिखर पर नही पहुँचता। बस, वैसे ही व्यक्ति जब तक दुष्कर राह से न गुजरे वह कैसे पावन, निर्मल बन पाये? भूतकाल मे यह आत्मा अपने कुटिल कर्मों के कारण नर्क गति मे गई। नर्क के महा दुःखो, प्राणघातक व्यथा को सहकर आई है तो उस क्षेत्र-वेदना के सामने

ये परीषह् कुछ भी नही है। जिन परीषहो को कायर दु खरूप मानते है, उन सयमी जीवन मे आने वाले सघर्षों को मैं सुखरूप मानता हूँ। परीषह सहन करेंगे तभी तो निर्जरा होगी। साध्वाचार के पालन मे कठोर कदम उठायेंगे तभी सयम की साधना मे सफलता मिलेगी। साधु जीवन जीने के लिये जो विचार आपश्री ने अभी फरमाये है मैं उन्ही विचारो का समर्थक ही नही, उन्हे आचरण मे लाने के लिए ही आया हूँ, आप मुझे अपनी सेवा मे रहने की आज्ञा प्रदान करें। मैं आपश्री की आज्ञा की प्रतीक्षा मे हूँ, सेवा मे रहने के बाद आप जैसा फरमायेंगे वैसा ही मैं करूँगा।"

अन्तर्मन की उज्ज्वल वैराग्य भावना जिसकी होती है उसे अपने विचारानुसार खोजने पर सच्चे गुरु मिल ही जाते हैं। ऐसे ही धर्मरुचि से ओत-प्रोत शुचिभूत मनस्वी श्री गणेशमलजी को महामना ज्योतिर्धर मुनि पु गव गुरु प्रवर का सहजतया सुयोग मिल ही गया तथा सन्तरत्न तपस्वी-राज को सुयोग्य शिष्य का मिलाप होना सोने मे सुगन्ध वाली बात हो गई। श्री गणेशमलजी के उत्तम भावो को सम्यक्तया जानकर मुनि प्रवर ने अपने निकट रहने की स्वीकृति दे दी।

स्वीकृति प्राप्त कर श्री गणेशमलजी का मन फूला नही समाया। उन्हे असीम आनन्द का अनुभव हुआ। जैसे जौहरी को सच्चा हीरा मिला वैसे ही मानस-मणि के पारखी को गुरुरूप हीरा प्राप्त हो गया। ज्यो-ज्यो सन्निकटता बढती गई त्यो-त्यो गुरुदेव का ज्ञान भण्डार गणेशमलजी को मुक्तहस्त मिलता गया। लोभी वणिक् की भाति ज्ञान-धन को बटोरने मे श्री गणेशमलजी पूरी तरह से जुट गये। बेलापुर से चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् तपस्वीराज की विहार यात्रा प्रारम्भ हुई। आपश्री के साथ श्री गणेशमल जी वैरागी भी थे। धर्म-प्रचार करते हुए तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी म० के चरण कमल "नगर शूल" गाँव तक पहुँचे, यह वही गाँव है जहाँ से कुछ महिनो पूर्व श्री गणेशमलजी के साथ एक श्रीमत पुत्री का सम्बन्ध निश्चित् करने आया था बेलापुर नगर मे, किन्तु वैराग्य रस की पावन गगा मे स्नान करने वाले को भोगरूपी गदे कीचड का नाला क्योकर प्रिय होगा ? कभी नही। भगवान महावीर की वाणी मे—"अनासक्त आत्मा कामवासना को विषवत मानकर परित्याग करती हुई कर्मबन्धन से मुक्त होने का सतत प्रयास करती है।" □□

ती एवं खलु॥ जंबू॥ समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स अंगस्स विवागसुयस्स दोसुयखंधा॥पा तं॥ दुहविवागाय सुहविवागाय ७ प

वणग ढमस्सणं भंते सुयखंधस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे प॥ ८ तएणं सुहम्मे अणगारे जंबू अणगा

१५ रं एवं वयासी एवं खलु॥ जंबू॥ समणेणं आदीगरेणं जाव संपत्तेणं दुहविवागाणं दस अज्झयणा॥पा तं॥ १ मियापुत्ते २ उज्झियए ३ अ

भग्ग ४ सगडे ५ वहस्सइ ६ णंदी ७ उंबर ८ सोरियदत्तेय ९ देवदत्ताय १० अंजूय ११ जइणं भंते समणेणं जाव संपत्तेणं दुहविवा

गाणं दस अज्झयणा॥पा तं॥ मियापुत्ते जाव अंजूय पढमस्सणं भंते अज्झयणस्स दुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे॥पाण्ण

तएणं से सुहम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी एवं खलु॥ जंबू॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं मियागामे णयरे होत्था वण्णओ ११ त

स्सणं मियागामस्स णगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए चंदणपायवे णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउयवण्णओ १२ तत्थणं चंदणपायव

स्स बहुमज्झदेसभाए सुहम्मस्स जक्खस्स जक्खायणे होत्था चिराईए जहा पुण्णभद्दे १३ तत्थणं मियागामे णयरे विजए णामं खत्ति

राया परिवसइ वण्णओ १४ तस्सणं विजयस्स खत्तियस्स मियाणामं देवी होत्था अहीण वण्णओ १५ तस्सणं विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते

मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते णामं दारए होत्था जाइअंधे जाइमूए जाइबहिरे जाइपंगुले हुंडेय वायवे णत्थिणं तस्स दारगस्स हत्था

वा पायावा कण्णावा अच्छिवा णासावा केवलं से तेसिं अंगोवंगाणं आगिती आगितिमित्ते १६ तएणं सा मियादेवी तं मियापुत्तं दारगं

रहस्सियं भूमिघरंसि रहस्सिएणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी २ विहरइ १७ तत्थणं मियागामे णयरे एगे जाइअंधे पुरिसे परिवसइ से

णं एगेणं सचक्खुतेणं पुरिसेणं पुरओ दंडएणं पगड्ढिज्जमाणे २ फुट्टहडाहडसीसे मच्छिया चडगर पहकरेणं अणिज्जमाणमग्गे मिय

गामे णयरे गिहेगिहे कालुणवडियाए वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ १८ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए

परिसा णिग्गया १९ तएणं से विजए खत्तिए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जहा कूणिए तहा णिग्गए जाव पज्जुवासइ २० तएणं से

अंधे पुरिसे तं महाजणसद्दं च जाव सुणेत्ता तं पुरिसं एवं वयासी किण्णं देवाणुप्पिया॥ अज्ज मियगामे इंदमहेइवा जाव णिग्गच्छइ

२१ तएणं से पुरिसे तं जाइअंधपुरिसं एवं वयासी णो खलु॥ देवाणुप्पिया॥ इंदमहेइ जाव णिग्गए एवं खलु॥ देवाणुप्पिया॥ समणे जाव

विहरइ तएणं एए जाव णिग्गच्छइ २२ तएणं से अंधपुरिसे तं पुरिसं एवं वयासी गच्छामोणं॥ देवाणुप्पिया॥ अम्हेवि समणं भगवं महावीरं

जाव पज्जुवासामो २३ तएणं से अचक्खुपुरिसे जाइअंधपुरिसे पुरओ दंडएणं पगड्ढिज्जमाणे २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवाग

च्छइ २त्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २त्ता वंदइ २त्ता णमंसइ २त्ता जाव पज्जुवासइ २४ तएणं समणे भगवं महावीरे विजय

स्व० तपोनिधि कर्णाटक केशरी जी महाराज द्वारा हस्तलिखित शास्त्र प्रति की एक प्रति कृति

णी संवेगाणी सुयधम्मं चरित्तधम्मं जाव रायपरिसा पडिगया। तएणं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं
सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेति जाव एवं वयासी सद्दहामि णं भंते णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते णिग्गंथं पावयणं रोयामि णं भं
ते णिग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते णिग्गंथं पावयणं तहमेयं भंते णिग्गंथं पावयणं अवितहमेयं भंते णिग्गंथं पावयणं असंदिद्ध
मेयं भंते णिग्गंथं पावयणं इच्छियमेयं भंते णिग्गंथं पावयणं पडिच्छियमेयं भंते णिग्गंथं पावयणं से जहेयं तुब्भे वदह। जहा
णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे राईसर तलवर माडंबिए कोडुंबिए सेट्ठी सत्थवाह पभिइया कुमारा मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगा
रियं पव्वइया णो खलु अहण्णं तहा संचाएमि मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए अहण्णं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणु
व्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह। तएणं से सुबाहु
कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जति पडिवज्जित्ता त
मेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहति दुरूहित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए तेणंकालेणं तेणंसमएणं समणस्स भगवओ
महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णाम अणगारे गोयमगोत्तेणं सत्तुस्सेहे वइरिसह संघयणे समचउरंससंठाणे संठिए कणगपुल
गणिघसे पम्हगोरे दित्ततवे तत्ततवे महातवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउलते
उलेस्से चउणाणोवगए जाव एवं वयासी अहोणं भंते सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते २ पिए २ मणुण्णे २ मणामे २ सोमे सुभगे पियदं
सणे सुरूवे बहुजणस्सवि य णं भंते सुबाहुकुमारे इट्ठे इट्ठरूवे कंते २ पिए २ मणुण्णे २ मणामे २ सोमे सुभगे पियदंसणे सुरूवे साहुज
णस्सवि य णं भंते सुबाहुकुमारे इट्ठे २ कंते २ पिए २ मणुण्णे २ मणामे २ सोमे सुभगे पियदंसणे सुरूवे सुबाहुणा भंते कुमारेणं इ
मा एयारूवा उराला माणुस्सरिद्धी किण्णा लद्धा किण्णा पत्ता किण्णा अभिसमण्णागया के वा एस आसी पुव्वभवे किं वा दच्चा किं वा भो
च्चा किं वा समायरित्ता कस्स वा समणस्स वा माहणस्स अंतिए एगमवि आरियए धम्मिए सुवयणं सोच्चा जेसिणं एयारू
वा माणुस्सरिद्धी लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया। एवं खलु॥ गोयमा॥ तेणंकालेणं तेणंसमएणं इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहेवासे हत्थिणा
उरे णामं णयरे होत्था रिद्धित्थिमियसमिद्धे वण्णओ तत्थणं हत्थिणाउरे णयरे सुमुहेणामं गाहावई परिवसइ अड्ढे दित्ते वित्थिण्ण भव
ण जाव अपरिभूए तेणंकालेणं तेणंसमएणं धम्मघोसा णामं थेरा जाइसंपण्णा कुलसंपण्णा बलसंपण्णा रूवसंपण्णा णाणसंपण्णा
दंसणसंपण्णा चरित्तसंपण्णा लाघवसंपण्णा विणयसंपण्णा लज्जासंपण्णा ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी जियकोहे जियमाणे जिय

सुबाहु २

५५३

स्व० तपोनिधि कर्णाटक केशरी जी महाराज द्वारा हस्तलिखित शास्त्र प्रति की एक प्रति कृति

वैसे तो ससार दुःख, पीडा और व्यथाओ का भण्डार है, 'अहो दुःखो हु ससारो'—ससार दुःखमय है। और साधना—सयम, तप-त्याग, वैराग्य का मार्ग शान्ति-मार्ग है, किन्तु ससार के दुःख अनादिकालीन सस्कार बन जाने के कारण जीव को ये दुःख भी सुख रूप लगते है, ससार की भयकर व्यथाएँ उसे प्रिय लगती हैं, और शान्तिदाता, सयम कठिन व कठोर लगता है। इसका कारण जीव का मोह तथा अनादिकालीन सस्कार या विषयासक्ति ही है। इसी दृष्टि से साधना का पथ ससारी जीवो के लिए 'असिधारा-पथ' कहा गया है। वास्तव मे सयम की साधना अनासक्ति, साहस, धीरज और आत्म-विज्ञान के आधार पर ही सफल होती है और तभी उसमे आने वाले शारीरिक कष्ट, परीषह और पीडाओ पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

हमारे चरितनायक श्री गणेशमलजी ससार से विरक्त होकर दृढ सकल्प के साथ अब सयम के 'असिधारा-पथ' पर बढने को कृतसकल्प हो गये।

अभिनिष्क्रमण : श्रमण धर्म मे आना

नगर शूल निवासी मान्यवर श्रेष्ठी श्रीमान खेमचन्दजी बाफना एव उनकी धर्मपत्नी सुश्राविका झमकुबाई को पता लगा कि तपस्वी श्री प्रेमराज जी म० नगर शूल मे पधारे है, उनके साथ एक दीक्षार्थी भाई भी है। उन्हे यह भी जानकारी हुई कि यह वही मुमुक्षु है, जिन्हे हम अपनी कन्या अर्पण कर रहे थे। बीद (वर) बनने वाला आज वैरागी के रूप मे आ गया है। जिनकी दीक्षा लेने की तीव्र अभिलाषा है। क्यो न यह सेवा का स्वर्णिम लाभ अपन लेवें?

विचारानुरूप झमकुबाई अपने पतिदेव से बोली—

"तपस्वीराज से विनति करो कि आपश्री के साथ जो वैरागी भाई है, उनकी शुभ दीक्षा अपने घर से हो, हम यही चाहते है। दीक्षा जैसा पवित्र कार्य और क्या होगा? हमारी भावना को सफल बनाने मे आपश्री सहयोग दें।"

वाफनाजी को भी यह वात उचित लगी, उन्होने तपस्वीराज के श्री चरणो मे पहुँचकर विनम्र निवेदन कर आग्रह किया कि "यह शुभ लाभ हमे दिरावे।"

वाफनाजी के आग्रह भरे निवेदन को तपस्वीराज ने यथार्थ रूप मे समझा फिर वैरागी गणेशमलजी की जिज्ञासा जानने के लिए उनसे कहा—

"सेठ खेमचन्दजी तुम्हारी दीक्षा करवाना चाहते है, वोलो—अव सयम स्वीकार करना है या कुछ दिनो-महीनो वाद ?"

श्री गणेशमलजी अब तक महाराज श्री के निकट रहते हुए वहुत कुछ ज्ञान की वातें सीख चुके थे।

"गुरुदेव ! आपश्री भगवान महावीर की वाणी फरमाते है कि—"समय गोयम मा पमायए।" इन्द्रियविजेता को समय मात्र का प्रमाद नही करना चाहिए, अर्थात् समय को मूल्यवान समझकर सयम मे प्रवृत्ति करना ही महत्त्वपूर्ण है तो फिर मैं अव दिन और महीने व्यर्थ ही कैसे व्यतीत कर सकता हूँ ? इतना समय जो बीता है उसका भी मुझे दु ख है पर करता भी क्या ? अन्तराय कर्म जो ठहरा। अब तो आप कही भी दीक्षा दे, मैं बिल्कुल तैयार हूँ।" गणेशमलजी ने उत्सुकता से अपने भाव प्रकट किये।

दीक्षा लेने तथा देने वाला दोनो ही जव तैयार है फिर देर किस बात की ? महाराज श्री ने स्वीकार कर बाफनाजी का दिल हर्ष से भर दिया।

बस, बात सारे नगर मे फैल गई "एक विरक्त आत्मा सयम पथ स्वीकार कर रही है।" चारो ओर सीमातीत हर्ष की लहर दौड गई। वि० स० १९७० मृगसर शु० ९ का शुभ दीक्षा दिन निकाल दिया, तदनुसार नवमी के दिन वैराग्यानन्दी गणेशमलजी का बडे ठाट के साथ दीक्षा महोत्सव मनाया। दीक्षा देते समय महान् तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी म० ने विशाल जन समूह को सन्देश देते हुए साधु जीवन के महत्त्वपूर्ण गुणो का वर्णन किया, उन्होने कहा—

"जिन-पथ की श्रमण दीक्षा स्वीकार करने वाली भव्यात्मा आत्म-गुणो मे रमण करने वाली होती है। जिसके जीवन मे श्रद्धारूपी नीव एव आत्म-सरोवर के भावक्रिया की वज्रमय भित्ति होती है, सत्रह प्रकार के सयम जिसके सोपान है, सन्तोष जिसका दरवाजा है, चार प्रकार की समाधि आराम, पच समिति-त्रिगुप्ति जिसकी सुदृढ छत है, बारह प्रकार के तप जिसके लोहरूप स्तम्भ हैं, दस यतिधर्म जिसकी आलमारियाँ हैं, सद्गुण (सत्ताविस गुण) रूपी रत्न जिस भण्डार की आलमारियो मे सुरक्षित रहते हैं,

सम्यक् ज्ञान का उज्ज्वल प्रदीप जहाँ ज्योतिर्मान है, शान्ति तथा समता के निर्मल नीर से जो आपूरित है, १२ भावनारूपी कमल जहाँ खिलते है। ऐसा श्रमणधर्म निश्चित कल्याणी है। "श्रमणत्वमिद रमणीयतरम्" श्रमणपना वस्तुत रमणीयता से लबालब भरा हुआ है। जिन आर्हती दीक्षा जन्म-मरण के दुखो की विमोचक, भव-बन्धनछेदक, कर्मास्रव कुण्ठिनी, असीम आत्मानन्द प्रदायक है। ऐसी सुखदायिनी दीक्षा को भव्य जीव ही धारण करते ह, सम्यक्त्वी ही इसके यथार्थ रूप मे आराधक होते है। सयमी जीव इस प्रशस्त-पवित्र व अनुग्रहणीय दीक्षारूप उद्यान मे बैठकर उच्च ध्यान द्वारा अपनी आत्मा का अवलोकन करते हुए वीतराग धर्म के उपासक बनते है।

"समाज के बीच गणेशमलजी जैन आर्हती दीक्षा स्वीकार कर रहे है। मेरी इनसे यही अपेक्षा है कि नवदीक्षित मुनि अपने कुल को तो उज्ज्वल करेंगे ही साथ ही मुनि मर्यादाओ का उच्चतम पालन करते हुए जिनशासन की शोभा मे प्रतिपल—प्रतिक्षण अभिवृद्धि करेंगे।

"सतिमग्ग च बूहए।"—जहाँ भी विचरण करे शात-सयत मुनिधर्म मे रहते हुए शान्ति की स्थापना मे विश्वास रखने तथा वैसा ही आचरण करने वाला साधक महान् होता है।" भ० महावीर की इस पवित्र वाणी का पान करते हुए ऐसा ही जीवन श्री गणेशमलजी म० बनायेंगे। यही मेरी शुभ कामना है।"

इस प्रकार शुभ क्षणो मे तपस्वी, क्रियोद्धारक, सरलचेता, महासाधक श्री प्रेमराज जी म० के शिष्य बनकर श्री गणेशमलजी म० भाग्यशाली हो गये। इधर विनय-विवेक-विज्ञानसम्पन्न अतेवासी (शिष्य) पाकर गुरुदेव का मन-मयूर हर्षविभोर हो गया। सुगुरु तथा सुयोग्य शिष्य का सयोग काचन-मणि का-सा मधुर स्मृति का प्रतीक है। जो भिन्न होकर भी अभिन्न तथा अभिन्न होकर भी भिन्न परिलक्षित होता है।

प्रथम वर्षावास एव तप के अभिमुख

दीक्षा ले लेना ही मुमुक्षु के लिये पर्याप्त नही है। दीक्षा विधि ग्रहण करने के पश्चात् श्री गणेशमलजी महाराज की विहार यात्रा अपने गुरुदेव श्री तपस्वीराज के साथ प्रारम्भ हुई। स्थानाग सूत्र के अनुसार एक-एक मुमुक्षु सिंह के समान ओजस्वी भावो के साथ दीक्षा लेते हैं तथा पालन भी उसी तरह भाव-वाहिनी मे रमण करते हुए रत्नत्रय की अभिवृद्धि के साथ निरन्तर बीज की कला के समान विस्तार पाते हुए बढते रहते है। महानता की ओर बढना ही जिन्हे अभीष्ट है, बस वैसे ही श्री गणेशमलजी म० सयम पथ पर बढ रहे थे।

बाफनाजी को भी यह बात उचित लगी, उन्होने तपस्वीराज के श्री चरणो मे पहुँचकर विनम्र निवेदन कर आग्रह किया कि "यह शुभ लाभ हमे दिरावे।"

बाफनाजी के आग्रह भरे निवेदन को तपस्वीराज ने यथार्थ रूप मे समझा फिर वैरागी गणेशमलजी की जिज्ञासा जानने के लिए उनसे कहा—

"सेठ खेमचन्दजी तुम्हारी दीक्षा करवाना चाहते है, बोलो—अब सयम स्वीकार करना है या कुछ दिनो-महीनो बाद ?"

श्री गणेशमलजी अब तक महाराज श्री के निकट रहते हुए बहुत कुछ ज्ञान की बाते सीख चुके थे।

"गुरुदेव ! आपश्री भगवान महावीर की वाणी फरमाते है कि—"समय गोयम मा पमायए।" इन्द्रियविजेता को समय मात्र का प्रमाद नही करना चाहिए, अर्थात् समय को मूल्यवान समझकर सयम मे प्रवृत्ति करना ही महत्त्वपूर्ण है तो फिर मैं अब दिन और महीने व्यर्थ ही कैसे व्यतीत कर सकता हूँ ? इतना समय जो बीता है उसका भी मुझे दु ख है पर करता भी क्या ? अन्तराय कर्म जो ठहरा। अब तो आप कही भी दीक्षा दे, मैं बिल्कुल तैयार हूँ।" गणेशमलजी ने उत्सुकता से अपने भाव प्रकट किये।

दीक्षा लेने तथा देने वाला दोनो ही जब तैयार है फिर देर किस बात की ? महाराज श्री ने स्वीकार कर बाफनाजी का दिल हर्ष से भर दिया।

बस, बात सारे नगर मे फैल गई "एक विरक्त आत्मा सयम पथ स्वीकार कर रही है।" चारो ओर सीमातीत हर्ष की लहर दौड गई। वि० स० १९७० मृगसर शु० ९ का शुभ दीक्षा दिन निकाल दिया, तदनुसार नवमी के दिन वैराग्यानन्दी गणेशमलजी का बडे ठाट के साथ दीक्षा महोत्सव मनाया। दीक्षा देते समय महान् तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी म० ने विशाल जन समूह को सन्देश देते हुए साधु जीवन के महत्त्वपूर्ण गुणो का वर्णन किया, उन्होने कहा—

"जिन-पथ की श्रमण दीक्षा स्वीकार करने वाली भव्यात्मा आत्म-गुणो मे रमण करने वाली होती है। जिसके जीवन मे श्रद्धारूपी नीव एव आत्म-सरोवर के भावक्रिया की वज्रमय भित्ति होती है, सत्रह प्रकार के सयम जिसके सोपान है, सन्तोष जिसका दरवाजा है, चार प्रकार की समाधि आराम, पच समिति-त्रिगुप्ति जिसकी सुदृढ छत है, बारह प्रकार के तप जिसके लोहरूप स्तम्भ हैं, दस यतिधर्म जिसकी आलमारियाँ है, सद्‌गुण (सत्ताविस गुण) रूपी रत्न जिस भण्डार की आलमारियो मे सुरक्षित रहते है,

सम्यक् ज्ञान का उज्ज्वल प्रदीप जहाँ ज्योतिर्मान है, शान्ति तथा समता के निर्मल नीर से जो आपूरित है, १२ भावनारूपी कमल जहाँ लिखने हैं। ऐसा श्रमणधर्म निश्चित कल्याणी है। "श्रमणत्वमिद रमणीयतरम्" श्रमणपना वस्तुत रमणीयता से लबालव भरा हुआ है। जिन आर्हती दीक्षा जन्म-मरण के दुखो की विमोचक, भव-बन्धनछेदक, कर्मास्रव कुण्ठिनी, असीम आत्मानन्द प्रदायक है। ऐसी सुखदायिनी दीक्षा को भव्य जीव ही धारण करते हैं, सम्यक्त्वी ही इसके यथार्थ रूप मे आराधक होते है। सयमी जीव इस प्रशस्त-पवित्र व अनुग्रहणीय दीक्षारूप उद्यान मे बैठकर उच्च ध्यान द्वारा अपनी आत्मा का अवलोकन करते हुए वीतराग धर्म के उपासक बनते हैं।

"समाज के बीच गणेशमलजी जैन आर्हती दीक्षा स्वीकार कर रहे है। मेरी इनसे यही अपेक्षा है कि नवदीक्षित मुनि अपने कुल को तो उज्ज्वल करेंगे हो साथ हो मुनि मर्यादाओ का उच्चतम पालन करते हुए जिनशासन की शोभा मे प्रतिपल—प्रतिक्षण अभिवृद्धि करेंगे।

"सतिमग्ग च बूहए।"—जहाँ भी विचरण करे शात-सयत मुनिधर्म मे रहते हुए शान्ति की स्थापना मे विश्वास रखने तथा वैसा ही आचरण करने वाला साधक महान् होता है।" भ० महावीर की इस पवित्र वाणी का पान करते हुए ऐसा ही जीवन श्री गणेशमलजी म० बनायेंगे। यही मेरी शुभ कामना है।"

इस प्रकार शुभ क्षणो मे तपस्वी, क्रियोद्धारक, सरलचेता, महासाधक श्री प्रेमराज जी म० के शिष्य बनकर श्री गणेशमलजी म० भाग्यशाली हो गये। इधर विनय-विवेक-विज्ञानसम्पन्न अतेवासी (शिष्य) पाकर गुरुदेव का मन-मयूर हर्षविभोर हो गया। सुगुरु तथा सुयोग्य शिष्य का सयोग काचन-मणि का-सा मधुर स्मृति का प्रतीक है। जो भिन्न होकर भी अभिन्न तथा अभिन्न होकर भी भिन्न परिलक्षित होता है।

प्रथम वर्षावास एव तप के अभिमुख

दीक्षा ले लेना ही मुमुक्षु के लिये पर्याप्त नही है। दीक्षा विधि ग्रहण करने के पश्चात् श्री गणेशमलजी महाराज की विहार यात्रा अपने गुरुदेव श्री तपस्वीराज के साथ प्रारम्भ हुई। स्थानाग सूत्र के अनुसार एक-एक मुमुक्षु सिंह के समान ओजस्वो भावो के साथ दीक्षा लेते है तथा पालन भी उसी तरह भाव-वाहिनी मे रमण करते हुए रत्नत्रय को अभिवृद्धि के साथ निरन्तर बीज की कला के समान विस्तार पाते हुए बढते रहते है। महानता की ओर वढना ही जिन्हे अभीष्ट है, बस वैसे ही श्री गणेशमलजी भ० सयम पथ पर बढ रहे थे।

सध्या के समय प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यानादि प्रक्रिया से निवृत्त हो श्री गणेशमलजी म० ने गुरुदेव की वैयावृत्य करते हुए सविनय प्रश्न किया—

"गुरुदेव ! रसनेन्द्रिय-निग्रह के लिये साधक को क्या करना चाहिए, ऐसी राह हो जिससे इच्छाओ का निरोध भी हो साथ ही तप भी ?"

"वत्स ! तुम्हारी जिज्ञासा साधना वृत्ति के बिल्कुल अनुकूल है। जहाँ जिज्ञासा है वहाँ ज्ञान को राह है। साधक जीवन मे आत्म-ज्ञान के प्रति पिपासा होनी चाहिए। रसनेन्द्रियविजेता बनने के लिये प्रतिदिन एक-एक विगय (रस) का परित्याग करते जाओ। साथ ही दशवैकालिक व उत्तराध्ययन सूत्र को भावार्थ समझते हुए याद करते रहो, इन दोनो बातो से इच्छा निरोध के साथ तप भी होगा।"

रागोवरय चरेज्ज लाढे,
विरए वेय वियाय रक्खिए।
पण्णे अभिभूय सव्वदसी,
जे कम्हि वि ण मुच्छिए स भिक्खू ॥

(उत्त० अ० १५ गा० २)

"रागरहित, सयम मे दृढतापूर्वक विचरण करने वाला, असयम से निवृत्त, शास्त्रज्ञ, आत्मरक्षक, बुद्धिमान, परीषहजयी, समदर्शी, किसी भी वस्तु मे मूर्च्छा नही करने वाला भिक्षु कहलाता है।" भिक्षु धर्म मे रत रहेगा वही भ० महावीर का श्रमण होगा, अत रसनेन्द्रिय को जीतने के लिये विगय का त्याग करते हुए स्वाध्याय मे चित्त को लगा दो। तुम्हारी भावना के अनुसार तुम्हे सिद्धि अवश्य मिलेगी।

श्री गणेशमलजी म० को जब सम्यक् समाधान मिल गया तब वे अपनी उत्तम भावना के साथ एक-एक विगय अर्थात् (दूध-दही-तेल-घी-मिष्ठान्न) प्रतिदिन एक-एक का परित्याग करते हुए यश की आकाक्षा से रहित होकर ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप सम्यक् त्रिवेणी द्वारा अपने को उज्ज्वल बनाने मे उत्साहपूर्वक जुट गये। गुरुदेव की सेवा-भक्ति अग्लान भाव से करते हुए उनके द्वारा दिये जाने वाले श्रुतज्ञान को हृदय मन्दिर मे सग्रहीत करते हुए निरन्तर विकास पाते रहे। उन्होने अपने गुरुदेव से शिक्षा ग्रहण की कि "सयम मे प्रवृत्ति करते रहो तथा असयम से निवृत्ति लो।" उन्होने पहला चरण निर्धारित सकल्प की ओर बढाया वह इस प्रकार—"**एगभत्त च भोयण**।"—आगम वाणी के इन मगल स्वरो को मुझे सार्थक करना चाहिए।" तदनुसार रसनेन्द्रिय पर अकुश लगाने के लिए स्वाद निरोध का अभ्यास करना ही मेरे लिये

श्रेयस्कर रहेगा। ऐसा सोचकर वे वैसा ही करने लगे। एक समय आहार लेना साथ ही प्रतिदिन एक विगय छोडना कोई कम बात नही है। "एक बार ही आहार ग्रहण करूँगा, जिससे समय की बचत के साथ शरीर स्वस्थ रहेगा, इससे आत्म-ज्ञान, चिन्तन भी अच्छा होगा। तपाराधना भी हो जायेगी, शनै शन रसनेन्द्रिय पर भी स्वभावत विजय मिलती जायेगी।" नीरस आहार करना भी इसके लिए उपयुक्त रहेगा। आचार्य हरिभद्र सूरि के शब्दो मे—"क्षुधा भिर्नात्त इति भिक्षु।"—सरस-नीरस जेसा भी आहार हो, अस्वाद एव अनासक्त भाव से उसे ग्रहण करे वह भिक्षु है। श्री गणेशमलजी म० भी क्षुधावेदनीय की पूर्ति के लिए आहार ग्रहण करते, वे यही बोलते —"जीने के लिए खाना है, न कि खाने के लिए जीना है।"

गुरुदेव तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी म० की सेवा-भक्ति करते हुए दशवैकालिक एव आचाराग सूत्र, कुछ फुटकर बोल कठाग्र कर ज्ञान कोष की अभिवृद्धि मे सतत लगे रहे। विद्याभ्यास की रुचि देखकर तपस्वीराज भी ज्ञान देने मे जुट गये।

इस प्रकार ज्ञान-ध्यान-तपाराधना के सुखद क्षणो मे नासिक नगर का प्रथम वर्षावास सम्पन्न हुआ।

बीच की कड़ियाँ

सतत प्रवाहित रहने वाली पावन गगा की निर्मल धारा के समान नवदीक्षित मुनि श्री गणेशमलजी म० "ज्ञान क्रियाभ्या मोक्ष।" अर्थात् सम्यक्ज्ञान और सम्यक्क्रिया की उत्तम भावाराधना-साधना की प्रगति मे अपने कदम सार्थक बना रहे थे। बीच मे कभी-कभी विकट परीषह भी उपस्थित होते पर साधनानन्दी उन्हे सहजतया पार करते जाते किन्तु मन मे सयम के प्रति ग्लानि भाव नही आने देते, अपितु और दृढ बनते हुए 'गुरु परिचर्या' तथा आगम वाचन, ज्ञानाभ्यास व तपाराधना मे स्थित-प्रज्ञ के समान अवस्थित होते गये। उनके मन-मस्तिष्क मे साधु-जीवन के प्रति कभी अन्यथा भाव नही आये। आये हुए परीषहो को निर्जरा का हेतु मानकर सयम पथ पर गति करते रहे। कहा है—

बाधाएँ कब रोक सकी हैं,
आगे बढने वाले को?
विपदाएँ कब डिगा सकी हैं,
हँस-हँस जीने वाले को॥

आगम मे भी कहा है—

कालीपव्वग सकासे किसे धम्मणि सतए।
मायण्णे असण-पाणस्स अदीणमणसो चरे ॥

(उत्तरा० २।३)

"भूख से सूख कर शरीर कौए की टाग जैसा दुर्बल हो जाय, नस-नस दिखने लग जाय, अत्यन्त कृश शरीर मे रहते हुए भी साधक आहार-पानी की मर्यादा का ध्यान रखे, सयम मार्ग मे दृढता से विचरण करे पर दीनता का भाव नही लावे।"

प्रथम वर्षावास रत्नत्रय की अभिवृद्धि आराधना से सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् कुछ वर्षावास क्रमश निम्न गाँवो मे किये—रास्ता, आष्टि, सातारा, औरगाबाद, घोडनदी, सातारा तथा चीचवड आदि। पाठक वृन्द के पठनार्थ उक्त चातुर्मासो मे आयोजित कार्य-कलापो की सुव्यवस्थित जानकारी इस कृति मे अकित करना अत्यावश्यक था किन्तु उपलब्ध नही हो पाई इसीलिए जिज्ञासा पूर्ण नही कर पाया। उपरोक्त वर्षावास मे हमारे चरितनायक श्रीजी ने ज्ञान-ध्यान, तप-जप-मौन साधना-क्षेत्र मे आशातीत प्रगति की। एकान्तर तप भी निरन्तर चालू रहा। फलस्वरूप रसनेन्द्रिय स्वत सकुचित होती चली गई। जब इन्द्रियनिग्रह हो गया तो मनोनिग्रह मे आसानी पूर्वक सफलता मिली।

आगम-वाचना को प्रमुखता देते हुए सस्कृत-प्राकृत-हिन्दी-मराठी भाषाओ का ज्ञान सम्पादन किया, जिससे व्यवहारी ज्ञानकोष भी परिपुष्ट बना। अध्ययन-अध्यापन मे आपको अच्छी सफलता मिली। जिस आचार-विचार की व्याख्या वे प्रवचन सभा मे करना चाहते थे उसी का उन्होने अपने व्यवहार मे पालन किया अर्थात् उन्ही उत्तम गुणो को आत्मसात कर लिया। "पर उपदेश कुशल बहुतेरे" वाली हास्यास्पद बात को पहले ही दूर कर दिया।

जीवन की प्रयोगशाला मे हमारे चरितनायकजी ने इन्द्रिय तथा मन को वश मे किया, तप-त्यागरूपी ऊर्जा के माध्यम से ममता को जीतकर समता का प्रसार किया। आत्म-साधना के लिए मौन को विशेष महत्त्वपूर्ण मानकर उसके आधार पर एकत्व भावना मे रमण करने लगे। लोकैषणा पर विशेष रोक लगाना ही उनका एक लक्ष्य रहा। उनका समय स्वाध्याय मे विशेष व्यतीत होता था।

आपश्री की तप पूत साधना मे ज्यो-ज्यो निखार आता गया त्यो-त्यो

वाक्धारा मे तेज उत्पन्न होता गया। आपकी प्रवचन शैली की तात्त्विक-सात्त्विकता जिनोपासको के कर्ण कुहरो तक तो पहुँची ही अन्य श्रोताओ के दिल को भी छूने लगी। आपके प्रवचन जिनशासन प्रभावक निम्न विषयो पर अधिक रूप से होते थे—

(१) कहिओ भगवया जीवदयाइओ धम्मो

—भगवान् ने जीवदया, सत्यधर्म की प्ररूपणा की।

(२) वण्णिया मणुसत्ताइया दुल्लहा धम्मसाहण सामग्गी।

—मनुष्य भव, आर्य-क्षेत्र, उत्तम-कुल आदि धर्म-साधन सामग्री की दुर्लभता बतलाई।

(३) परूविया मिच्छत्ताइया कम्मबधहेऊ।

—कर्म-बध के हेतु ऐसे मिथ्यात्व, अविरति आदि को हेय बतलाया।

(४) उवइट्ठाणि महारम्भाइयाणि णरयगइकारणाणि।

—महा आरम्भ महापरिग्रह आदि को नरक गति के कारण कहे।

(५) परूविओ जम्माइदुक्खपउरो ससारो। परूविय कोहाइकसायाण भव भमण हेउत्तण।

—इस चतुर्गति रूप ससार को जन्म-जरा-मरण आदि दु ख की प्रचुरता वाला और क्रोध-मान-माया तथा लोभ को भव भ्रमण का कारण बतलाया है।

(६) पयडिओ सम्मद्दसणाइओ मोक्खमग्गो।

—समस्त दु खो से मुक्त होने के उपाय—सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र तथा सम्यक्तप का प्रतिपादन।

आपश्री के सम्यक् दिशा-दर्शन, प्रवचन से सैकडो, हजारो आत्माएँ धर्मानुष्ठान मे स्थिरता को प्राप्त हुई। ऐसे महामना मुनिपु गव का शत-शत अभिनन्दन किया जाय तो भी अपर्याप्त ही रहेगा।

प्रथम सफलता

अब चरितनायकजी जन-जन की जिह्वा पर छा गये "तपस्वी म० के रूप मे।" जब भी कोई पूछता—"कौन मुनि जी आये है ?" तो यही उत्तर प्रतिध्वनित होता—"घोर तपस्वी श्री गणेशमलजी म०।"

स० १९७९ का वर्षावास आपश्री चीचपोकली (बम्बई) मे व्यतीत कर रहे थे। आपके आध्यात्मिक प्रवचनो का निर्मल निर्झर प्रवाहित होने लगा। भव्यात्माएँ प्रवचन पीयूष का पान करने के लिए सश्रद्धा उमड-उमडकर आने लगी। जिस प्रकार मेघ अभेद भाव से बरसता हुआ धरा को सरस बनाता है, उसी प्रकार चीचपोकली की जनता को तपस्वीराज जिनवाणी की

धारा से सरसब्ज बनाते गये, जिससे धर्म अकुर बलवान होता गया। धार्मिक अनुष्ठान जैसे—सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, दयाव्रत, जीवदया, त्याग-प्रत्याख्यान मे जनता उत्तरोत्तर बढती गई। केशर तथा कस्तूरी के गुणो के लिए किसी को शपथ नही लेनी पडती वैसे ही तपस्वीराज के प्रभाव के लिए भी समझना चाहिए।

एक व्यक्ति जो कुष्ठरोग से भयकर पीडित था, वही बम्बई मे ही रहता था बहुत से नर-नारियो की दृष्टि मे जो घृणा का पात्र बना हुआ था। वह जहाँ भी जाता बिचारा रोग के कारण कष्ट पाता। आदर से वचित होने के कारण उसके दिल को बडा आघात पहुँचा। अनेको उपचार कराने के बावजूद भी जब उसे बीमारी से मुक्ति नही मिली तब निराश हो अपने को भाग्य भरोसे छोड दिया।

"मरणाणि महाभयानि।" अर्थात् मौत के महाभय से वह बिचारा तिल-तिल घुलने लगा। जब रोगमुक्ति का समय आता है तब किसी-न-किसी महान् आत्मा का सुयोग मिल ही जाता है या यूँ कहना चाहिए—किसी महान त्यागी चारित्रात्मा के पावन स्पर्श से दुखद जीवन सुखमय बन जाता है।

उस समय महान् तपस्वीराज बम्बई मे चीचपोकली मे धर्म प्रचार कर रहे थे।

कुष्ठरोग से पीडित की दयनीय दशा को देखकर एक दिन एक भाई, जो हितचिन्तक था, बोला—

"चीचपोकली मे जो तपस्वीराज विराजमान है उनके चरणो मे पहुँच जा, उन्हे वन्दन करना, दर्शन के लाभ से अपने को धन्यशाली बनाना, फिर वे जैसा फरमा देवें, इन्कार न करते हुए उनकी आज्ञा के अनुसार करना जिससे तुम्हारे शरीर का रोग जड-मूल से चला जायेगा। उनकी साधना-आराधना मे इतना सामर्थ्य है। यह मुझे पूर्ण विश्वास है, तेरी बीमारी को वे सद्गुरु ही शान्त करेंगे।"

रोगी व्यक्ति, निरोगी बनने की आशा का महा सम्बल लिए तपस्वी महाराज के श्रीचरणो मे जा पहुँचा। अपनी दुखद कहानी कह सुनाई।

महाराज श्री ने फरमाया—यदि तुझे रोग से मुक्ति लेनी है तो भ० महावीर का तप-मार्ग अपना। बोल, तपस्या करे तो बताऊँ ?

"जरूर बताओ गुरुदेव! आप जो आज्ञा फरमायेंगे मैं वही करूँगा।" आगन्तुक व्यक्ति ने कहा।

"पन्द्रह दिन के उपवास एक साथ कर जिससे तू कुष्ठरोग से निश्चित मुक्ति पायेगा। तप साधना तथा जिनवाणी पर विश्वास रख। असाता वेदनीय कर्म हटेगा तब साता प्राप्त होगी।" तपस्वीराज ने फरमाया।

जैसा तपस्वीराज श्री ने कहा उसी के अनुसार अपने को स्वस्थ बनाने के लिए उस भाई ने उपवास-तप प्रारम्भ कर दिया। हालाकि इससे पूर्व उसने कभी उपवास भी नही किया था, किन्तु न जाने क्या अन्तराय कर्म टूटा और तपस्वीराज की मागलिक मिलती रही तो धीरे-धीरे उपवास का क्रम बढता गया। ज्यो-ज्यो उपवास बढता गया त्यो-त्यो उसे रोग से मुक्ति मिलती गई।

इस प्रकार उस पीडित व्यक्ति की तप द्वारा अल्प दिनो मे ही काया पलट गई। शरीर जो पूर्व मे कृश हो गया था वह वलिष्ठ के साथ सुन्दर-स्वस्थ हो गया। इस बेजोड कार्य के पीछे भी तपस्वी राज का महाप्रभाव था। इस सफलता से बम्बई की समाज गौरवान्वित हुई। □□

३॥ परीक्षा के क्षण

स्वाति बूंद के लिये जैसे चातक पक्षी निरन्तर निगाहे लगाये रहता है, काले-कजराले घन के लिये जैसे मयूर लालायित रहता है, उसी प्रकार हमारे चरितनायक तपस्वी महाराज का चातुर्मास कराने के लिए अनेको गाँव-नगरो के भावुक नर-नारीरूप चातक अहर्निश तरसते थे, वे चाहते थे—"किसी प्रकार भी तपस्वी महाराज का हमारे नगर मे चातुर्मास हो जिससे हम मे धार्मिक भावो की जागृति हो, हम धन्यशाली हो जायें।" जहाँ भी आपश्री का चातुर्मास होता वहाँ आने-वाले लोगो का मेला (उत्सव) सा लग जाता था, साथ ही धर्म-ध्यान, तप-जप, सामायिक-सवर, दयाव्रत का अतिशय ठाट रहता था।

स० १९८३ मे हमारे चरितनायक तपस्वी महाराज का चातुर्मास हिंगनघाट घोषित हुआ। तदनुसार आपश्री धर्म प्रचार करते हुए अपने वर्षावास के लिये निर्धारित क्षेत्र हिंगनघाट पधारे। आपके शुभ प्रवेश से जनता मे आह्लाद का सागर हिलोरे लेने लगा। आबाल-वृद्ध, युवक, नर-नारी सभी अपना-अपना बैठका, पूंजनी, मुँहपत्ति, दुपट्टा, आनुपूर्वी आदि को व्यवस्थित करके धर्माराधना-साधना मे जुट गये।

कुछ दिनो के बाद ही नगर मे प्लेग की बीमारी चल पडी, बहुत से लोग भयावह स्थिति से घबरा गये। कहा है—

"सव्वे जीवा वि इच्छन्ति जीविउ न मरिज्जिउ।" अर्थात् विश्व के समस्त जीव जीना चाहते है मरना कोई नही। जैसे-जैसे हिंगनघाट मे बीमारी फैलने लगी वैसे-वैसे मानव समाज मे भगदड मचने लगी। नगर के बहुत से नर-नारी घरबार को छोड-छोडकर अन्य नगर को जाने लगे।

स्थानीय श्रावक सघ ने मिलकर तपस्वी महाराज से विनम्र प्रार्थना की कि—"यह गाँव छोडकर निकट का जो गाँव है आपश्री वहाँ पधार जावें।"

तब महाराज ने आत्मविश्वास के साथ फरमाया—

"किसी को घबराने की आवश्यकता नही है। तप-जप आदि धर्मध्यान करते रहे। ये परीक्षा के क्षण है, धर्म की परीक्षा के हेतु ही यह क्षण

उपस्थित हुआ है, आप लोग घर छोडकर भागे नही। यही रहकर तप-जप द्वारा इसका सामना करें, दृढ विश्वास रखें यह (प्लेग) बीमारी दुम दवाकर भागेगी।"

बहुत से लोगो ने तपस्वीराज की बात पर विश्वास नही किया और वे गाँव छोडकर चले गये पर जिन लोगो को तपस्वी म० के वचनो पर श्रद्धा थी, वे वही जमे रहे। इस बीच म० श्री को पारणे मे आहार-पानी भी कठिनाई से प्राप्त होता फिर भी आपश्री वही विराजित रहे। समस्या का शमन समता भाव से करते रहे।

उधर नगर मे चूहो का उपद्रव और उत्पन्न हो गया। एक का शमन ही न हो पाया और दूसरा उपद्रव आ खडा हुआ। नगरपालिका की ओर से चूहो को पकड-पकड कर मारने का आदेश अर्थात् हिंसक घोषणा जाहिर करा दी गई। इसका पता जब तपस्वीराज को लगा तो उन्हे बडा दु ख हुआ। उनका दयालु दिल रो पडा। प्रतिकार के रूप मे चारो ओर फिर-फिर कर आपको जो भी चूहे पकडने वाला नजर आता उसे समझा-समझा कर, उसके साथ मे जा-जाकर चूहो को बहुत दूर जगल मे छुडवाते।

न जाने क्या हुआ, आपको अचिन्त्य दैवी शक्ति मिली या धर्म का प्रताप ही समझो, कुछ ही दिनो मे प्लेग तथा चूहो का उपद्रव दोनो शान्त हो गये।

इस प्रकार समता, साहस तथा सहिष्णुता द्वारा तपस्वीराज ने हिंगन घाट के वर्षावास मे जिनशासन की अद्वितीय प्रभावना बढाई। प्लेग का अन्त हो गया। आपश्री ने वहाँ से सकुशल विहार किया।

एकता मे सार है

"कोप्पल" नगर का ऐतिहासिक वर्षावास सम्पन्न होने जा रहा था, उन्ही दिनो बैंगलोर सघ के प्रमुख कार्यकर्ता सुश्रावक श्रीमान् अन्नराज जी साखला अपने साथ अनेको भाइयो को लेकर तपस्वीराज की पावन सेवा मे विनती लेकर कोप्पल पहुँचे। श्री सघ की ओर से विनम्र विनती की गई। महाराज श्री समयज्ञ थे। उपकार का कार्य होगा ऐसा जानकर विनती स्वीकार कर ली। तदनुसार म० श्री छोटे-मोटे अनेक क्षेत्रो को धर्म-गगा से आप्लावित करते हुए, शासन की प्रभावना मे अभिवृद्धि करते हुए, अहिंसा धर्म का डका बजाते हुए तथा मिथ्यात्वतिमिर को छिन्न-भिन्न करते हुए नवोदित भास्कर की भाँति कर्नाटक प्रान्त के बैंगलोर जैसे धर्मनिष्ठ नगर मे पधारे। स्वागत का दृश्य बडा ही चित्ताकर्षक तथा दर्शनीय था। इस

समारोह मे हजारो राजस्थानी भाई-बहन उपस्थित थे। समस्त स्थानकवासी समाज मे उल्लास छा गया। म० श्री के पदार्पण से आबाल-वृद्ध सभी का मन-मयूर हर्ष के मारे झूम उठा।

उन दिनो बेंगलोर का स्थानकवासी समाज तीन गुटो मे बँटा हुआ था। सगठन-प्रेमी तपस्वीराज को बिखराव कतई पसन्द नही था। वे कैंची नही, सुई के समान बिखराव-अलगाव को दूर कर प्रेम की बशी बजाने वाले थे। समाज के अन्तर्जीवन को अच्छी तरह से आप जानते थे। अस्वस्थ समाज का क्या इलाज उपचार है? क्या परहेज है? यह वे अच्छी तरह समझते थे। कौन सी औषध इनका काम करेगी? यह उनकी निगाह मे था। उन्होने सोचा—"यदि इन्हे एकत्रित करेंगे तो ये लोग अपने पुराने झगडे सामने रखेंगे, पारस्परिक खीचातान बढेगी, तू-तू मैं-मैं मे समय निष्फल जायेगा। मेरे आने की सार्थकता तब ही होगी जब रुग्ण समाज नीरोग बन जायेगी, इसके लिये कोई नया रास्ता खोजना ही उपयुक्त रहेगा।"

ऐसा सोचकर आपश्री ने अभिग्रह धारण कर लिया कि—"जब तक बेंगलोर का स्थानकवासी समाज एक सूत्र मे आबद्ध नही होगा, जब तक जैन स्कूल की समुचित व्यवस्था नही होगी तब तक बेंगलोर का अन्न-जल ग्रहण नही करूँगा।"

इस प्रकार कठोर अभिग्रह धारण करके आपश्री गौतमपुरम् बाजार के सन्निकट श्रीमान् धर्मनिष्ठ सुश्रावक अनराज जी साखला के बगीचे मे विराजित थे। साखला जी अपने सकल परिवार के साथ दर्शन के निमित्त गये, तपस्वीराज के समक्ष आहार-पानी ग्रहण करने की भावना अभिव्यक्त की तब आपश्री मौनस्थ रहे। मेधावी श्रावक श्री साखला जी पहचान गये कि "गुरुदेव का मौनस्थ रहना इस बात को प्रगट करता है कि म० श्री ने आहार-पानी का परित्याग कर रखा है। साथ ही वे यह जान गये कि बेंगलोर सघ मे जो फूट है वह दूर होगी, शायद तभी पारणा करेंगे। समाज को स्वस्थ रखने की आपकी महान् निष्ठा है तभी ऐसा कठोर कदम उठाया है। मेरी निश्चित धारणा है तपस्वीराज के प्रभाव से बेंगलोर की समाज मे अवश्य जागृति आयेगी तथा फूट के बीज विलीन होगे।" समाज का भावी निर्माण अब अवश्यभावी है। ऐसा श्रीमान् साखला जी विचार करते हुए घर पहुँचे।

उसी दिन साखला जी ने अपने ही घर पर सघ के अग्रगण्य श्रावको का आह्वान किया। वे सभी साखला जी के घर पहुँचे। उनके समक्ष आपने

अर्थात् साखलाजी ने तपस्वी जी म० के अभिग्रह (अनशन अभियान) का कारण कह सुनाया, और कहा—जब-तक अपनी समाज मे सगठन नही होगा तब तक तपस्वीराज आहार-पानी ग्रहण नही करेंगे।

यह बात सुनकर सभी लोग स्तम्भित से रह गये, वे सोचने लगे—"तपस्वीराज यदि आहार-पानी ग्रहण नही करेंगे और हमारे लिये अनशन कर रहे है, यह बात अन्य सघ जानेगा तो यह हमारे लिए अच्छा नही रहेगा।"

तत्काल सभी गुट के लोग एकत्रित हुए। तीनो गुट के प्रतिनिधियो द्वारा गहराईपूर्वक विचार विमर्श हुआ। सभी को यही लगा कि—समाज हित मे एकता की अत्यन्त आवश्यकता है, यदि हममे एकता होगी तो स्नेह-मैत्री-सौजन्यता की सरिता बहेगी। जहाँ एकता सम्प है वहाँ सम्पत्ति है तथा जहाँ कुसम्प वहाँ विपत्ति, अतएव हमे तो सम्प एकता चाहिये। कहा भी है—"एकता मे सार है।" यही सोचकर सभी एक विचार मे आवद्ध हो तपस्वीराज की सेवा मे उपस्थित होकर सविनय बोले—

"कृपानाथ! आपके पावन पदार्पण एव कठोर अभिग्रह से हम सभी लोगो की आँखें खुल गई है। आपश्री से प्रभावित हो हम सभी पारस्परिक क्षमापना करते है। हम अपना पूर्व वैर-वैमनस्य भुलाकर आज से दलबन्दी समाप्त करते है। आज से स्थानकवासी समाज एक है और हम सब उसी के अग हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि अब से एकता-सूत्र मे आवद्ध रहेगे।"

इस प्रकार एकता का आश्वासन देते हुए उन्होने कहा—अब आप पारणा करें, आहार-पानी ग्रहण कर हमे कृतकृत्य करें।

इतना कहने पर भी तपस्वीराज पारणे के लिये तैयार नही हुए तव लोग और घबरा गये वे सोचने लगे—अब क्या कमी रह गई है? तपस्वीराज का अब भी समाधान नही हुआ ऐसी कौन-सी समस्या रह गई है? सोचते-सोचते याद आया—"स्कूल की अव्यवस्था का कारण ही लग रहा है।" उसी समय पुन सभी लोगो ने मीटिंग की तथा उसकी जो समस्या थी वह सुलझाई। साथ ही अर्थ व्यवस्था-सुविधा के लिये प्रस्ताव पास करके योग्य सचालको की नियुक्ति कर दी गई। दोनो कार्य यथातथ्य हो जाने पर बगलौर का श्रावक सघ पुन तपस्वीराज के सन्निकट आया, सानुनयपूर्वक विनती की—

"गुरुदेव! सघ के सभी पदाधिकारियो ने स्कूल को विकासोन्मुखी

बनाने का उपक्रम कर दिया है। आज से स्कूल अच्छी तरह से चलेगा। अर्थ-व्यवस्था भी सुन्दर ढग से बन चुकी है। अब तो आपश्री पारणा करें, शायद अब तो आपका अभिग्रह सफल हुआ होगा, ऐसा हम लोग सोचते है।"

"स्कूल की समुचित व्यवस्था तथा सघ मे एकता" इन दो बातो पर ही महाराज श्री का अभिग्रह था सो वह पूर्ण हो गया। इस प्रकार तीन दिन के उपवास हो गये। चौथे दिन पारणा किया। सारे स्थानकवासी समाज मे उल्लास भरा वातावरण छा गया। धीरे-धीरे एकता (सम्प) की सौरभ आस-पास के अनेको क्षेत्रो नगरो मे तो पहुँची ही किन्तु दूर-दूर के लोगो को भी यह पता लग गया कि—"तपस्वीराज श्री गणेशलालजी म० के पधारने से बगलौर सघ मे एकता की गगा बह रही है।" सभी लोग दौड-दौड कर दर्शनार्थ आते, तपस्वीराज की, भ० महावीर स्वामी की जयकारो से नभ-मण्डल प्रतिध्वनित हो जाता। आशातीत धर्म प्रभावना, त्याग-प्रत्याख्यान, सजोडे शीलव्रत हुए। इस प्रकार बैंगलोर का यह वर्षावास बडा ही यशस्वी रहा। जिनशासन की प्रभावना मे अभिवृद्धि हुई। उस समय स्कूल के लिये श्रीमान् सुश्रावक अनराज जी साखला ने अच्छी राशि सप्रेम भेंट की।

□□

४।। अनुमोदनीय उपलब्धि

कर्नाटक केशरी श्री तपस्वीराज ने ज्योही सिकन्द्राबाद चातुर्मास करने की अवसरानुसार स्वीकृति प्रदान की त्योही स्थानीय श्रावक सघ मे हर्ष की लहर दौड गई। सभी नर-नारियो के हृदय मे उत्साह उमगें तरगित हो गईं। मन ही मन श्रद्धालुओ ने शुभ सकल्प सजोया—

"कोई सोच रहा था मैं नित्य प्रति सामायिक करूँगा, कोई इस साल अठाई करने का, कोई मासखमण का विचार कर रहे थे, किसी ने यह भी सोचा—अभी तक त्याग-नियम नही लिया सो इस वर्ष जरूर लेंगे।" अपनी-अपनी भावनानुसार सभी के विचार शुभ कार्य करने के लिए दौडने लगे।

भावुक आत्माओ के भाव धर्म प्रवृत्ति की ओर दौड रहे थे किन्तु विधि का चक्र वाम गति से चल रहा था। तपस्वीराज छोटे-मोटे गाँवो-नगरो की जनता को समकित रस का पान कराते हुए कुछ ही दिनो मे सिकन्द्राबाद पधार गये। आपके पधारने के कुछ दिनो के बाद ही प्लेग (महामारी) की बीमारी ने आतक मचा दिया। जनता मे शोक-चिन्ता छा गई, वातावरण बडा गम्भीर बन गया। लोगो का मानसिक सन्तुलन बिगड गया। ऐसी स्थिति मे धर्माराधना मे चित्त लगाना बडा मुश्किल हो गया। दयाव्रत, सामायिक, पौषध, तपाराधना दुविधा मे पड गई। चित्त एकाग्र हो तभी प्रवचन सुनने तथा नवकार महामत्र की माला फेरने का आनन्द आ सकता है। फिर भी कुछ लोग धर्माराधना मे जुटे रहे।

इधर अन्धश्रद्धालु आन्ध्र प्रदेश के मूल निवासी तेलगु भाषी सैकडो-हजारो अज्ञानी लोगो ने यह प्रचार किया कि—"प्लेग की बीमारी 'महाकाली देवी' का प्रकोप है, यदि इससे बचना चाहते हो तो बकरो की बलि चढाओ, तुम खून दो, तुम्हे वह शान्ति देगी। देवी को प्रसन्न करो, जिससे जल्दी ही तुम्हारा दु ख दूर होगा।"

"किस-किस को समझाइये कुए भाग पडी।" वाली बात वहाँ चरितार्थ हो रही थी। अज्ञानी लोग अपनी जिह्वा का स्वाद पूर्ण करने के लिये ढोंग-पाखण्ड फैला रहे थे। गलत राह पर चलने वालो की सख्या जगत् मे ज्यादा है तभी तो अन्धानुकरण करने वाले, निंदनीय, नराधम कृत्य करने वाले बहुत फैल गये। देवी को माँ मानने वाले नर-नारी माँ के नाम

पर खुल्लमखुल्ला सरेआम खून की होली खेलने जैसा अधम कृत्य करने पर उतारू हो रहे थे। अज्ञान दशा मे पाखण्ड को ज्यादा प्रधानता दी जाती है। भयकर हिंसामय कृत्य को धर्म मानना जीवन का पतन करना है। हलाहल का पान करके जीने की आशा करना, विप वीजो का आरोपण करके अमृत फल प्राप्त करने की इच्छा करना सचमुच ही अज्ञता है, हास्यास्पद बात है। पापाचरण करके पाप-विपाक (फल) से बचने का प्रयास केवल अरण्य रोदन है। स्वय पर घास तेल (रॉकेल) छिडक कर आग लगा लेना और बचने की प्रार्थना करना—

"हे भगवन् ! मुझे बचाओ। मैं बहुत दु खी हो रहा हूँ, आग से मेरा शरीर जलता जा रहा है। बचाओ कृपानाथ ! तुम दीन दयालु हो। हे दीनानाथ ! मेरी रक्षा करो।" इस प्रकार विलाप करना व्यर्थ है।

जब जलने से घबराता है तो पहले ही आग से क्यो नही बचता है ? हिंसा के फल आग के सदृश है। नारकीय दुखो से पहुँचने वाला ही हिंसात्मक प्रवृत्ति मे भाग लेता है।

"महाहिंसात्मक कार्य होने वाला है," ऐसी खबर जब हमारे चरितनायक श्री तपस्वीराज को लगी तो उनका कोमल हृदय उद्वेलित हो गया, उनकी अन्तरात्मा मानव वेष मे रहे हुए दानवो के कृत्य पर तिलमिला उठी।

खद्दरधारी कर्नाटक केशरी चरितनायक तपस्वीराज श्री गणेशमल जी म० से रहा नही गया। रहा भी कैसे जाता ? शुद्ध दया-अनुकम्पा धर्म से ओतप्रोत प्रवचन के माध्यम से जैन समाज मे नव्य चेतना उत्पन्न की, उन्हे सदेश दिया—

"हिंसानाम्नो भवेत् धर्मो न भूतो न भविष्यति।" हिंसा परमो धर्म न कभी हुआ और न ही कभी होने वाला है। भले सागर मे पत्थर तैरने लग जायें, दिवाकर पश्चिम मे उदय होने लगे, अग्नि अपना उष्ण-धर्म छोड दे, पत्थर मे कमल पैदा हो जाय, धरा क्षमा गुण विसर जाय, न होने वाला कार्य भी होने लग जाय पर हिंसक क्रियाएँ सुकृत-पुण्य की प्रतीक भी नही हो सकती तो धर्म कहाँ से होगी ? कहा भी है—

"प्रसूते सत्वाना तदपि न वध क्वापि सुकृतम्।"

प्रवचन के मध्य चरितनायक जो ने कहा—

"धर्मवीरो ! तुम्हारे रहते हिंसा की दुन्दुभि बजे क्या यह शोभनीय है ? महावीर के उपासको को अहिंसा का सिहनाद करना चाहिए। जहाँ

जीवो पर दया भाव ही नही रहा वहाँ धर्म कैसा ? मूक पशुओ की रक्षा के लिये कदम बढाना ही जीवन की सार्थकता है। यदि आप लोग सम्भलते है तो ठीक नही तो मुझे अपनी साधु मर्यादा मे रहते हुए उन हठवादियो के सामने जाना पडेगा। कर्मनिर्जरा का महान् शुभ हेतु है, इसमे वचित होना भाग्य खोने के समान है।"

मिथ्यात्व निकन्दक, दया धर्म प्रसारक, चरितनायक तपस्वीराज की प्रभावक वाणी को सुनकर सभी लोगो के हृदय दहल गये, पर कोई प्रमुख होने को तैयार नही हो रहा था। कोई एक भी खडा हो जाय तो काम बन जाय पर सभी मौन। तभी धर्मनिष्ठ, दयापुत्र, श्रद्धावन्त बैंगलोर निवासी सुश्रावक श्रीमान अनराजजी साखला जो तपस्वीराज के दर्शनार्थ आये हुए थे अपने कुछ भाइयो के साथ वे तत्काल उठ खडे हुए और बोले—

"गुरुदेव! मेरी प्रबल भावना है कि—इस कार्य मे मैं अपने कुछ सहयोगियो के साथ भाग लूँ, जिन शासन देव तथा आपश्री की महान कृपा से अवश्य सफलता मिलेगी।"

बस, शुभ कार्य मे देर कौनसी ? कुछ अपने साथ वाले तथा कुछ सिकन्द्राबाद नगर के अग्रगण्य गुरुदेव की मागलिक लेकर निकल पडे तथा जहाँ उन हिंसक लोगो ने बलि-स्थान निर्धारित किया था, वहाँ जा पहुँचे बेधडक। अहिसा मैया के लिये मरना भी पडे तो उन्हे कोई चिन्ता नही, इतना दिल सुदृढ है जिनका ऐसे थे वे लोग। हिंसावादी लोग मूक बकरो को निर्दयतापूर्वक घसीटते हुए निर्धारित स्थान पर ला रहे थे, सभी बकरो को वहाँ एकत्रित किया जा रहा था। वहाँ का दृश्य बडा ही हृदय-द्रावक, आर्तनाद से परिपूर्ण था। धर्मनिष्ठ लोगो का हृदय बडा ही करुणार्द्र हो रहा था।

कुछ ही देर मे वे हठवादी बकरो को ले-लेकर उसी स्थान पर आये। बलि देने की तैयारी कर रहे थे तभी श्रीमान सुश्रावक अनराजजी साखला अपने सहयोगियो के साथ आ धमके, साथ ही निडरतापूर्वक बोले—

"मूक पशुओ के बलिदान से माता कभी प्रसन्न नही होगी, इससे तो वह और कुपित हो जायेगी। आग मे तेल डालने से क्या कभी आग शान्त हुई है ? कदापि नही। खून से सने वस्त्र को खून से धोयेंगे तो कभी शुद्ध नही होगा। हिसा से अधर्म ही होने वाला है, न कि धर्म। यदि [illegible] प्रसन्न ही करना है तो उन्हे मिठाइयो से प्रसन्न करो, जिससे [illegible] तुम्हे शुभ आशीर्वाद देगी। हम जैसा कह रहे है, वैसा करने

पर खुल्लमखुल्ला सरेआम खून की होली खेलने जैसा अधम कृत्य करने पर उतारू हो रहे थे। अज्ञान दशा मे पाखण्ड को ज्यादा प्रधानता दी जाती है। भयकर हिंसामय कृत्य को धर्म मानना जीवन का पतन करना है। हलाहल का पान करके जीने की आशा करना, विष बीजो का आरोपण करके अमृत फल प्राप्त करने की इच्छा करना सचमुच ही अज्ञता है, हास्यास्पद बात है। पापाचरण करके पाप-विपाक (फल) से बचने का प्रयास केवल अरण्य रोदन है। स्वय पर घास तेल (रॉकेल) छिडक कर आग लगा लेना और बचने की प्रार्थना करना—

"हे भगवन्! मुझे बचाओ। मैं बहुत दु खी हो रहा हूँ, आग से मेरा शरीर जलता जा रहा है। बचाओ कृपानाथ! तुम दीन दयालु हो। हे दीनानाथ! मेरी रक्षा करो।" इस प्रकार विलाप करना व्यर्थ है।

जब जलने से घबराता है तो पहले ही आग से क्यो नही बचता है? हिंसा के फल आग के सदृश है। नारकीय दुखो मे पहुँचने वाला ही हिंसात्मक प्रवृत्ति मे भाग लेता है।

"महाहिंसात्मक कार्य होने वाला है," ऐसी खबर जब हमारे चरितनायक श्री तपस्वीराज को लगी तो उनका कोमल हृदय उद्वेलित हो गया, उनकी अन्तरात्मा मानव वेष मे रहे हुए दानवो के कृत्य पर तिलमिला उठी।

खद्दरधारी कर्नाटक केशरी चरितनायक तपस्वीराज श्री गणेशमल जी म० से रहा नही गया। रहा भी कैसे जाता? शुद्ध दया-अनुकम्पा धर्म से ओतप्रोत प्रवचन के माध्यम से जैन समाज मे नव्य चेतना उत्पन्न की, उन्हे सदेश दिया—

"हिंसानाम्नो भवेत् धर्मो न भूतो न भविष्यति।" हिंसा परमो धर्म न कभी हुआ और न ही कभी होने वाला है। भले सागर मे पत्थर तैरने लग जायँ, दिवाकर पश्चिम मे उदय होने लगे, अग्नि अपना उष्ण-धर्म छोड दे, पत्थर मे कमल पैदा हो जाय, धरा क्षमा गुण विसर जाय, न होने वाला कार्य भी होने लग जाय पर हिंसक क्रियाएँ सुकृत-पुण्य की प्रतीक भी नही हो सकती तो धर्म कहाँ से होगी? कहा भी है—

"प्रसूते सत्वाना तदपि न वध क्वापि सुकृतम्।"

प्रवचन के मध्य चरितनायक जी ने कहा—

"धर्मवीरो! तुम्हारे रहते हिंसा की दुन्दुभि बजे क्या यह शोभनीय है? महावीर के उपासको को अहिंसा का सिंहनाद करना चाहिए। जहाँ

जीवो पर दया भाव ही नही रहा वहाँ धर्म कैसा ? मूक पशुओ की रक्षा के लिये कदम बढाना ही जीवन की सार्थकता है। यदि आप लोग सम्भलते है तो ठीक नही तो मुझे अपनी साधु मर्यादा मे रहते हुए उन हठवादियो के सामने जाना पडेगा। कर्मनिर्जरा का महान् शुभ हेतु है, इससे वचित होना भाग्य खोने के समान है।"

मिथ्यात्व निकन्दक, दया धर्म प्रसारक, चरितनायक तपस्वीराज की प्रभावक वाणी को सुनकर सभी लोगो के हृदय दहल गये, पर कोई प्रमुख होने को तैयार नही हो रहा था। कोई एक भी खडा हो जाय तो काम वन जाय पर सभी मौन। तभी धर्मनिष्ठ, दयापुत्र, श्रद्धावन्त वेंगलोर निवासी सुश्रावक श्रीमान अनराजजी साखला जो तपस्वीराज के दर्शनार्थ आये हुए थे अपने कुछ भाइयो के साथ वे तत्काल उठ खडे हुए और बोले—

"गुरुदेव ! मेरी प्रबल भावना है कि—इस कार्य मे मैं अपने कुछ सहयोगियो के साथ भाग लूँ, जिन शासन देव तथा आपश्री की महान कृपा से अवश्य सफलता मिलेगी।"

बस, शुभ कार्य मे देर कौनसी ? कुछ अपने साथ वाले तथा कुछ सिकन्द्राबाद नगर के अग्रगण्य गुरुदेव की मागलिक लेकर निकल पडे तथा जहाँ उन हिंसक लोगो ने बलि-स्थान निर्धारित किया था, वहाँ जा पहुँचे वेधडक। अहिंसा मैया के लिये मरना भी पडे तो उन्हे कोई चिन्ता नही, इतना दिल सुदृढ है जिनका ऐसे थे वे लोग। हिंसावादी लोग मूक बकरो को निर्दयतापूर्वक घसीटते हुए निर्धारित स्थान पर ला रहे थे, सभी बकरो को वहाँ एकत्रित किया जा रहा था। वहाँ का दृश्य बडा ही हृदय-द्रावक, आर्तनाद से परिपूर्ण था। धर्मनिष्ठ लोगो का हृदय बडा ही करुणार्द्र हो रहा था।

कुछ ही देर मे वे हठवादी बकरो को ले-लेकर उसी स्थान पर आये। बलि देने की तैयारी कर रहे थे तभी श्रीमान सुश्रावक अनराजजी साखला अपने सहयोगियो के साथ आ धमके, साथ ही निडरतापूर्वक बोले—

"मूक पशुओ के बलिदान से माता कभी प्रसन्न नही होगी, इससे तो वह और कुपित हो जायेगी। आग मे तेल डालने से क्या कभी आग शान्त हुई है ? कदापि नही। खून से सने वस्त्र को खून से धोयेंगे तो वह कभी शुद्ध नही होगा। हिंसा से अधर्म ही होने वाला है, न कि धर्म। यदि देवो को प्रसन्न ही करना है तो उन्हे मिठाइयो से प्रसन्न करो, जिससे माता प्रसन्न होकर तुम्हे शुभ आशीर्वाद देगी। हम जैसा कह रहे है, वैसा करने मे ही तुम्हारा

भला है। हमारी बात मानोगे तो सुख पाओगे और नहीं मानते हो, बलि करना ही धारा है तो पहले हमारी गर्दन पर शस्त्र चलाइये, पशुओ की बलि से मनुष्य की ज्यादा भारी है।"

बलि चढाने जो-जो वहाँ आये थे उन्होने अनेको कुतर्क रखकर हिंसा का मण्डन करना चाहा पर उन धर्मनिष्ठ आत्माओ के सामने एक न चली। बहुत गरमागरम वातावरण बन गया। अन्तत उन हठवादियो मे से अनेको लोगो पर अहिसा-धर्म का वास्तविक असर हुआ, उन्हे साखलाजो की बात पर विश्वास हो गया। हृदय मे सुमति (सद्बुद्धि) माँ उत्पन्न हो गई। बस, फिर क्या चाहिये ? सभी लाये हुए सैकडो-हजारो बकरो को अभयदान मिला। उस समय पुलिस भी बहुत आई थी, कही हगामा हो जाय तो उसका प्रतिकार करने के लिए, किन्तु सद्गुरुनाथ की महान् कृपा से शुभ कार्य मे कोई व्यवधान उत्पन्न नही हुआ अपितु कार्य सिद्ध हो गया। अहिसा धर्म की विजय हुई। मिष्ठान्नो से काली माता की आये हुए लोगो ने अर्चा की। खद्दरधारी, अहिसा-धर्म प्रसारक, चरितनायक पूज्य श्री गणेशमल जी म० सा० की जयकार करते सभी लोग अपने-अपने स्थान पर न जाकर पहले बाबाजी म० की सेवा मे उपस्थित हुए वही चरितनायक तपस्वीराज के सान्निध्य मे अहिसा प्रस्ताव पास हुआ कि—"आज से कोई भी नर-नारी काली देवी के स्थान पर पशु की बलि नही देगा, यदि कोई अज्ञानी ऐसा जघन्य कृत्य करेगा तो उसे सरकार की ओर से उचित दण्ड दिया जायेगा।"

आये हुए सभी लोगो ने प्रस्ताव को मान्य करते हुए बाबाजी म० से शपथ ली कि—"आज से हम लोग हिंसा नही करेंगे, बलि नही चढायेंगे।"

हमारे चरितनायकजी ने उचित अवसर जानकर फरमाया कि—

वृक्षाश्छित्वा पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर-कर्दमम्।
यद्यैव गम्यते स्वर्गे, नरके केन गम्यते॥

दया प्रेमियो! निर्दयतापूर्वक वृक्ष-लताओं का छेदन-भेदन करने वाले, पशुओ के खून का कीच मचाने वालो को यदि वैकुण्ठ (स्वर्ग) मे स्थान मिलेगा तो फिर नरक मे कौन जायेंगे ? यजुर्वेद की सूक्ति मे कहा है—

"मा हिंसी पुरुष जगत्।"—मनुष्य और जगम (गाय-भैसे आदि) पशुओ की हिंसा न करो।

यदि तुम्हे सुख चाहिए, शान्ति की कामना है तो जीवो की दया करो, अहिसा धर्म की आराधना करो, सभी रोग-शोक दूर हो जायेंगे। मूक पशुओ की बलि देने से और अशान्ति पनपेगी और दया से सुख, इसीलिये सत्य ही कहा है—

दया सुखो की वेलडी, दया सुखो की खान।
अनन्त जीव मुक्ति गया, दया तणो फल जान ॥

आप लोगो ने जो अहिंसा प्रस्ताव पास करके हिंसा (वलि) करने का त्याग किया है, यह अत्यन्त अनुमोदनीय कार्य किया है। आप सभी साधुवाद के पात्र है। अहिंसा माता की मेहरवानी से आपके ये दु ख तो मिटेंगे ही, साथ ही भावना से यदि इसकी आराधना कर लोगे तो जन्म-जन्मान्तर के पाप दु ख दूर हो जायेंगे। वलि वन्द करके आप लोगो ने अहिंसा धर्म की प्रभावना वढाई है, यह प्रशसनीय कार्य है। मुझे आप लोगो से यही अपेक्षा थी, वह पूरी हुई। इसके पश्चात् गुरुदेव ने सभी को मगल पाठ सुनाया।

इधर अहिंसा का सिहनाद गू जा और उधर प्लेग वीमारी के पाव उखडे। इसके बाद कुछ दिनो तक भी न ठहर सकी और दुम दवाकर भाग गई। इस प्रकार अहिंसा माता की सुकृपा तथा शान्ति सप्ताह जाप के प्रभाव से चारो ओर आनन्द के डके वज गये। इस महाकार्य का श्रेय हमारे चरितनायक, खद्दरधारी, कर्नाटक केशरी पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी म० को है, जिनके अद्भुत तप त्याग का ही यह चमत्कार है, नही तो इतना जल्दी यह कार्य कैसे होता? बावाजी म० का चित्त उसमे लगा हुआ था तो सरलतया सफलता मिल गई तथा जिनशासन की महान् प्रभावना हुई। तपस्वीराज की उस चमत्कारी साधना से ही अहिंसा धर्म की विजय हुई। सिकन्द्राबाद की धर्मनिष्ठ जनता के हृदय मे तपस्वीराज का नाम बस गया।

निडर धर्मसेनानी सुश्रावक दयापुत्र श्रीमान् अनराज जी साखला का सभी लोगो ने सहृदय अभिनन्दन किया।

इस प्रकार इस वर्षावास मे अनेको विशिष्ट अनुमोदनीय उपलब्धियाँ हुईं, जसे—

(१) सैकडो-हजारो मुर्गों-भैसो-बकरो की होने वाली बलि का बन्द होना।

(२) प्लेग (महामारी) बीमारी का आमूल-चूल उचित उपचार तथा जैन समाज मे सतत आयम्बिल प्रारम्भ।

(३) शुद्ध खद्दर वस्त्र का अधिक प्रचार एव सैकडो भाई-वहनो ने खादी पहनने की प्रतिज्ञा ली।

(४) जैन स्कूल का सूत्रपात।

(५) तीस सजोडो ने शीलव्रत स्वीकार किया।

अत्यन्त धर्मवृद्धि तथा आनन्द के साथ यह वर्षावास सम्पन्न हुआ। □

५।। दया के महासागर

सुले वाजार (बैंगलोर) की बात है, जहाँ हमारे चरितनायक, कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेशमलजी म० स० १९९४ का वर्षावास व्यतीत कर रहे थे। आपश्री की सत्प्रेरणा से पर्याप्त मात्रा मे दान-शील-तप-भावना रूप आराधना को अमर ज्योति जगमगाती रही। अनेको भाई-वहनो ने मिथ्यात्व का परित्याग किया।

एक दिन तपस्वीराज स्वाध्यायादि से निवृत्त हो शौचकार्य के लिए बाहर पधारे। पुन लौट रहे थे तब मार्ग मे एक देवी का मन्दिर आया, जहाँ वहुत से लोग खडे थे साथ ही कई बकरे रस्सियो से बँधे हुए चिल्ला रहे थे मानो—वे राहगीरो से अपनी मूक भाषा मे बोल रहे थे—"दयावानो! हमे बचाओ। हमारी रक्षा करो। हम निरपराध मारे जायेंगे। हम असहाय है, हम निष्क्रिय से है। हमारी सहायता करना तुम्हारा कर्त्तव्य हैं। हम पशु है तथा तुम मानव। तुम्हारे पास सत्ता है, स्वाधीनता है किन्तु हमारे पास न सत्ता है न स्वाधीनता, हम तो जन्म से ही पराधीनता की बेडियो मे जकडे हुए है। हे मानव! दया करो। हमे मौत के मुँह मे मत जाने दो। ये निष्ठुर हृदयी खून तथा मास के लोलुपी अपनी इन्सानियत को भूल गये है अत इन्हे सम्यक् राह दिखाओ। हे दयापुत्रो! इतनी सी पुकार तो सुनो, इतना भला तो करो।"

यदि कोई समझदार हो तो वह पशुओ की पुकार सुने तथा समझे। बकरो की करुणार्द्र पुकार हमारे चरितनायक तपस्वीराज के कानो मे पहुँची, उन्होने अपनी आँखो से देखा—बकरो के गलो मे पुष्पमालाएँ डाल रखी है, शरीर पर गुलाल आदि छिडक रखी है, वकरे भागना चाहते है पर दयाहीन लोगो ने उन्हे कसकर बाध रखे है। दया के महासागर तपस्वीराज से ऐसे समय मे कैसे चुप रहा जाता? उनके साथ कुछ भाई थे। उसी समय म० श्री उन लोगो के निकट जा पहुँचे जो बकरो को मारने की तैयारी कर रहे थे। बुलन्द आवाज से तपस्वीराज ने कहा—

"अरे अज्ञो! मनुष्य बनकर क्यो यह जघन्य कृत्य कर रहे हो? इन निर्बल, निरपराधो, असहाय पशुओ को मारना कितना अधम कृत्य है? जीभ के लोलुपी बनकर निकृष्ट कर्म करते समय भले ही तुम आनन्दानुभूति मान

लोगे पर जब ये ही कर्म भोगने पड़ेंगे तब तुम्हे कोई छुड़ाने नही आयेगा। हिंसा करने मे धर्म मानना भयकर भूल है। एक कांटा भी यदि किसी के लग जाता है तो वह उस दर्द को सहन नही कर पाता है। बेचारे इन निरपराध प्राणियो को मौत के घाट उतारना कैसा निन्दनीय काम है। तुम दूसरो की हिंसा करके अपने को सुखी बनाने का झूठा सपना मत लो। कहा है—जीव-हिंसा अपनी हिंसा है, जीवदया अपनी दया है।"

जिस प्रकार तुम्हे दु ख अप्रिय है, उसी प्रकार ससार के समस्त प्राणियो को दु ख अप्रिय है। ज्ञानियो के वचन हैं—

सव्वे पाणा पियाउया, सुहसाया, दुह-पडिकूला, अप्पियवहा पिय-जीविणो, जीविउ-कामा, सव्वेसि जीविय पिय ॥ (आचाराग सूत्र)

सभी प्राणी दीर्घायु चाहते है, सुख पसन्द करते है, दु ख से घवराते है। सभी को मरण अप्रिय है, जीवन प्रिय है। सब जीने की कामना करते है। ससार मे जीवन सवको प्यारा है।

इस प्रकार अत्यन्त ओजस्वी कन्नड भापा मे "अहिंसा परमो धर्म" का सार तथा "पाप करने वाला नारकीय दु खो को कैसे सहन करता है?" इसका मार्मिक विवेचन करके सुनाया। कन्नड भाषी लोगो के कान खुल गये, सभी हक्के-बक्के हो गये। सभी चित्रलिखित से खडे-खडे महाराज को देखते रहे, प्रत्युत्तर मे एक शब्द भी नही बोल सके। उसी समय बाबाजी म० के के चरणो मे गिरकर अपने जघन्य कृत्य की निन्दा करते हुए अपराध की माफी माँगी तथा सभी के सम्मुख हिंसा नही करने की शपथ ग्रहण कर तपस्वीराज की जयकार करने लगे।

तपस्वीराज के श्रीमुख से एक पद निकला जो सभी के हृदय मे बस गया, वह निम्न था—

दर्द कांटे का अगर तुझसे सहा जाता नहीं।
तो बेकसों पर ए सनम ! क्यो रहम दिल लाता नहीं ॥

जो मूक पशु थे, उन्हे साथ वाले श्रावक भाई अपने साथ ले आये। उसी समय बैंगलोर स्थानकवासी समाज ने उन मूक बकरो की रक्षा के लिए—"मैसूर राज्य जीव रक्षा प्रसारक सस्था" की स्थापना की, जो काफी समय तक जीव दया का काम करती रही। हजारो मूक जानवरो को अभयदान मिला। इस वर्षावास मे अनेको रचनात्मक कार्यों को सफलता मिली। ऐसा था दया के महासागर चरितनायक कर्नाटक केशरी जी म० का तप व त्याग।

६।। होती परीक्षा ताप मे ही······

स० १९९६ का वर्षावास नासिक नगर के भव्य प्रागण मे हमारे चरितनायक खद्दरधारी कर्नाटक केशरी जी म० व्यतीत कर रहे थे। तपस्वीराज जी की विकासोन्मुखी प्रतिभा व ओजस्वी प्रभाव मानव समाज के लिए गौरव का प्रतीक था। आपका पधारना स्थानकवासी जैन समाज के लिए वरदान-स्वरूप सिद्ध हुआ। जिस ओर आपश्री के कदम वढ जाते वे लोग अपना भाग्य फला इस प्रकार मानकर आनन्दविभोर हो जाते थे। आपश्री के त्यागमय सचोट सन्देश से समाज मे धर्म-ध्यान, तप-त्याग की झडी लग गई। नर-नारियो मे त्याग-प्रत्याख्यान की होडाहोड सी छा गई। मिथ्या क्रिया-कलापो के लिए हमारे चरितनायक जी म० जितने कठोर हो जाते थे, उतने ही कोमल भी थे समदृष्टि आत्माओ के लिए।

सन्ध्या का समय था। चरितनायकश्रीजी प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यानादि सभी आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो ध्यानासन हो गये। अचानक उन्हे ऐसा लगा कि—कोई स्वधर्मी भाई मुझे याद कर रहा है। जरा गहराई मे पहुँचे तो वे जान गये, उन्हे स्पष्टत दृष्टिगत होने लगा कि—"सिकन्द्राबाद निवासी एक धर्मनिष्ठ श्रावक सकट मे पडा हुआ है और कल सुबह विपपान करके अपने जीवन का अन्त करने का विचार कर बैठा है।" अपना ध्यान पूर्ण कर तपस्वीराज कमरे के बाहर पधारे। बाहर ही परम सेवानिष्ठ श्रावक छोटूलाल जी थे, उनको आपश्री ने फरमाया—

"श्रावकजी! तुम्हे एक श्रावक को अकृत्य करने से बचाना है। बोलो, तुम कर सकते हो?"

"गुरुदेव! आप जो काम फरमायेंगे, मैं करने को तैयार हूँ। मुझे स्पष्टतया फरमानें, किसे बचाना है? मेरे सामर्थ्य का कार्य है तो मुझसे जरूर होगा, आप शीघ्र फरमावें।" छोटूलालजी ने कहा।

"सिकन्द्राबाद मे अमुक श्रावक पर सकट आया हुआ है हालाकि उससे उनको कुछ भी होने वाला नही है पर वे बहुत घबरा गये है। क्योकि—उन्हे इज्जत का डर है। वे सुबह नवकारसी के बाद विषपान कर लेंगे, अत-एव तुम वहाँ पहुँचकर उन्हे इस जघन्य कृत्य करने से बचा सकते हो।" तपस्वीराज ने फरमाया, साथ ही यह भी कहा कि—"उन्हे यहाँ ले आना।"

उसी समय आत्म-विश्वास के साथ छोटूलालजी ने नासिक से

सिकन्द्राबाद के लिए प्रस्थान कर दिया। जव शुभ योग मिलता है तो हर परिस्थिति अनुकूल बन जाती है। उन्हे गाडी भी मिल गई तथा रात भर मे सिकन्द्राबाद पहुँच गये। वहाँ विराजित पूज्य श्री सहस्रमल जी म० सा० के माध्यम से उन्ही श्रावकजी से जा मिले। तपस्वीराज द्वारा कही हुई सारी जानकारी प्रस्तुत की तथा सेठजी की परिस्थिति देखी जो जैसो वावाजी म० ने बताई वैसी ही मिली। तपस्वीराज द्वारा फरमाई हुई वात जव छोटूलाल जी से मिली तो सेठजी चकित से रह गये तथा छोटूलाल जी ने जव वही बात देखी तो वे चित्रलिखित से रह गये। दोनो अपने मन मे सोचने लगे—"ऐसा आभास अप्रतिम (अनुपम) आत्माओ को ही होता है।"

विष की पुडिया छोटूलालजी ने अपने कब्जे मे की तथा सेठजी से कहा—"आप नासिक चलो, गुरुदेव के दर्शन हो जायेंगे साथ ही महान् पुरुषो के दर्शन से कार्य भी सिद्ध होगे।"

तब वे बोले—"जाना तो दूर, यहाँ से बाहर निकलना भी मेरे लिए अशक्य हो गया है। चारो ओर पहरेदार, गुप्तचर मुझे पकडने के लिए घूम रहे है। वारण्ट पर वारण्ट आये हुए है ऐसी हालत मे वाहर निकलना कैसे होगा ?"

"सद्गुरुनाथ का नाम लेकर निकल पडो, सभी कुछ सफल होगा।"

बस, दोनो बिना देर किये वहाँ से रवाना होकर नासिक पहुँचे।

सेवा मे उपस्थित होकर आगन्तुक भाई ने कहा—

"कृपासिन्धु! सरकारी झझट ने मुझे परेशान कर रखा है, मुझ पर सात वारण्ट मौत की तरह मडरा रहे है। बाहर निकलना मुश्किल हो गया। अनेको गुप्तचर पहरा दे रहे है। आपका ही प्रभाव मानूँगा सो यहाँ तक आ पहुँचा, नही तो बीच मे ही चल पडता। अपनी इज्जत-प्रतिष्ठा पर भयकर आघात लगते देख मेरा मन तडफ उठा। सकट मुक्ति के लिए मैंने २१ (आयम्बिल) दिन के आयम्बिल किये फिर भी कोई हल नही निकला तब अट्ठमतप (तेला) किया तथापि समस्या सुलझी नही, अन्त मे विपपान का विचार उत्पन्न हुआ, हालाकि—ऐसे कृत्य के विचार भी मुझ मे नही आने चाहिए किन्तु मजबूरी के वश हो गये। अब मुझे जो गलत विचार उत्पन्न हुए उसका क्या प्रायश्चित्त मिलना चाहिए ?"

"धार्मिक जीवन जीने वाले की ही परीक्षाएँ होती है। सकट आने पर ही धर्मी नर की कसौटी होती है। सोने को तपाया जाता है, जो कथीर है वह क्या तपन सहन करेगा ? तुम्हारे घबराने का पता मुझे लग गया तभी तो छोटूमलजी तुम्हारे पास आये। अब आर्तध्यान करने की जरूरत

नही। तुम सच्चे हो फिर कोई कितना ही वारण्ट लगा दे उससे कुछ भी होना जाना नही। धर्म के प्रताप से सभी ठीक होगा, चिन्ता न करते हुए सीधे यहाँ से कोर्ट (कचहरी) मे जाना। तुम्हारा वाल भी वाका नही होगा उल्टे सभी वारण्टो से मुक्त हो जाओगे।" तपस्वीराज ने फरमाया।

गुरुदेव की सम्यक् वाणी पर श्रेष्ठी को श्रद्धा थी, उसी समय आज्ञा शिरोधार्य कर नासिक से मागलिक श्रवण कर सीधे सिकन्द्रावाद कोर्ट मे आये।

अचानक कोर्ट मे आये देख सभी लोग हक्के-बक्के रह गये। सभी सोचने लगे—"आज निडरतापूर्वक कोर्ट मे और वह भी अकेले कैसे आ गये ?"

"तुम कल कहाँ थे ? कल गैरहाजरी क्यो रही ? क्या तुम्हे पता नही तुम्हारे मस्तक पर वारन्ट घूम रहे है और तुम कही ? तुम कल कहाँ थे ?" अधिकारी जज ने पूछा।

"मै अपने गुरुदेव के दर्शन के लिए नासिक गया हुआ था इस कारण कल हाजिर नही हो सका, इसकी मैं माफी चाहता हूँ।" सेठ ने बडी शिष्टता के साथ जबाब दिया।

सेठ की शिष्टतायुक्त सत्य तथा मिष्टवाणी का प्रभाव, उनका सम्यक् सौभाग्य, साथ ही गुरुदेव तपस्वीराज चरितनायक जी के निकले हुए वचनो की पूर्णता ही समझिये कि फैसला देने वाले जज साहब को क्या मोड आया, वे विचार करने लगे—

"शिष्ट, सद्‌गुणी, निष्कपटी, धर्मवान व्यक्ति पर इतने-इतने आरोप रूप वारन्ट ! निश्चय ही किसी धूर्त-दुष्ट-दुराग्रही व्यक्ति की हरकत है। यदि ऐसे व्यक्तियो को सजा मिलेगी तो मेरी ओर से न्याय नही सरासर अन्याय होगा।"

उसी समय जज ने सभी वारण्ट वापस लेते हुए अर्थात् रद्द कर दिये, साथ ही बोले—"तुम्हारे गुरुदेव का भला हो जो मुझे भी अचानक सद्‌बुद्धि आई। आज से आनन्द से रहो, घूमो, फिरो तथा व्यापार करो। अब से कोर्ट मे तुम्हे आने की आवश्यकता नही पडेगी।"

बस, फिर क्या था, सेठजी सद्‌गुरुनाथ की जय-जयकार करते हुए अपने घर सानन्द लौट आये।

सेठजी जीवन-मरण के सघर्ष मे उलझे हुए थे पर कर्नाटक केशरी, चरितनायक, खद्दरधारी, मुँहपत्ति तथा सम्यक्त्व प्रसारक बाबाजी श्री गणेशमल जी म० सा० की महती-सुनजर से सारी समस्या सुगमतापूर्वक सुलझ गई। सयमवन्त आत्माओ के वचनो मे महान् शक्ति होती है, इसको यह ज्वलन्त घटना है। □□

सम्यक् उपचार

"यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।" जैसी जिसकी भावना होती है वैसी उसे सिद्धि भी मिलती है। इसी सुवचन के अनुसार कुकनूर नगर का स्थानकवासी जैन श्रावक सघ चरितनायक कर्नाटक केशरी बाबाजी श्री गणेशमल जी म० सा० के चातुर्मास के लिये लालायित था। वहाँ के जैन क्या जैनेतर समाज मे भी म० श्री के प्रति अपूर्व भक्ति थी। सभी यही भावना लिए बैठे थे—कब तपस्वीराज का हमारे नगर मे चातुर्मासार्थ पधारना हो और कब उनकी सेवा—पर्युपासना का हमे स्वर्णिम अवसर प्राप्त हो? स० २००३ मे उनका अभीष्ट मनोरथ फला तो प्रसन्नता का मानो सागर ही उमड पडा।

यद्यपि तपस्वीराज के दरबार के नियम कठोर प्रतीत होते थे किन्तु भावी जीवन-निर्माण मे मगल वरदान स्वरूप थे। जैसे—मुँह पर मुख वस्त्रिका लगाना, खादी की पोषाक धारण करके सामायिकादि व्रत की आराधना एव प्रवचन-प्रार्थना मे सम्मिलित होना। तदनुसार ही कुकनूर सघ के आबाल-वृद्ध सभी प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठानो मे सोत्साह भाग लेने लगे। चरितनायक तपस्वीराज के प्रवचनो मे जैन-जैनेतर सहर्ष आने लगे। जिनशासन की प्रभावना मे आशातीत वृद्धि हो रही थी। कुकनूर नगर मे हो रहे धर्मध्यान की महिमा चारो ओर फैल रही थी।

उन्ही दिनो हैद्राबाद निवासी श्रमणोपासक श्री बक्तावरमलजी मूथा दर्शनार्थ कुकनूर कर्नाटक केशरी तपस्वीराज श्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उनके एक पैर को रोग ने बुरी तरह घेर रखा था, बहुत उपचार करवाये पर बीमारी पर नियन्त्रण नही पा सके। अन्ततोगत्वा सभी डाक्टरो की ओर से यही निष्कर्ष निकला कि—"पैर को कटवा देना चाहिये, क्योकि रोग असाध्य है यदि जल्दी न कटाया गया तो फिर अन्य रूप धारण कर लेगा।" जब उनके लिये ऐसा फैसला हो गया तो उन्होने पैर कटाना मजूर नही किया किन्तु दृढ विश्वास के साथ सोचा कि—"बाबाजी म० के चरणो मे जाने पर अवश्य रोग दूर होगा।" ऐसा निश्चय कर सेवा मे कुकनूर आ गये।

"कृपानाथ! धर्म-ध्यान यथावत् चलता है पर पैर के रोग ने मुझे ऐसा घेरा है कि—सभी कुछ छूट गया। साथ ही डाक्टरो ने कह दिया पैर कटाना

पडेगा। अब मैं आपके चरणो मे आया हूँ सभी ओर से निराश होकर। पैर न कटे और रोग से मुक्ति मिले ऐसा आपश्री जो भी रास्ता दिखायेंगे, मैं करने को सहर्ष तैयार हूं। आपश्री सम्यक् मार्ग के दाता है।"

"सर्वप्रथम जीवन भर के लिये धूम्रपान (वीडी, सिगरेट) का त्याग करो क्योकि—इसी से रोग को वढावा मिल रहा है, साथ ही खाने का सयम और तप-जप का सहयोग लो। अपने शुभ कृत्यो पर विश्वास रखो, पैर कटाने की आवश्यकता नही है, यह तो ऐसे ही ठीक हो जायेगा। तप-जप की औषध सर्वोपरि है, जब कर्म भी झर जाते है तो यह साधारण रोग विचारा क्यो नही भागेगा ?" तपस्वीराज ने फरमाया।

मूथा जी ने उसी समय तपस्वीराज के कथनानुसार त्याग-प्रत्याख्यान ले लिये। सश्रद्धा मागलिक सूत्र श्रवण कर पुन अपने घर लौट आये। खाने-पीने तथा लगाने की जितनी भी दवाइये थी, सभी एक ओर रख दी और जो उपचार तप-जप का तपस्वीराज ने वताया उसी के अनुसार चलने लगे।

जो भाषे बालक कथा जो भाषे मुनिराय।
जो भाषे वर कामणी एता न निष्फल जाय॥

बस, ऐसा ही सयोग समझिये, तपस्वीराज का फरमाना औषध क्या महाऔषध सिद्ध हुआ। कुछ ही दिनो मे मूथा जी के पैर की बीमारी के पैर उखड गये, धीरे-धीरे पैर ठीक होने लगा। डॉक्टर का उपचार काम नही आया किन्तु तपस्वीराज की शुभ वाणी, शुभ दृष्टि रूप औषध ने काम कर दिया। उनके वचनो मे यही अमृत था—तप-जप ही सच्ची औषध है, सम्यक् उपचार है।

कुछ ही दिनो के बाद मूथा जी पून स्वस्थ पैर से तपस्वीराज के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। वन्दना करते हुए बोले—

"गुरुदेव! आपश्री के बताये हुए मार्ग पर चलने से मेरे जीवन का नव निर्माण हो गया। आप अशरण के शरण, असहायो के सहायक, कृपासिन्धु है। आपकी शुभ नजर से मेरा रोग नष्ट हो गया। जिसके मस्तक पर आप जैसे महान सद्‌गुरुनाथ का हाथ हो उसके आधि-व्याधि-उपाधि निकट ही नही आ पायेंगी। आपश्री की तप-जप रूप महाऔषध ने मेरे पैर को बिल्कुल चगा कर दिया है। गुरु तो गुरु ही होते है। गुरु की आज्ञानुसार जो जीव चलता है उसके आनन्द ही आनन्द है। आपश्री के इस महान उपकार को मैं कभी नही भूलूँगा।"

मूथा जी की वात को सुनकर तथा उनके स्वस्थ पैर को देख सभी

लोग आश्चर्यचकित हो गये। सम्यक् उपचार का महाफल देख सभी तपस्वी-राज की जय-जयकार करने लगे। ऐसा था हमारे चरितनायक जी म० सा० का सम्यक् उपचार।

रामबाण औषधि

जालना (महाराष्ट्र) का ऐतिहासिक वर्षावास सम्पन्न कर कर्नाटक केशरी चरितनायक तपस्वीराज ने मनमाड नगर मे पदार्पण किया। मनमाड की जनता ने सैकडो-हजारो की तादाद मे आपश्री का सविनय-सभक्ति स्वागत किया एव स० २०१० का चातुर्मास अपने ही नगर मनमाड मे करने की विनती की। तपस्वीराज ने स्वीकृति दे दी।

"लाभ मे लाभ" के अनुसार तपस्वीराज की आज्ञा से साध्वीरत्ना श्री जडावकु वर जी महासती भी अपनी शिष्या परिवार से वही विराजित थी। चारो तीर्थों का पावन मेला लगा हुआ था। मनमाड जक्शन होने के कारण दर्शनार्थियो का अधिकाधिक आवागमन रहा तो धार्मिक प्रवृत्तियाँ भी बहुत कुछ हुई। तपस्वीराज की प्रवचन सभा मे बिना मुँहपत्ति जाना निषेध था इसीलिए जैन-जैनेतर सभी मुख पर मुँहपत्ति लगाकर प्रवचन सुनते। उस समय प्रवचन-मण्डप बडा रमणीय प्रतीत होता, वह भव्य छटा देखते ही बनती।

बहुत-सी औरते तपस्वीराज के चालू व्याख्यान मे ही घुनने लग जाती तथा जोर-जोर से बोलती—

"ओ बाबा! अब बस करो, हमे मत मारो, अरे मत जलाओ। तुम्हारा प्रभाव हमसे सहन नही होता है। अब इसके पास [हम कभी नही आयेंगी। हमे छोड दो, हमे मत बाँधो। अब नही आयेंगी।" इस प्रकार बोलकर अनेको प्रेतात्मा अपने आप छूट जाती।

इधर महासती वृन्द मे श्री एलमकु वर जी महासती थी जो बहुत बीमार अवस्था मे थी। उनका इलाज-उपचार बहुत करवाया पर वे ठीक नही हुई, उन्हे उस दवाई से बिल्कुल साता नही हुई, तब वे तपस्वीराज के निकट आकर वन्दनापूर्वक बोली—

"गुरुदेव! शरीर को रोग ने घेर रखा है। डॉक्टरो, वैद्यो की दवाई ले-लेकर परेशान हो गई पर रोग ने मेरा पिंड नही छोडा है, काया नीरोग नही हुई। अब क्या किया जाय? शरीर मे साता रहे तो ज्ञान-ध्यान-सेवा

आदि कार्य भी ठीक तरह से चल सके। कृपा करो गुरुदेव! मुझे रास्ता दिखाओ।"

"डॉक्टरो-वैद्यो के उपचार वन्द करो तथा जैसा मैं कहूँ वैसा करो तो धर्म के प्रताप से तुम बिल्कुल स्वस्थ हो जाओगे।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"गुरुदेव! आपश्री जैसा फरमायेगे वैसा मै करने को तैयार हूँ।" महासती जी ने कहा।

"मनमाड मे रहो वहाँ तक एकान्तर (उपवास) तपाराधना करे, पारणे मे गाय का दूध, लाल मिर्च रहित शाक-सब्जी तथा गेहूँ की रोटी के अलावा कुछ भी ग्रहण न करें। मुझे विश्वास है अतिशीघ्र तुम स्वस्थ हो जाओगे।" तपस्वीराज ने फरमाया।

गुरुदेव के कथनानुसार महासती श्री एलमकु वर जी ने किया, फलस्वरूप कुछ ही दिनो मे तबियत मे सुधार होने लगा। वेदना न्यूनतम होती चली गई, धीरे-धीरे स्वस्थ हो गये। डॉक्टर का भारी-भरकम इलाज व्यर्थ हो गया किन्तु तपस्वीराज की रामबाण-औषधि काम कर गई। इसे कहते है स्वस्थ अनुभव! □□

महामहिम, तपस्वी प्रवर, चरितनायक का चातुर्मास कराने को प्रत्येक क्षेत्र के सैकडो-हजारो नर-नारी लालायित रहते थे। वैसे ही वेजापुर (औरगाबाद) नगर भी उत्सुक था। अत्यधिक परिश्रम के पश्चात् उन्हे शुभ सफलता मिली और स० २०११ का चातुर्मास तपस्वीराज का वेजापुर मे हुआ।

"अधिकस्य अधिक फल" के अनुसार विदुषी श्रमणी श्री मानकु वर जी म० सा० ठाणा ४ ने भी गुरुदेव की सेवा मे ही चातुर्मास किया, इस कारण चार तीर्थ हो गये। श्रावको की चातक दृष्टि ने सफलता प्राप्त कर ही ली, जिससे सभी मे प्रसन्नता का पार नही रहा।

तपस्वीराज के हृदयस्पर्शी, मिथ्यात्वभेदक धर्मोपदेश से जैन-जैनेतर मे उत्साह तरगें तरगित होने लगी। धर्मध्यान-तप-जप की पावन गगा मे मानो उफान-सा आ गया। प्रवचन रूप सरिता मे स्नान कर अनेको भावुक आत्माएँ अपना कालुष्य धोकर जिनधर्म के सम्मुख हुईं। अन्य अनेको ने मिथ्यात्व का परित्याग किया।

उन दिनो नासिक निवासी श्रीमान् मिश्रीलाल जो कुमठ की धर्मपत्नी चमकूबाई ने तपस्वीराज की वाणी सुनी तथा वैराग्य भाव से रत हो बोली—

"गुरुदेव! मुझे आर्हती दीक्षा प्रदान करके कृत-कृत्य करावें। मेरी अन्तरात्मा ससार से उद्विग्न बन चुकी है। जन्म-मरण की बीमारी से उन्मुक्त होना चाहती हूँ। दीक्षा प्रदान करके मुझे धन्य बनावें। मेरी अन्तरेच्छा को पूरी करें।"

प्रत्युत्तर मे तपस्वीराज ने फरमाया—

"दीक्षा ग्रहण करना वास्तव मे अनुमोदनीय—अनुकरणीय है। अनन्त पुण्योदय प्रगट होते है, तभी ऐसा सम्यक् पुरुषार्थ करने का उत्तम भाव उत्पन्न होता है। साध्वी बनना श्रेष्ठ है, पर यदि वैराग्य भावो को और सुदृढ बनाने के बाद इस मार्ग पर निकलेंगे तो और अच्छा रहेगा। तप-जप मे अपने जीवन को विशेष रूप से जोड दो, जितने निर्माण-साचे मे जीवन ढलेगा उतना ही शुद्ध बनेगा, कुछ दिन ठहर कर साध्वोचित गुणो का

आदि कार्य भी ठीक तरह से चल सके। कृपा करो गुरुदेव! मुझे रास्ता दिखाओ।"

"डॉक्टरो-वैद्यो के उपचार बन्द करो तथा जैसा मैं कहूँ वैसा करो तो धर्म के प्रताप से तुम बिल्कुल स्वस्थ हो जाओगे।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"गुरुदेव! आपश्री जैसा फरमायेंगे वैसा मै करने को तैयार हूँ।" महासती जी ने कहा।

"मनमाड मे रहो वहाँ तक एकान्तर (उपवास) तपाराधना करे, पारणे मे गाय का दूध, लाल मिर्च रहित शाक-सब्जी तथा गेहूँ की रोटी के अलावा कुछ भी ग्रहण न करें। मुझे विश्वास है अतिशीघ्र तुम स्वस्थ हो जाओगे।" तपस्वीराज ने फरमाया।

गुरुदेव के कथनानुसार महासती श्री एलमकु वर जी ने किया, फलस्वरूप कुछ ही दिनो मे तबियत मे सुधार होने लगा। वेदना न्यूनतम होती चली गई, धीरे-धीरे स्वस्थ हो गये। डॉक्टर का भारी-भरकम इलाज व्यर्थ हो गया किन्तु तपस्वीराज की रामबाण-औषधि काम कर गई। इसे कहते हैं स्वस्थ अनुभव! □□

महामहिम, तपस्वी प्रवर, चरितनायक का चातुर्मास कराने को प्रत्येक क्षेत्र के सैकडो-हजारो नर-नारी लालायित रहते थे। वैसे ही वेजापुर (औरंगाबाद) नगर भी उत्सुक था। अत्यधिक परिश्रम के पश्चात् उन्हे शुभ सफलता मिली और स० २०११ का चातुर्मास तपस्वीराज का वेजापुर मे हुआ।

"अधिकस्य अधिक फल" के अनुसार विदुषी श्रमणी श्री मानकुवर जी म० सा० ठाणा ४ ने भी गुरुदेव की सेवा मे ही चातुर्मास किया, इस कारण चार तीर्थ हो गये। श्रावको की चातक दृष्टि ने सफलता प्राप्त कर ही ली, जिससे सभी मे प्रसन्नता का पार नही रहा।

तपस्वीराज के हृदयस्पर्शी, मिथ्यात्वभेदक धर्मोपदेश से जैन-जैनेतर मे उत्साह तरगे तरगित होने लगी। धर्मध्यान-तप-जप की पावन गगा मे मानो उफान-सा आ गया। प्रवचन रूप सरिता मे स्नान कर अनेको भावुक आत्माएँ अपना कालुष्य धोकर जिनधर्म के सम्मुख हुई। अन्य अनेको ने मिथ्यात्व का परित्याग किया।

उन दिनो नासिक निवासी श्रीमान् मिश्रीलाल जी कुमठ की धर्मपत्नी चमकूबाई ने तपस्वीराज की वाणी सुनी तथा वैराग्य भाव से रत हो बोली—

"गुरुदेव! मुझे आर्हती दीक्षा प्रदान करके कृत-कृत्य करावे। मेरी अन्तरात्मा ससार से उद्विग्न बन चुकी है। जन्म-मरण की बीमारी से उन्मुक्त होना चाहती हूँ। दीक्षा प्रदान करके मुझे धन्य बनावें। मेरी अन्तरेच्छा को पूरी करें।"

प्रत्युत्तर मे तपस्वीराज ने फरमाया—

"दीक्षा ग्रहण करना वास्तव मे अनुमोदनीय—अनुकरणीय है। अनन्त पुण्योदय प्रगट होते है, तभी ऐसा सम्यक् पुरुषार्थ करने का उत्तम भाव उत्पन्न होता है। साध्वी बनना श्रेष्ठ है, पर यदि वैराग्य भावो को और सुदृढ बनाने के बाद इस मार्ग पर निकलेंगे तो और अच्छा रहेगा। तप-जप मे अपने जीवन को विशेष रूप से जोड दो, जितने निर्माण-साचे मे जीवन ढलेगा उतना ही शुद्ध बनेगा, कुछ दिन ठहर कर साध्वोचित गुणो का

अभ्यास करो जिससे सम्यक् सफलता मिलेगी और यदि जल्दी भी लेना है तो आचार्य प्रवर श्री आत्मारामजी महाराज सा० जो वर्तमान मे लुधियाना विराज रहे है, उनकी ओर से दीक्षा-आज्ञा ले आओ फिर मैं दीक्षा दे सकता हूँ।"

दीक्षा का दृढ सकल्प करने वाली वहन ने गुरुदेव की आज्ञा स्वीकार की। कुछ दिनो तक अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति मे मर्यादा करती चली गई। जब सन्तोष-जनक साधनामय जीवन की पृष्ठभूमि वन गई तब दीक्षा की आज्ञा लेने लुधियाना आचार्य प्रवर श्री आत्मारामजी महाराज के चरणो मे पहुँच गई। वैरागिन वहन को विनय तथा सयम लेने की निष्ठा को देखकर आचार्य प्रवर बडे प्रभावित हुए, वाई की अन्तर्भावना मे उत्तरोत्तर उत्तम अभिवृद्धि देखकर आचार्य प्रवर श्री जी ने दीक्षा देने की आज्ञा प्रदान कर दी। दीक्षार्थी वहन पुन तपस्वीराज के चरणो मे लौट आई।

दीक्षा देने की आज्ञा आचार्य प्रवर की मिल गई, यह जानकर बेजा-पुर निवासियो को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उन्होने तपस्वीराज से प्रार्थना की कि—

"इस दीक्षा का स्वर्णिम अवसर हमे दिया जाय अर्थात् हम लोगो की प्रबल भावना है कि—यह दीक्षा हमारा बेजापुर सघ करे।"

"आप लोगो की भावना श्रेष्ठ है, किन्तु आचार्य प्रवर ने दीक्षा देने का दिन (मुहूर्त) वि० स० २०१२ की वैशाख शुक्ला १२ गुरुवार निकाला है, इतने समय मेरा यहाँ ठहरना अशक्य है।" तपस्वीराज ने फरमाया।

दीक्षा की आज्ञा तपस्वीराज से बेजापुर सघ को नही मिली पर चातुर्मास बडे ही आनन्द के क्षणो मे धर्माराधना-तप-जप आदि अनुष्ठानो के साथ पूर्ण हुआ। तपस्वीराज का विहार बेजापुर से बडे ठाट के साथ हो गया। वहाँ से आपश्री छोटे-बडे अनेको गाँवो-नगरो मे भगवान महावीर स्वामी का सन्देश पहुँचाते हुए महानगर पूना पधारे। महासती श्री मानकुवर जी महाराज भी पूना पधारी।

पूना श्रीसघ मे खुशियो से ओत-प्रोत त्यौहार छा गया। उन्हे अना-यास कर्नाटक केशरी तपस्वीराज की स्वर्णिम सेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ। आबाल-वृद्ध, नर-नारी मे अभिनव चेतना-स्फुरणा का सचार हुआ। स्थानीय सघ के हजारो नर-नारियो ने आपश्री का भाव-भीना स्वागत किया।

उन दिनो मेवाड सम्प्रदाय के प० रत्न श्री मागीलाल जी महाराज ठाणा ३ तथा पजाब से पधारे हुए श्रद्धेय श्री छोटालाल जी महाराज, श्री

सुशील मुनिजी महाराज अलग-अलग धर्मस्थानक मे विराजित थे, उनके साथ तपस्वीराज का उदार दृष्टिकोण रहा। पारस्परिक स्नेह-सौजन्यतापूर्ण मैत्री व्यवहार मुनि मण्डल का काफी दिनो तक रहा, प्रवचन भी साथ ही होते रहे। दीक्षोत्सव का कार्यक्रम पूना सघ के आग्रह पर यहाँ रखा गया। जैनेन्द्री दीक्षा पर अनेको मुनि-महासति वृन्द सम्मिलित हुए। तपस्वीराज के अत्यधिक आग्रह पर दीक्षा पाठ्य विधि श्री सुशील मुनि जी महाराज के गुरु प्रवर श्री छोटालालजी महाराज द्वारा सम्पन्न हुई।

तपस्वीराज चरितनायक, प० प्रवर श्री छोटालालजी महाराज, प० श्री मागीलालजी महाराज आदि के पधारने से पूना नगर मे त्रिवेणी सगम सा ठाट लग गया। श्री स्थानकवासी जैन सघ तीर्थ का प्रतीक बन गया। विभिन्न सम्प्रदायो के मुनि होते हुए भी प्रेम-स्नेहमय मिलन बडा ही अभूत-पूर्व रहा। उस मधुर मिलन का प्रभाव तत्कालीन सामाजिक जीवन की भूमिका पर अच्छा पडा। समाज स्नेह-सरिता के रस से तरबतर हो गई। तपस्वीराजश्रीजी की मिलनसरिता, उदारता, विशालता तथा अवसरज्ञता पर सभी लोग बडे प्रभावित हुए, पूना सघ मे ही नही आस-पास मे इसकी प्रतिक्रिया बहुत अच्छी हुई। सभी लोग यही बोलते रहे—तपस्वीराज कठोर हैं तो बहुत और सत जीवन के प्रति मृदु भी बहुत। कितनी ऋजुता, सरलता, महानता, उदारता, सहजता? इसे कहते है सत। "वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।"

जब तपस्वीराज, कर्नाटक केशरी जी महाराज सा० ने पूना से विहार किया तब दोनो मुनि सघ भी आपके साथ था। हजारो भावुक धर्मप्रेमियो का विशाल समूह। उसमे भी एक विशेषता थी और वह यह कि—अधिकाश भाई-बहनो के मुँह पर स्थानकवासीत्व को प्रगट करने वाला चिह्न "मुँहपत्ती" लगी हुई थी। जुलूस बडा ही नयनाभिराम लग रहा था। मुँहपत्ती से शोभायमान विशाल जुलूस को देखकर श्री सुशील मुनि जी महाराज को अत्यन्त आश्चर्यानुभूति हुई, उन्हे कहना पडा—

"मैंने अपने जीवन मे ऐसा अनुशासित जुलूस पहली बार देखा है।"

अन्य मुनि वृन्द ने भी कहा—"धन्य है तपस्वीराज को! गणेश बाबा के ठाट निराले ही है। मुँहपत्ती का प्रचार जितना आप कर रहे है, कर पायेंगे, उतना हम नही कर सकेंगे। आपका आत्मिक बल अनूठा ही है। आपकी समानता किसी विरले सत पुरुष से ही होगी। आपका परिभ्रमण, मिथ्यात्व निकन्दन सन्देश ने जन जीवन को बहुत जागृत किया है। इसी

प्रकार मुँहपत्ती, खादी एव सम्यक्त्व का प्रचार करते रहे ऐसी हमारी इच्छा है।"

सद्गुरुनाथ का शरण

स० २०१२ की बात है हमारे चरितनायक तपस्वीराज ने मालेगॉव (महाराष्ट्र) नगर मे वर्षावास किया। इस वर्ष आपश्री की पर्युपासना, सेवा एव आगमिक ज्ञान लाभ प्राप्त करने हेतु महासती श्री जडावकुँवरजी महाराज अपनी शिष्या मण्डली सहित पूना से उग्र विहार करती मालेगॉव पधारी तथा चातुर्मास भी यही किया। सेवा-भक्ति-अनुनय का जैसा सकल्प उन्होने सँजोया वैसा उन्हे लाभ भी मिला।

चातुर्मास के अन्तराल मे धर्म, ध्यान, सामायिक, सवर आदि तपाराधना बहुत अच्छी रीति से चलती रही, कई दिनो तक शान्ति जाप का ठाट लगा रहा। हजारो दर्शनार्थी भाई-बहनो ने तपस्वीराज एव महासतियो के दर्शन एव प्रवचन का पावन लाभ प्राप्त किया।

बेंगलोर निवासी धर्मप्रेमी श्रीमान् अनराजजी साखला तपस्वीराज के दर्शनार्थ परिवार सहित आये हुए थे। एक दिन सन्ध्या के समय सॉखलाजी एव उनकी धर्मपत्नी चादकुँवर बाई प्रतिक्रमण करने मे लगे थे, इधर सॉखलाजी का दोहिता अर्थात् उनकी लडकी का लडका जिसकी उम्र लगभग ११ महीने की होगी, उसकी अचानक तबियत खराब हो गई। कुछ ही देर मे उस बच्चे ने हिलना-डुलना भी बन्द कर दिया, मानो निश्चेष्ट सा हो गया। बालक की दयनीय दशा को देख बहुत से लोग एकत्रित हो गये।

कोई क्या, कोई क्या रोग बताने लगे—'जितने मुँह उतनी बात' होने लगी। एक बोला—"कही इस बालक को जिन्दी डायन तो नही लग गई, ऐसा हुआ तो फिर बालक बच नही पायेगा।" तब तक तो साखलाजी भी आ गये। उन्होने भी बालक को देखा, उसी समय बालक को अपनी गोद मे लिया। उसकी नाडी देखी, उन्हे कुछ भी सार नजर नही आया। साखला जी की धर्मपत्नी सौ० चाँदकुँवरबाई ने कहा—

"बच्चे को गुरुदेव के चरणो मे ले जाओ, गुरुदेव की कृपा से सब कुछ ठीक होगा। सद्गुरुनाथ शरणा है, बालक का कुछ भी विगडने वाला नही।"

"पर रात्रि का समय है, गुरुदेव अभी ध्यान मे विराज गये होगे, उन्हे तकलीफ देना भी तो उचित नही है।" सेठजी ने कहा।

"आप कोई प्रकार का विचार न करते हुए देर न करके अतिशीघ्र गुरुदेव के चरणो मे पहुँच जाओ।" सेठानीजी ने कहा।

बच्चे को लेकर साखलाजी गुरुदेव के श्रीचरणो मे जा पहुँचे।

तपस्वीराज का ध्यान पूर्ण हुआ, तब उन्होने साखलाजी से कहा—

"रात्रि मे पुन कैसे आना हुआ ?"

"कृपानाथ! मेरा दोहिता 'सूरजकुँवर' का यह लडका है, अभी ग्यारह महीने का ही है। आज इसे क्या हो गया ? इसकी हलन-चलन सारी क्रियाएँ बन्द हो गई। यह मृततुल्य बन गया। आपश्री के चरणा का स्पर्श हो जाये, इसीलिए मैं आया हूँ।"

"अच्छा किया सो जल्दी ले आये।" इतना कहने के बाद तपस्वीराज ने कुछ स्तोत्र गिनना प्रारम्भ किया। तप का महाचमत्कार ही मानिये, थोडी ही देर मे बच्चे की हलन-चलन की क्रिया पुन पूर्ववत् प्रारम्भ हो गई। उसके तन मे जो रोग था, वह छूमन्तर हो गया।

"ले जाओ, बच्चा पुण्यवान है, आगे जाकर अच्छा निकलेगा।" तपस्वीराज ने फरमाया।

अल्प समय मे ही तपस्वीराज की महाकृपा से बच्चा स्वस्थ हो गया। साखलाजी का दोहिता जिसका नाम सोहनराज है।

महात्याग एक चमत्कार

"सन्त बडे परमारथी मोटो जाको मन्न।" के अनुसार भगवान महावीर के उपासक श्रमण सदैव उदार रहे है। जहाँ धर्मगगा प्रवाहित होती रहे वहाँ उनका मन विशेष रूप से लगता है। बस, इसी तरह खद्दरधारी, सम्यक्त्व धर्म प्रसारक, चरितनायक श्री गणेशमलजी महाराज चिंचवड का चातुर्मास पूर्ण कर विहार करके परभणी जिला (मराठवाडा) मे पधारे।

छोटे-बडे अनेको गाँवो-नगरो मे जिधर भी आपश्री का पदार्पण होता, जैन-जैनेतर जनता आपके दर्शनो को एव प्रवचन सुनने को दौड पडती। इस तरह विहार करते हुए आप 'गगाखेड' नामक छोटे से गाँव मे पधारे, जहाँ जैनियो के बहुत कम घर थे। सन्त जीवन की यही तो विशेषता है—वे जगल मे भी अपने ज्ञान-ध्यान-क्रिया मे मग्न और शहर किवा गाँव मे होगे तो वहाँ भी उसी तरह अपने आत्म-चिन्तन मे सलग्न रहते है।

गगाखेड का एक भाविक (भव्यात्मा) भाई शिवराम पटेल जिसको अन्तर् इच्छा जागृत हुई कि बावाजी महाराज हमारे यहाँ चातुर्मास कर लेवें तो हमारी आत्मा को विशेष रूप से सद्ज्ञान मिल सके। कहा भी है—'यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।' भावना के अनुरूप फल की निष्पत्ति भी मानी गई है। शिवराम पटेल तथा अन्य लोगो की प्रबल भावना को देख

हमारे चरितनायकजी महाराज ने स० २०१४ का चातुर्मास गगाखेड ही कर लिया। "साधु भूखे भाव के" इस कहावत के अनुसार भक्तो की पवित्र भावना को ध्यान मे रखने वाले, एकान्तर तपधारी, कर्नाटक केशरीजी महाराज ने गगाखेड निवासियो की इच्छा पूर्ण कर दी। उनकी दृष्टि मे छोटे-वडे गाँव का महत्त्व नही था, महत्त्व था धार्मिको का।

हृदयस्पर्शी धर्मोपदेश होने लगा। गगाखेड को जनता तो आती ही थी साथ ही निकटवर्ती वहुत से गाँवो के नर-नारी आने लगे। वावाजी महाराज का प्रताप ही जानिये—छोटे से गाँव मे भी मेला लगने लगा। आपके उपदेश से अन्य अनेको तो प्रभावित हुए ही किन्तु शिवराम पटेल विशेप रूप से धर्म एव धार्मिक क्रियाओ के प्रति आकृष्ट हुए। तपस्वीराज के प्रेरणास्पद प्रवचनो ने उनके अन्तर्चक्षु खोल दिये। उनकी सुप्त आत्मा जागृत हो गई। ससारी पौद्गलिक प्रपचो मे जो आसक्ति थी वह कम हुई। उन्हे हिताहित का ज्ञान हुआ। सोच लिया—"ये महान् सन्तरत्न नि स्वार्थ भाव मे हमारे हितैषी वनकर हमे सद्शिक्षा देते हैं, इसमे निश्चित् हमारी आत्मा का कल्याण रहा हुआ है, किन्तु जव तक कुछ नियम नही अपनायेंगे तव तक कुछ भी होने वाला नही।" महाराज ने ठीक ही कहा है—"श्रुतज्ञानस्य फल विरति।" अत अपने निश्चयानुसार शिवराम पटेल ने तपस्वीराज से निम्न नियम स्वीकार किये—

(१) जीवन पर्यन्त सचित्त पानी नही पीऊँगा।
(२) शुद्ध खादी के कपडे पहनूँगा। मील के वस्त्र काम मे नही लूँगा।
(३) माता के हाथ का वना हुआ या धर्मपत्नी के हाथ का भोजन करूँगा, जो विवेकपूर्वक बनाया गया हो।
(४) आजीवन व्रह्मचर्य व्रत की पालना-आराधना करूँगा।
(५) जव तक आपश्री यहाँ विराजमान रहेगे वहाँ तक गाँव के वाहर की नदी पर किसी को भी मच्छी नही मारने दूँगा।
(६) सदैव एक सामायिक करूँगा, उसमे णमो अरिहताण का जाप करूँगा किन्तु किसी मे वात नही करूँगा।

सन्त-गुणानुरागी शिवराम पटेल के नियम की वात सारे नगर मे फैल गई फिर भी विशेप जानकारी के लिए पटेल ने सारे नगर मे सूचना करवा दी—

"जव-तक तपस्वीराज मुनि-महात्मा अपने गाँव मे विराजित रहे तव

तक नदी पर जाकर कोई भी मच्छी न मारे। यदि बात को न मानकर मच्छी मारने की कोई कुचेष्टा करेगा तो उसका फल अच्छा नही होगा।"

जिसने भी सुना वे सभी तपस्वीराज तथा शिवराम पटेल का गुणगान करने लगे।

एक दिन की बात है—एक हठाग्रही महामिथ्यात्वी जिसे हिंसक कृत्य मे ही आनन्द आता था, रात्रि के समय जब सभी लोग निद्राधीन थे, मच्छी पकडने का जाल लेकर नदी पर पहुँच गया। पापी व्यक्ति अँधेरे मे पाप करता है अपने को सभी लोगो की आँखो से बचाते हुए किन्तु पाप दब नही सकता। कुसकल्प से प्रेरित होकर जहाँ गहरा पानी था वहाँ जाल डाला। "विनाशकाले विपरीत बुद्धि। जाल मे कोई भारी भरकम जन्तु आ गया, आदमी अपने को सम्भाल नही पाया, क्योकि कृशकाय था अत जन्तु ने उसे पानी मे खीच लिया। वह हठाग्रही अपने को बचाने मे असमर्थ रहा, वही पानी मे उसे अपने प्राण खोने पडे। कुछ क्षणो मे ही जीवन लीला समाप्त हो गई।

"पडंति नरए घोरे जे नरा पावकारिणो।" भगवान महावीर की वाणी बिल्कुल यथार्थ है। "दुष्कर्म करने वाली आत्माएँ नरक की घोर यातनाएँ प्राप्त करती है।"

प्रात काल होने पर जब कुछ लोग उधर से निकले तब उस मृत आत्मा के पैर के जूते पडे देखकर खोजबीन की तो पानी मे से जाल सहित निकालने पर लोगो ने जान लिया कि "इसने अँधेरे मे जघन्य पाप किया उस पाप ने ही इसे दबोच लिया।" सभी उसे धिक्कार साथ ही उस प्रत्यक्ष महा चमत्कार को देख बडे आश्चर्यचकित से रह गये।

जैन-जैनेतर समाज तपस्वीराज के तप-त्याग के प्रभाव से अत्यधिक प्रभावित हुई। कई लोगो ने प्रत्याख्यान लिए—"न तो मछली पकडेगे और न ही बुरी चीज खायेंगे। इस प्रकार त्याग-प्रत्याख्यान के साथ जिनशासन की अच्छी प्रभावना हुई। □□

सम्यक् मार्गदर्शक

मालेगाँव का चातुर्मास पूर्णकर तपस्वीराज मनमाड होते हुए लासलगाँव पधारे। यहाँ श्रद्धेय श्री कल्याणऋषि जी महाराज आदि मुनि-मण्डल से अत्यन्त सौहार्द्रपूर्ण मिलन हुआ। काफी दिनो तक आपश्री यही विराजे। आपश्री के प्रभावोत्पादक प्रवचन ने जनता मे काफी धर्म-ध्यान हुआ। जिन शासन की प्रभावना वढाने वाले महान् सत जब किसी क्षेत्र मे पधार जाते है तो उस क्षेत्र का भाग्य खुल जाना स्वाभाविक है। हमारे चरितनायक, कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, तपस्वीराज, वावाजी श्री गणेशलालजी महाराज का जीवन भी ऐसा ही ज्योतिर्मान था।

जिनधर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए तपस्वीराज विहार करते हुए टाकली, घोटी, इगतपुरी, कल्याण आदि अनेको गाँवो-नगरो को पावन करते हुए पनवेल पधारे। यहाँ तपस्वी श्री लालचन्द जी महाराज, श्री कानमुनि जी, श्री मानमुनि जी, श्री पारसमुनि जी ने तपस्वीराज के दर्शन किये। यद्यपि तपस्वीराज अकेले थे तथापि चारो मुनिवरो ने आपश्री को सश्रद्धा-सभक्ति सेवा, पर्युपासना करके अनुपम लाभ उपार्जन किया। सघ तथा सतो के अत्याग्रह पर एक सप्ताह पर्यन्त आप पनवेल विराजित रहे। शातिजाप पूर्ण होने के वाद आपश्री ने विहार किया, पनवेल से खडाला घाट होते हुए आप लुणावला पधारे।

वैसे हमारे चरितनायक तपस्वीराज प्रारम्भ से ही अपने धर्मोपदेश मे मिथ्यात्व (कुदेव, कुगुरु तथा कुधर्म) पर निर्भीकतापूर्वक सचोट प्रहार करते रहे है, अपने सम्पर्क मे आने वाले सैकडो-हजारो नर-नारियो का मिथ्यात्व छुडाकर उन्हे सम्यक्त्ववान वना दिया। मिथ्यात्व से मुक्ति दिलाने का श्रेय तपस्वीराज को पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त था। कई मानवो के घरो मे रहे हुए चादी-सोने, पीतल, ताँवे से निर्मित देवी-देवता की मूर्तियाँ, पगलिए उन लोगो ने लाकर आपश्री के चरणो मे रख दिये।

यदि कोई पूछता—हम इन को मान्यता नही देंगे तो ये हमे तकलीफ तो नही पहुँचायेंगे ?

तपस्वीराज फरमाते—आप कोई भी देवो, देवताओ से घवरावे नही, डरे नही, ये तुम्हारा कुछ भी विगाड नही कर सकते। कोई कुछ भी करेगा

तो उसकी जवाबदारी मेरी रहेगी। आप तो अन्धश्रद्धा से मुक्ति पावें, जीवन का सर्वोत्तम यही लाभ है—"सम्यक्त्व धर्म मे आना।"

लुणावला नगर मे पधारने के बाद उन्होने अर्थात् तपस्वीराज ने एक अभिग्रह धारण किया, उसे आपने व्याख्यान मे ही प्रगट कर दिया कि—

"अब से मैं मिथ्यात्व (कुदेव-कुगुरु-कुधर्म) का सेवन करने वालो के हाथ से आहार-पानी ग्रहण नही करुंगा।"

लोगो ने पूछा—"गुरुदेव! मिथ्यात्व क्या होता है? कुदेव, कुगुरु तथा कुधर्म का तात्पर्य जब तक हम समझ नही पायेंगे तब तक क्या छोडना? क्या स्वीकार करना कैसे समझेंगे? अतएव आपश्री तीनो को व्यवस्थित रूप से हमे समझाने की कृपा करें।"

मिथ्यादर्शन अपने आप मे भयकर विष है तथा सम्यक्दर्शन (सुदेव—अरिहत, सुगुरु—निर्ग्रन्थ, सुधर्म—अहिंसामय) अमृत है। मिथ्यात्व आत्मा का अहित करता है किन्तु सम्यक्दर्शन हितावह है। सम्यक्त्ववान की दृष्टि मे अमृत है, वह ससार मे रहता हुआ भी अमृत की खोज करता है अर्थात् सत्य की ओर बढता है, विष मे से भी अमृत को निकाल लेता है। भोग-रूप कीच (गन्दगी) मे रहता हुआ भी सम्यक्दृष्टि, सम्यक्त्व रस का आस्वादन कर ही लेता है। उसके हृदय मे वैराग्य-रूप अकुर प्रस्फुटित हो ही जाता है। जबकि—मिथ्यादृष्टि अमृत को विषरूप मानकर उसे उगल देता है अर्थात् सम्यक्त्व प्राप्ति-स्थान के निकट पहुँचकर पुन उससे मुँह मोड लेता है।

ससार मे अमृत-पान करने वाले भी है तथा विष-पान करने वाले भी। दोनो की दृष्टि मे भिन्नता होने से उनके जीवन, व्यवहार, आचार, विचार मे भी भिन्नता आ ही जाती है। सम्यक्दृष्टि जीव विनाश को विकास के रूप मे परिणत कर डालता है जबकि—मिथ्यादृष्टि आत्मा विकास की राह छोड विनाश की ओर अपने कदम बढाता है। विष को अमृत बनाने के लिए सम्यक्दर्शन की आवश्यकता है। यदि दृष्टि मे सम्यक्त्व न आया तो भले गृहत्यागी-वनवासी या गृहवासी हो दोनो मे कोई अन्तर नही रहता। जिसके मन मस्तिष्क मे कुदेव-कुगुरु-कुधर्म का विष भरा है वह ससार मे अमृत कैसे पायेगा? अमृत को प्राप्त करने वाला सम्यक्त्वधारी ही होगा।

धर्मबुद्धि से दीपमाला, होली, दशहरा, नवरात्रि, नागपचमी, शीतला सप्तमी आदि मनाना, पूजा करना, पाषाण की बनी मूर्ति या किसी धातु,

काष्ठ की मूर्ति आकार विशेष मे देवाधिदेव अरिहत की कल्पना करना बिल्कुल मिथ्या है। अन्धानुकरणपूर्वक सावद्य प्रवृत्ति जैसे—धूप, दीप जलाना, फल-फूल पत्तियाँ चढाना, भोग-बलि देना, निर्जीव मूर्ति के सामने नाच-गान करना मिथ्यात्व है। जन्म-मरण की परम्परा को बढाने के साधन है।

कुगुरु—जिनमे गुरु योग्य गुण नही हो जैसे—बाबा, साधु, सन्यासी, योगी, फकीर, दण्डधारी, जटाधारी, जिनका जीवन व्यसनो के दल-दल मे फँसा हुआ है। लोभ-मोह-कषाय तथा लोकैषणा के दास बने हुए है। धर्म को ओट मे मिथ्या आडम्बर फलाकर हिंसाजनक कुप्ररूपणा करके भोले-भाले नर-नारियो को नरक जसे दु ख-कूप मे झोकने मे जो सहायक होते है। जिनका मुँह हमेशा सावद्य भाषा का प्रयोग करने मे तत्पर है। जिनकी साधना-आराधना विवेकहीन, अर्थहीन है, ऐसे गुरु गुरुपद को लज्जित करते हे। स्वय मझधार मे गोते खाते है, अन्य निकट आने वाले अज्ञ भक्तो को मझधार मे भटकाते है, उन्हे कुगुरु कहा गया है।

कुधर्म—हिंसा-झूठ-चोरी-शिकार - कुशील - अनैतिकता - विश्वासघात-माया-मूर्च्छा (आसक्ति भाव)-लोभ-मिथ्या-निन्दा इत्यादि अधर्म की पर्याय है। देव-गुरु-धर्म के नाम पर हिसक प्रवृत्ति सरासर अधर्म है, कुधर्म है। मूक प्राणियो को बलि चढाना अधर्म है। दूषित प्रवृत्तियो मे धर्म की कल्पना करना, उनमे धर्म मानना ही तो मिथ्यात्व है।

भव्यात्माओ! अरिहत देव, गुरु निर्ग्रन्थ सुसाधु (शुद्ध आचार, विचार-वान, स्थानकवासी साधु) और सर्वज्ञ अरिहत प्रणीत तत्व ही सच्चा धर्म है। इसी को सम्यक्श्रद्धान कहा है। उक्त रत्नत्रय की सम्यक् रूप से आराधना-साधना करने वाला जीव स्व-पर का परम हितैषी होता है।

जो कुदेव, कुगुरु तथा कुधर्म को राह छोडकर सुदेव-सुगुरु-सुधर्म को स्वीकार करता है वही अपने जीवन को महान् बनाता है। अब तो आप लोग समझ गये होगे? मिथ्यात्व एव सम्यक्त्व का मर्म? तपस्वीराज ने इस प्रकार जगता को उद्बोधन दिया।

सैंकडो नर-नारियो ने हमारे चरितनायक जी म० के सम्यक् सदेश को धारण किया अर्थात् मिथ्यात्व का परिहार कर सम्यक्त्व धर्म स्वीकार किया। द्रव्य-पूजा को छोड भाव-पूजा (अरिहत देव, सुसाधु-सुगुरु, अहिंसामय धर्म) का आलम्बन श्रेष्ठ जाना तथा उसे जीवन के साथ जोडा। इस प्रकार जिनशासन की अत्यधिक प्रभावना हुई। यहाँ से आपश्री कई छोटे-मोटे

तपस्वीराज अपना वर्षावास परभणी ही व्यतीत कर रहे थे। आपश्री के तप त्याग का प्रभाव आस-पास ही नही दूर-दूर तक फैला हुआ था। वे कोई जादूगर नही, न कोई प्रपची थे, उनका एक ही मन्तव्य-वक्तव्य रहता था—"जो त्याग भूमिका की ओर बढेगा वह शरीर, धन, सत्ता से भी स्वस्थ रहेगा तथा कर्मपटल से मुक्ति भी उसी को मिलेगी।" कइयो को मिथ्यात्व के, सप्त-व्यसन के, जमीकन्द आदि अनेक वस्तुओ के त्याग जबरन नही बल्कि उद्‌बोधन द्वारा जागृत हुई आत्माओ को कराकर उन्हे सुखी जीवन जीने की राह दिखाई।

एक दिन एक गुजराती बहन अपने नौजवान लडके को हमारे चरित-नायकजी महाराज के श्रीचरणो मे लेकर आई, जिसका शरीर कुष्ठरोग से पीडित था।

"गुरुदेव! बहुत इलाज-उपचार करवाया किन्तु मेरे बेटे के शरीर पर फैला हुआ यह कुष्ठरोग नही गया। इस रोग से मेरा बेटा तो परेशान है ही, मैं भी बहुत दु खी हूँ। इसकी यह दयनीय दशा मुझसे देखी नही जाती है। कृपानाथ! आप जैसा त्याग-तप करवायेंगे, इसे करवाऊँगी। बस आप फरमावें। आप दयालु है। हमे रास्ता दिखावें।" लडके की माँ बोली।

मक्खन को जब ताप लगता है तब वह पिघलता है, किन्तु सन्त जीवन उससे भिन्न ही है। सन्त अन्य को दु खी देखकर पिघल जाते है। तभी तो कहा है—

> निज परिताप द्रवई नवनीता।
> परदु ख द्रवई सु सन्त पुनीता॥

हमारे चरितनायकजी महाराज भी इसी तरह सुकोमल थे। कुष्ठरोग से पीडित लडके को देखकर उसी समय फरमाया—

"माँ! घबराने की आवश्यकता नही है, असातावेदनीय कर्म का जब उदय आता है तब ऐसे रोग उत्पन्न हो जाते है। पुरुषार्थ करो, साता वेदनीय का जोर लगेगा तो यह कुछ दिनो मे ही ठीक हो जायेगा। इसके लिए इसको सोलह दिन के लगातार उपवास कराना पडेगा। आत्म-विश्वास रखो, अवश्य सफलता मिलेगी।"

ठीक हुआ वैसा ही, दूसरे दिन से ही उपवास चालू करा दिये। दो-तीन-चार, इस तरह बढते हुए सोलह उपवास तक पहुँचे, ज्यो-ज्यो तप करता गया, त्यो-त्यो रोग की जड जलती गई। १६वें दिन तक तो रोग साफ हो गया। इस अद्‌भुत चमत्कार को जिसने भी देखा दग रह गये। श्रद्धायुक्त

तपस्या करने से गुजराती बहन के लडके का शरीर स्वस्थ हो गया। सभी लोग तपस्वीराज की जय-जयकार करने लगे। इसीलिये कहा है—

श्रद्धावान् लभते फलम्।

सत्य की जीत

इसी परभणी के चातुर्मास की बात है एक भाई ने सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्व का स्वरूप समझकर तपस्वीराज से शुभ प्रत्याख्यान (नियम) लिया कि—"आज से मैं कुदेव-कुगुरु तथा कुधर्म को सुदेव-सुगुरु तथा सुधर्म के रूप मे मान्यता नही दूँगा, हृदय-मन्दिर मे अरिहत देव, निर्ग्रन्थ गुरु (स्थानक वासी साधु-साध्वी) तथा सर्वज्ञ भगवान् द्वारा प्रकथित धर्म को स्थान दूँगा।"

"प्रत्याख्यान करना श्रेष्ठ कार्य है किन्तु उससे भी श्रेष्ठ वह होगा कि—लिये हुए त्याग की जब कसौटी (परीक्षा) आ जाय उस समय नियम मे दृढता रखना। सम्यक्त्व ग्रहण करके फिर उसमे दृढ रहना। कभी-कभी मिथ्यादृष्टि देव तुम्हे पतित करने का उपक्रम भी कर देता है, उस समय तुम डिगना मत, यदि हृदय मे ऐसी मजबूती हो तो त्याग लो।" तपस्वीराज ने फरमाया।

श्रावक ने दृढता के साथ नियम ले लिया। कुछ ही दिनो के बाद जैसा तपस्वीराज ने फरमाया वैसा ही हुआ।

एक मिथ्यादृष्टि देव स्वप्न मे आकर बोला—

"अरे मूर्ख! मेरी पूजा करना तूने बन्द कर दिया? यदि कल से पूजा-अर्चा करता है तो ठीक वरना कुछ दिनो मे तुझे मेरा चमत्कार मिल ही जायेगा। देखूँगा तुझे और तेरे गुरु को। उनमे कितना बल है कुछ ही दिनो मे पता लग जायेगा? वे कैसे तेरी तथा तेरे धन की रक्षा करते है?" देव इतना बोलकर चला गया।

प्रात होते ही श्रावक गुरुदेव के चरणो मे आकर बोला—

"कृपानाथ! आपने जैसा फरमाया था वैसा ही हुआ है। रात को कोई अदृश्य-शक्ति ने आकर मुझे जगाया तथा इस प्रकार बोला—'समकित को छोड और मुझे पकड, मेरी पूजा कर, नही तो तेरी धन-दौलत को नाश कर दूँगा, तेरी दशा न बिगाड दूँ तो मैं भी क्या देव हुआ। तेरी तथा तेरे गुरु की शक्ति का पता कल लग जायेगा।' अतएव अब मुझे क्या करना चाहिये? सबेरे उठकर मैंने तिजोरी को सँभाला तो उसमे लाखो रुपये का घोटाला नजर आया। अब आपश्री जैसा फरमायेंगे मैं वैसा ही करूँगा।"

तपस्वीराज अपना वर्षावास परभणी ही व्यतीत कर रहे थे। आपश्री के तप त्याग का प्रभाव आस-पास ही नही दूर-दूर तक फैला हुआ था। वे कोई जादूगर नही, न कोई प्रपची थे, उनका एक ही मन्तव्य-वक्तव्य रहता था—"जो त्याग भूमिका की ओर बढेगा वह शरीर, धन, सत्ता से भी स्वस्थ रहेगा तथा कर्मपटल से मुक्ति भी उसी को मिलेगी।" कइयो को मिथ्यात्व के, सप्त-व्यसन के, जमीकन्द आदि अनेक वस्तुओ के त्याग जवरन नही बल्कि उद्बोधन द्वारा जागृत हुई आत्माओ को कराकर उन्हे सुखी जीवन जीने की राह दिखाई।

एक दिन एक गुजराती वहन अपने नौजवान लडके को हमारे चरित-नायकजी महाराज के श्रीचरणो मे लेकर आई, जिसका शरीर कुष्ठरोग से पीडित था।

"गुरुदेव! बहुत इलाज-उपचार करवाया किन्तु मेरे बेटे के शरीर पर फला हुआ यह कुष्ठरोग नही गया। इस रोग से मेरा बेटा तो परेशान है ही, मैं भी बहुत दु खी हूँ। इसकी यह दयनीय दशा मुझसे देखी नही जाती है। कृपानाथ! आप जैसा त्याग-तप करवायेंगे, इसे करवाऊँगी। वस आप फरमावें। आप दयालु है। हमे रास्ता दिखावे।" लडके की माँ बोली।

मक्खन को जब ताप लगता है तब वह पिघलता है, किन्तु सन्त जीवन उससे भिन्न ही है। सन्त अन्य को दु खी देखकर पिघल जाते हैं। तभी तो कहा है—

निज परिताप द्रवई नवनीता।
परदु ख द्रवई सु सन्त पुनीता॥

हमारे चरितनायकजी महाराज भी इसी तरह सुकोमल थे। कुष्ठरोग से पीडित लडके को देखकर उसी समय फरमाया—

"माँ! घबराने की आवश्यकता नही है, असातावेदनीय कर्म का जब उदय आता है तब ऐसे रोग उत्पन्न हो जाते है। पुरुषार्थ करो, साता वेदनीय का जोर लगेगा तो यह कुछ दिनो मे ही ठीक हो जायेगा। इसके लिए इसको सोलह दिन के लगातार उपवास कराना पडेगा। आत्म-विश्वास रखो, अवश्य सफलता मिलेगी।"

ठीक हुआ वैसा ही, दूसरे दिन से ही उपवास चालू करा दिये। दो-तीन-चार, इस तरह बढते हुए सोलह उपवास तक पहुँचे, ज्यो-ज्यो तप करता गया, त्यो-त्यो रोग की जड जलती गई। १६वें दिन तक तो रोग साफ हो गया। इस अद्भुत चमत्कार को जिसने भी देखा दग रह गये। श्रद्धायुक्त

तपस्या करने से गुजराती बहन के लडके का शरीर स्वस्थ हो गया। सभी लोग तपस्वीराज की जय-जयकार करने लगे। इसीलिये कहा है—

श्रद्धावान् लभते फलम्।

सत्य की जीत

इसी परभणी के चातुर्मास की बात है एक भाई ने सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्व का स्वरूप समझकर तपस्वीराज से शुभ प्रत्याख्यान (नियम) लिया कि—"आज से मैं कुदेव-कुगुरु तथा कुधर्म को सुदेव-सुगुरु तथा सुधर्म के रूप मे मान्यता नही दूँगा, हृदय-मन्दिर मे अरिहत देव, निर्ग्रन्थ गुरु (स्थानक वासी साधु-साध्वी) तथा सर्वज्ञ भगवान् द्वारा प्रकथित धर्म को स्थान दूँगा।"

"प्रत्याख्यान करना श्रेष्ठ कार्य है किन्तु उससे भी श्रेष्ठ वह होगा कि—लिये हुए त्याग की जब कसौटी (परीक्षा) आ जाय उस समय नियम मे दृढता रखना। सम्यक्त्व ग्रहण करके फिर उसमे दृढ रहना। कभी-कभी मिथ्यादृष्टि देव तुम्हे पतित करने का उपक्रम भी कर देता है, उस समय तुम डिगना मत, यदि हृदय मे ऐसी मजबूती हो तो त्याग लो।" तपस्वीराज ने फरमाया।

श्रावक ने दृढता के साथ नियम ले लिया। कुछ ही दिनो के बाद जैसा तपस्वीराज ने फरमाया वैसा ही हुआ।

एक मिथ्यादृष्टि देव स्वप्न मे आकर बोला—

"अरे मूर्ख! मेरी पूजा करना तूने बन्द कर दिया? यदि कल से पूजा-अर्चा करता है तो ठीक वरना कुछ दिनो मे तुझे मेरा चमत्कार मिल ही जायेगा। देखूँगा तुझे और तेरे गुरु को। उनमे कितना बल है कुछ ही दिनो मे पता लग जायेगा? वे कैसे तेरी तथा तेरे धन की रक्षा करते है?" देव इतना बोलकर चला गया।

प्रात होते ही श्रावक गुरुदेव के चरणो मे आकर बोला—

"कृपानाथ! आपने जैसा फरमाया था वैसा ही हुआ है। रात को कोई अदृश्य-शक्ति ने आकर मुझे जगाया तथा इस प्रकार बोला—'समकित को छोड और मुझे पकड, मेरी पूजा कर, नही तो तेरी धन-दौलत को नाश कर दूँगा, तेरी दशा न बिगाड दूँ तो मैं भी क्या देव हुआ। तेरी तथा तेरे गुरु की शक्ति का पता कल लग जायेगा।' अतएव अब मुझे क्या करना चाहिये? सवेरे उठकर मैंने तिजोरी को सँभाला तो उसमे लाखो रुपये का घोटाला नजर आया। अब आपश्री जैसा फरमायेंगे मैं वैसा ही करूँगा।"

"यदि तेरी धन की लालसा है तो जैसा मिथ्यादृष्टि देव की मरजी है वैसा तुझे चलना पडेगा और यदि प्रण प्यारा है तो मेरी बात माननी पडेगी। मैंने तुझे पहले ही कहा था कि प्रणवान की पग-पग पर परीक्षा होती है। बोल तुझे मेरी बात मजूर हो तो मैं जैसा रास्ता दिखाऊँ वैसा कर।" तपस्वीराज ने निडरतापूर्वक फरमाया।

"मुझे धन से भी ज्यादा प्रण की चिन्ता है, धर्म रखना है, धन भले ही जाय। मेरी आत्मा मे असीम आनन्दानुभूति हो ऐसा आपश्री से मार्ग-दर्शन मिले, यही मेरी आकाक्षा है।" उस भाई ने कहा।

"तो अब घबराने की जरूरत नही, यही स्थानक मे रहकर एक महीने का दया व्रत लेकर धर्माराधन कर। तेरा धन कही जाने वाला नही, यदि तेरे भाग्य का है तो किसी की ताकत नही जो छीन ले, कोई कुछ नही कर सकता।"

जब तपस्वीराज से इस प्रकार का आत्म-हितावह सन्देश मिला तो बिना देर किये ही वह श्रावक अपना घर का सभी काम काज छोडकर वही एक महीने का दयाव्रत का प्रत्याख्यान लेकर तपस्वीराज की पर्युपासना मे लग गया। बस, कुछ ही दिनो मे मिथ्यादृष्टि देव हताश हो गया। स्वत आकर अपने पूर्वकृत अपराध की उसने क्षमा माँगी। पुन जो-जो फेर बदल किया उसे उसी रूप मे बना दिया। श्रावक ने देव द्वारा पुन बनी घटना भी तपस्वीराज के सामने रखी। दयाव्रत पूर्ण होने पर वह अपने घर गया।

तपस्वीराज ने फरमाया—जो सम्यक्धर्म पर दृढ है उसकी जीत होती है।

देव को तपस्वीराज के तपोमय बल का ज्ञान हो गया।

अचिन्त्य महिमा

आगमोदधि श्रमण सघीय प्रथम आचार्यदेव गुणी गाभीर्य श्री आत्मा-रामजी महाराज लुधियाना (पजाब) विराजित थे। आपश्री के दर्शनार्थ दो बहनें आई तथा सेवा मे निवेदन किया—

"गुरुदेव! हम दोनो बहुत दु खी है, हमारी तबियत ठीक नही रहती है। वैद्य-हकीमो-डॉक्टरो से बहुत दवा ली किन्तु कुछ भी सुधार नही हुआ है। कुछ लोगो का कहना है—"व्यन्तर देव का प्रकोप है।" हम आपके चरणो मे हैं। आप जो भी उचित उपचार बतायेंगे हम करेंगे, हमारी तबियत ठीक हो जाय तो धर्म-ध्यान आदि अच्छी तरह से हो।"

"इसका इलाज खद्दरधारी, कर्नाटक केशरी श्री गणेशमलजी

महाराज जो इस समय परभणी (महाराष्ट्र) मे चातुर्मास कर रहे हैं, वे अच्छा जानते है। मेरा विश्वास है तुम वही जाओ, उन तपस्वीराज को देखते ही भूत-प्रेत-व्यन्तर जो भी होगा भाग जायेगा।" आचार्य श्री ने फरमाया।

आचार्य प्रवर के कथनानुसार दोनो बहने लुधियाना से परभणी महाराष्ट्र पहुँची। आचार्यदेव का सुखद सन्देश दिया, तत्पश्चात् अपनी कहानी भी तपस्वीराज के सम्मुख रखी।

"वज्रादपि कठोराणि" इस पद के अनुसार दोनो बहनो को २१ दिन का तप प्रारम्भ करने को कहा।

दोनो बहनो ने श्रद्धापूर्वक तप (उपवास) प्रारम्भ कर दिया कुछ ही दिनो मे व्यतर घबरा उठे, दोनो ही जोर-जोर से चिल्ला उठे—"जीते जी इनको नही छोडते पर इस सन्त बाबा के तप के सामने हमारा जोर नही चलता है। अब इस बाबा के प्रताप से इन दोनो औरतो को कभी तकलीफ नही देंगे। अरे बाबा! अब हमे मत सताओ, मत बाँधो। अब हम कभी नही आयेंगे, वचन देते है। हम तुम्हारी गाय है, हमे छोड दो।" इस प्रकार विलापात करते हुए व्यन्तर उन दोनो औरतो के शरीर से निकल गये।

दोनो स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त कर लुधियाना आचार्य देव के चरणो मे पहुँची। सारा हाल उनके सामने रखा। आचार्य देव ने प्रसन्नता व्यक्त की। ऐसी अचिन्त्य महिमा थी बाबाजी महाराज की।

ज्योतिर्मय व्यक्तित्व

स० २०१६ की बात है, चरितनायक, तपस्वीराज खद्दरधारी, कर्नाटक केशरी गुरुदेव श्री गणेशलालजी महाराज आस-पास के अनेक गाँवो-नगरो मे धर्म प्रचार करते हुए औरगाबाद (महाराष्ट्र) पधारे। यहाँ श्रावक-श्राविकाओ ने चातुर्मास करने की आग्रह भरी विनती की। सघ के भाव-भरे आग्रह को मानकर आपश्री ने स० २०१६ का चातुर्मास औरगाबाद किया।

आपश्री के पधारने से नगर मे धर्म-ध्यान की लहर दौड गई। आपकी प्रवचन सभा मे अधिकाशत मुँहपत्ति मुँह पर लगाने वाले ही आ पाते थे। श्राविका समाज मे तपस्या की झडी लग गई। कोई उपवास के मासखमण, कोई आयम्बिल के मासखमण तो कोई एकान्तर उपवास मे दिल खोलकर जुड गये। दर्शनार्थियो का मानो ताता-सा लग गया।

कुछ बाहर से आई हुई महिलाओ को प्रेतात्माएँ असह्य पीडा दे रही थी, प्रेतात्माएँ उन्हे मारकर ही दम लेना चाहती थी। जोर-जोर से चिल्लाकर वे बोलती—

"इसको नही छोडेंगे, इसने हमारा अपमान किया है।" कोई वोलती—"इसने खाने को नही दिया।" कोई कहती—"इसने हम पर पेशाव छिडक दिया। ऐसी औरतो को हम कभी नही छोडेंगे।"

जो जानकर गल्ती करता है उसे उसके अपराध की सजा मिलती है, मिलेगी। किन्तु जिसकी अनजान मे हुई भूल की इतनी भयकर सजा? यह तो और अधम कृत्य है।

तपस्वीराज चरितनायक जी महाराज ने उन्हे १५ दिन के उपवास करवाये। अन्त मे बीमारी को पिण्ड छोडना ही पडा। घेरा डालकर रहने वाली प्रेतात्माएँ तपस्वीराज के ज्योतिर्मय व्यक्तित्व के सामने टिक नही पाती। ऐसा था ज्योतिर्मय व्यक्तित्व हमारे चरितनायक तपस्वीराज गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज का। □□

१०॥ मधुर मुनि-मिलन

बेगलोर (कर्नाटक प्रान्त) तथा आन्ध्रप्रदेश को पावन करते हुए स्व० मेवाडभूषण, पूज्य गुरुदेव, आदर्श-विचारक, उदार-मनस्वी श्री प्रतापमलजी महाराज के ज्येष्ठ शिष्यरत्न, आत्मार्थी, तपस्वी (मेरे ज्येष्ठ गुरुभ्राता) श्री बसन्त मुनिजी महाराज, जिनकी काफी दिनो से हार्दिक इच्छा थी कि कुछ वर्षों तक कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, तपस्वीराज श्री गणेशमलजी महाराज की सेवा मे रहकर उन चारित्रवान्, तप पूत, महान् आत्मा की पर्युपासना का अनुपम लाभ प्राप्त करूँ, इतना ही नही तपस्वीराज के निकट रहकर अपने आपको भी कसौटी करूँ, ताकि मेरा जीवन भी साधना-मार्ग मे और अधिक गति करे। "साधनामय जीवन तेजस्वी बनाना है तो सन्त-पुरुषो का ससर्ग करो। सन्तो की सान्निध्यता अमृत समान महान् है। कल्पतरु-सा फलदायी, चिन्तामणि-सा मनोरथपूरक, सजीवनी बूटी के समान सन्त-मुनिराजो का ससर्ग सान्निध्य होता है। "सत्य-शिव-सुन्दरम्" का प्रतीक यदि कोई है तो वह सन्त जीवन है। तीर्थंकर की सम्यक् वाणी के पावन प्रसारक सन्त है।" इस प्रकार विचार करके आप अर्थात् तपस्वी श्री बसन्त मुनिजी महाराज विहार यात्रा करते हुए महाराष्ट्र मे पधार गये। बीच मे गजेन्द्रगढ मे सबल साहित्य-सर्जक बाल ब्रह्मचारी परम श्रद्धेय उपाध्यायरत्न श्री प्यारचन्दजी महाराज आदि मुनिवरो का मधुर मुनि-मिलन हुआ। वहाँ उपाध्याय श्री जी की अन्तिम सेवा-सुश्रूषा का लाभ आपको मिला।

शनै शनै महाराष्ट्र की ओर कदम बढाते रहे। कुछ लोगो को पता लगा कि "आप कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, तपस्वीराज, समकित प्रसारक गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज की सेवा मे रहने के लिये जा रहे हैं।" तो उन्होने कहा—

"आप क्यो इतनी दौड-धूप करते है? तपस्वीराज की सेवा मे आप टिक नही पायेंगे। वे बडे उग्र स्वभावी है, कडक चारित्रवान तथा स्पष्टवादी है। उनके शिष्य श्री मिश्रीमलजी महाराज जिनको दीक्षा दी वे भी सेवा मे रहने मे कतराते है तो फिर आपकी प्रकृति-प्रवृत्ति उनसे कैसे मेल खायेगी? हमारा कहना है आप यही से लौट जायें।"

थे उसी प्रकार दुरात्माओ के व्यवहार, व्यसनो के प्रति साथ ही बुराइयो के प्रति "वज्रादपि कठोराणि" की तरह सदैव वज्र के समान कठोर थे, तभी तो उनके निकट पहुँचने पर अनेको नर-नारियो के शरीर की बाधा अर्थात् ऊपर की पीडा दूर हो जाती।

सती-सन्त तथा सज्जनो, असहाय आत्माओ के प्रति आपका व्यवहार "मृदूनि कुसुमादपि" की तरह बडा सरल, स्नेहयुक्त, सुखदायी रहता था। आप ऊपर से भले ही नारियल (श्रीफल) के समान कठोर थे, किन्तु अन्तरग जीवन अत्यन्त कोमल था। जब भी आपश्री से कोई सन्त-सतिवृन्द मिलते उन्हे आप यही फरमाते—

"सम्यक्ज्ञान के साथ सम्यक्आचार का पालन करो। आत्मोत्थान का महान् मार्ग है—सम्यक्ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र। इस त्रिवेणी मे जो भी आत्मा श्रद्धापूर्वक स्नान करेगी उसकी नौका भवसागर से पार होगी।"

ऐसी हितावह शिक्षा देने वाले चरितनायक कर्नाटक केशरीजी महाराज का सान्निध्य प्राप्त करने वाला भाग्यशाली ही होता है। मुनिजी अर्थात् श्री बसन्त मुनिजी महाराज के लिए आपश्री का सान्निध्य वरदान स्वरूप सिद्ध हो गया। शुभ कृपा-किरणें मिलती रहीं जिससे ज्ञान-ध्यान-अनुभव के अनमोल रत्न आपके हस्तगत होते रहे। कहा भी है—"लघ्वी पुरा वृद्धिमुपैति पश्चात्, छायेव मैत्री खलु सज्जनानाम्।" अर्थात् महान् पुरुषो का सम्बन्ध प्रारम्भ मे लघुरूप मे प्रगट होता है, तदनन्तर धीरे-धीरे वही मधुर सम्बन्ध विशालता मे परिणत होता हुआ प्रेम, भक्ति, ज्ञान, आचार की धारा मे वृद्धि को प्राप्त करता है। वही बात तपस्वीराज, कर्नाटक केशरीजी महाराज तथा आत्मार्थी ज्येष्ठ गुरुभ्राता श्री बसन्त मुनि जी महाराज के बीच बनी।

प्रवचन सभा मे पाट पर एक साथ बैठकर व्याख्यान दिलाना, प्रासगिक शिक्षा प्रदान करना, परीक्षा के तौर पर कभी-कभी कठोर शब्दो द्वारा उलाहना देना, इस प्रकार कठोरता के बीच कोमलता का सामजस्य बडा ही सुहाना लगता था।

जब कभी तपस्वीराज की ओर से उपालम्भ मिलता महाराज श्री विनीत बनकर सहर्ष शिक्षाओ को अपने हृदय कोष मे निधि के रूप जमा करते। इतना ही नही उन शिक्षाओ को क्रियान्वित करते। निष्कपट व्यवहार से स्थानीय सघ मे श्री बसन्त मुनिजी महाराज की ख्याति फैली। पूर्व मे जो अपवाद था, कि "दोनो मे क्या व्यवहार रहेगा? आगत मुनिजी

प्रत्युत्तर मे तपस्वी श्री वसन्त मुनिजी ने उत्कट आत्म-विश्वास के साथ कहा—

"मुझे प० रत्न गुरुदेव श्री प्रतापमल जी महाराज का शिष्य बनने का सौभाग्य मिला है। मैं साध्वाचार-व्यवहार से अनभिज्ञ नही हूँ, सन्त, सन्त का भाई है। जिन्हे आप भयकर वता रहे हो, वे भी सन्त है। मुझे पूर्ण विश्वास है सन्त, सन्त से नफरत नही करते है। गुरु-शिष्य के बीच भेद-रेखा जो वनी है उसमे भी कही आप जैसे श्रीमानो का हाथ होगा। मुझे गुरुदेव का शुभाशीर्वाद मिला है, मेरे मनोरथ वहाँ जाने पर निश्चित सिद्ध होगे। वे कुछ भी नही कहेगे और यदि कहेगे भो तो मैं पी जाऊँगा अर्थात् उनकी हित-शिक्षा को अपनाऊँगा।"

जिन लोगो ने महाराज को भडकाने का प्रयास किया वे निरुत्तर हो छोटा-सा मुँह ले अपने घर को ओर चल पडे।

किसी भी वात की परवाह न करते हुए तपस्वी श्री बसन्त मुनिजी महाराज अत्यन्त उल्लास के साथ विहार यात्रा करते हुए चौसाला के निकट पहुँच गये।

तपस्वीराज को पता लग गया तो उन्होने अगवानी के लिए महासती जी को सामने भेजा। इस प्रकार श्रावक-श्राविका एव सतिवृन्द की उपस्थिति मे श्री बसन्त मुनिजी महाराज का स्वागत हुआ। तपोधनी कर्नाटक केशरी जी महाराज के पावन दर्शन कर मुनिजी को अपरिमित आनन्दानुभूति हुई, उनके अणु-अणु मे उल्लास छा गया।

"मुनि मिलन सम सुख जग नाही।" उक्त चौपाई के अनुसार दोनो तपस्वी मुनिवरो का मधुर-मिलन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था। दोनो का पारस्परिक साक्षात्कार प्रथम बार ही हुआ था। इस कारण अतीव-स्नेह-वात्सल्य भाव की मन्दाकिनी बहे इसमे क्या आश्चर्य ? अनेको श्रावक-श्राविकाओ की दृष्टि उन पर टिकी हुई थी कि अब तपस्वीराज तथा आगत मुनिजो का सम्बन्ध कैसा रहेगा ?

तपस्वीराज चरितनायक जो महाराज का जीवन कठोर था तो सरल भी। बसन्त मुनिजी महाराज ने वन्दना की। उन्हे उसी समय पाटे पर बिठाया। एक ही पाटे पर दोनो महामुनि विराजे। कर्नाटक केशरीजी महाराज का जीवन अपने यम-नियमो के प्रति कठोर तथा अन्य साधको के प्रति उतना ही नरम-सरल भी था। वे जप-तप, स्वाध्याय आदि धार्मिक आराधना मे, आचार-विचार, ज्ञान-क्रिया मे कठोर रहते हुए अपने मे तन्मय

थे उसी प्रकार दुरात्माओ के व्यवहार, व्यसनो के प्रति साथ ही बुराइयो के प्रति "वज्रादपि कठोराणि" की तरह सदैव वज्र के समान कठोर थे, तभी तो उनके निकट पहुँचने पर अनेको नर-नारियो के शरीर की वाधा अर्थात् ऊपर की पीडा दूर हो जाती।

सती-सन्त तथा सज्जनो, असहाय आत्माओ के प्रति आपका व्यवहार "मृदूनि कुसुमादपि" की तरह बडा सरल, स्नेहयुक्त, सुखदायी रहता था। आप ऊपर से भले ही नारियल (श्रीफल) के समान कठोर थे, किन्तु अन्तरग जोवन अत्यन्त कोमल था। जब भी आपश्री से कोई सन्त-सतिवृन्द मिलते उन्हे आप यही फरमाते—

"सम्यक्ज्ञान के साथ सम्यक्आचार का पालन करो। आत्मोत्थान का महान् मार्ग है—सम्यक्ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र। इस त्रिवेणी मे जो भी आत्मा श्रद्धापूर्वक स्नान करेगी उसकी नौका भवसागर से पार होगी।"

ऐसी हितावह शिक्षा देने वाले चरितनायक कर्नाटक केशरीजी महाराज का सान्निध्य प्राप्त करने वाला भाग्यशाली ही होता है। मुनिजी अर्थात् श्री बसन्त मुनिजी महाराज के लिए आपश्री का सान्निध्य वरदान स्वरूप सिद्ध हो गया। शुभ कृपा-किरणें मिलती रही जिससे ज्ञान-ध्यान-अनुभव के अनमोल रत्न आपके हस्तगत होते रहे। कहा भी है—"लघ्वी पुरा वृद्धिमुपैति पश्चात्, छायेव मैत्री खलु सज्जनानाम्।" अर्थात् महान् पुरुषो का सम्बन्ध प्रारम्भ मे लघुरूप मे प्रगट होता है, तदनन्तर धीरे-धीरे वही मधुर सम्बन्ध विशालता मे परिणत होता हुआ प्रेम, भक्ति, ज्ञान, आचार की धारा मे वृद्धि को प्राप्त करता है। वही बात तपस्वीराज, कर्नाटक केशरीजी महाराज तथा आत्मार्थी ज्येष्ठ गुरुभ्राता श्री बसन्त मुनि जी महाराज के बीच बनी।

प्रवचन सभा मे पाट पर एक साथ बैठकर व्याख्यान दिलाना, प्रासगिक शिक्षा प्रदान करना, परीक्षा के तौर पर कभी-कभी कठोर शब्दो द्वारा उलाहना देना, इस प्रकार कठोरता के बीच कोमलता का सामजस्य बडा ही सुहाना लगता था।

जब कभी तपस्वीराज की ओर से उपालम्भ मिलता महाराज श्री विनीत बनकर सहर्ष शिक्षाओ को अपने हृदय कोष मे निधि के रूप जमा करते। इतना ही नही उन शिक्षाओ को क्रियान्वित करते। निष्कपट व्यवहार से स्थानीय सघ मे श्री बसन्त मुनिजी महाराज की ख्याति फैली। पूर्व मे जो अपवाद था, कि "दोनो मे क्या व्यवहार रहेगा? आगत मुनिजी

तपस्वीराज के पास कैसे टिक पायेंगे ?" जिनके मुँह से ये शब्द निकले थे वे चकित से रह गये। सचमुच ही महामनस्वियो का प्रभाव अचिन्त्य ही होता है। तभी तो कहा है—

"चिन्त्यो न हन्त महता यदि वा प्रभाव ।"

फलत दोनो महामुनियो के इस स्नेह मिलन ने अतीत के इतिहास का स्मरण करा दिया, वह इस प्रकार—

कर्नाटक केशरीजी महाराज कोटा सम्प्रदाय के है तथा मेवाडभूषण पू० गुरुदेव श्री प्रतापमलजी महाराज के शिष्य आत्मार्थी श्री बसन्त मुनिजी महाराज आचार्य श्रीमद् हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के है। आचार्य श्रीमद् हुक्मीचन्दजी महाराज कोटा सम्प्रदाय के मूर्धन्य सन्तो मे से एक थे। इस प्रकार आप दोनो एक ही सम्प्रदाय के है। गुरुभ्राता कहो या गुरु-शिष्य यो दोनो का अति निकट का सम्बन्ध हो गया। बीच मे कर्नाटक केशरीजी महाराज महाराष्ट्र मे पधार गये जिससे कडियाँ बिखर गईं थी, पर आप दोनो के मिलने से पुन इतिहास की कडी जुड गई।

इस प्रकार स्नेह मिलन के साथ स० २०१७ का आप दोनो का वर्षावास चौसाला सम्पन्न हुआ। □□

११।। सम्यक् आराधना से सिद्धि

जिस प्रकार भगवान् महावीर स्वामी का अन्तिम वर्षावास हस्तिपाल नरेश के अत्याग्रह पर पावापुरी मे हुआ था, उसी प्रकार कर्नाटक केशरी, चरितनायक, तपस्वीराज, बाबाजी महाराज पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज तथा आत्मार्थी श्री बसन्त मुनि जी महाराज के चातुर्मास का लाभ महाराष्ट्र की पुण्य भूमि नान्देड नगर को प्राप्त हुआ। सचमुच ही नान्देड का श्री स्थानकवासी जैन श्रावक सघ अपने आपको परम सौभाग्यशाली मान रहा था। पुण्यवान् आत्माओ को ही सन्त-मुनिराजो का सम्पर्क मिलता है। सम्यक् आराधना भी वे ही आत्मा कर पाती हैं जिनके कर्म हलके होते है—

पुण्य उदय सद्गुरु मिले, मिले सूत्र के वैन।
जीवादिक नव तत्व पहिचाने खुले जिगर के नैन।।
पुण्य से धर्म हाथ आवे, पुण्य की महिमा सब गावे।।

(—आचार्य प्रवर श्री खूबचन्द जी महाराज)

नान्देड श्री सघ के सदस्यो की मनोभूमि प्रशस्त जानकर तपस्वीराज ने चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान करके ठीक समय पर चातुर्मासार्थ नगर प्रवेश कर दिया। वही आपश्री की सेवा मे मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता आत्मार्थी श्री बसन्त मुनि जी महाराज थे, साथ ही विदुषी महासती श्री जडावकुँवर जी महाराज आदि ठाणा भी थीं।

आपश्री के पधारने से सामायिक, प्रतिक्रमण, दया, पौषध, सवर, व्रत, शान्ति सप्ताह, जप-तप आदि धार्मिक प्रवृत्तियो मे उत्तरोत्तर प्रगति होती रही। प्रवचन सभा बडी ही आकर्षित करने वाली थी। अनेको नर-नारियो ने नियमोपनियम स्वीकार कर जीवन को धन्य बनाया। ग्यारह (११) सजोडे शीलव्रत हुए। आत्मार्थी श्री बसन्त मुनि जो महाराज का प्रवचन पूर्ण हो चुका था, तपोधनी श्री जी का धर्मोपदेश पीयूषधारा की तरह चल रहा था, बीच मे ही एक बहन के शरीर मे प्रेतात्मा का उपद्रव चालू हो गया। प्रेतात्मा ने बहन के शरीर का बहुत खून चूँस लिया था, न पूरा भोजन करने देती और न दूध-चाय पीने देती, न फल खाने देती। अतिशय-पीडा व्यथा-दे-देकर उस बहन को उसने दुखी बना डाला था। सम्बन्धियो ने उसे तपस्वीराज के सम्मुख लाकर बिठाया।

"तू कौन है ? इसके शरीर मे कब से है ? अब क्या चाहती है ?" तपस्वीराज ने पूछा।

कुछ समय मौन रही फिर बोली—"मैं कौन हूँ ? कब से हूँ ? इससे तुम्हे क्या मतलब ? मैं जाने वाली नही हूँ। तुम जैसे कई महात्मा मैंने देख लिये है। तुम भी अपनी ताकत आजमा लेना। मैं भी देखूँ, कितना जोर है तुम मे ? मैं इसे छोडने वाली नही हूँ, इसका गला घोटकर ही दम लूँगी। इसका खाना-दाना भी मैंने कम किया है। अब तो यह थोडे दिन की मेहमान है।" आत्मा ने कहा।

"पर तू इसे क्यो सताती है ?" तपस्वीराज बोले।

"यह मेरी वैरिन है। इसीलिये मैं इसे दु ख दे रही हूँ।"

तपस्वीराज ने बोलने के बजाय काम करना विशेष महत्त्वपूर्ण समझा, उस बाई को उपवास के प्रत्याख्यान करवा दिये। सारी रात बेचैनी से व्यतीत हुई। प्रात काल जब प्रार्थना मे आई तभी उसे अट्ठम तप (तेले) के पच्चक्खान दे दिये। तप का प्रभाव कुछ अलौकिक ही होता है। बेले मे ही प्रेतात्मा घबराने लगी, जोर से चिल्लाने लगी—

"अरे बाबा ! क्यो मुझे बेमौत मारता है, पर याद रख इतनी जल्दी निकलने वाली नही हूँ, इसका गला तो अवश्य घोट कर रहूँगी।"

तपस्वीराज ने तप का क्रम बढा दिया। चार-पाँच-छ, नौ से बढकर ग्यारह उपवास तक आ गये। अब प्रेतात्मा के पैर उखड गये। अब वह स्वय तपस्वीराज के सम्मुख बडी विनम्र भाव से गिडगिडाती हुई बोलती है—

"ओ महात्मा ! अब बस करो, तुम्हारी मार मुझसे सही नही जाती है। मुझे माफ कर दो, अब मैं इसे छोडती हूँ। आज से इसे नही सताऊँगी। तुम तो मेरे पीर के भी पीर निकले। मैं तुम्हारी गाय हूँ। प्रण करती हूँ अब इसे कभी नही सताऊँगी। अब इसके बदन मे कभी नही आऊँगी।"

तपस्वीराज चरितनायक की साधना-आराधना एव तप का अद्वितीय प्रभाव कि ग्यारह उपवास मे ही उस बहन के शरीर से बाहर की पीडा समूल रूप से निकल गई। जिसने जीने की आशा भी छोड दी थी वह स्वस्थ होकर अपने घर पहुँची। सारी जैन समाज को ऐसे तप पूत आत्मा पर स्वाभिमान रहेगा युगो-युगो तक।

इसे कहते हैं साधक

कभी-कभी सुखद वातावरण के बीच विधना शोचनीय स्थिति को जन्म दे देती है। अगणित नर-नारियो को एक साथ शोकाकुल बना देना तो विधना

के क्षणो का काम है। सुहावने दृश्य को भयावह बनाने मे इसे कोई विशेष समय नही लगता है। वही बात हमारे चरितनायक तपस्वीराज श्री सद्गुरुदेव गणेशमलजी महाराज के शरीर के साथ घटी।

चातुर्मास तप-जप आराधना के क्षणो मे बीत रहा था किन्तु ये मनमोहक क्षण ईर्ष्यालु स्वभावी भाग्य को सहन नही हुए, अचानक कर्नाटक केशरी जी महाराज के भौतिक शरीर को ज्वर ने भयकर रूप से आ घेरा। वृद्धावस्था की काली छाया का प्रभाव तो पहले ही गिर चुका था फिर ज्वर का प्रकोप, जिससे शारीरिक कमजोरी अत्यधिक बढती गई, उधर एकान्तर उपवास तप चल ही रहा था। ज्वर आने पर भी आपश्री दवाई से दूर रहते थे। आपका आत्मबल बडा बेजोड था, आपश्री यही कहते—

मेरी दवा है—"तप-जप, स्वाध्याय, आत्मचिंतन।" दिन भर वे अपने नित्य-नियम, आवश्यक क्रिया मे लगे रहते। यहाँ तक कि अस्वस्थ होने पर भी लघुनीत-बडीनीत का कार्य स्वय ही निपटाते। यद्यपि आत्मार्थी श्री बसन्त मुनिजी महाराज कहते—"इतना-सा सेवा का कार्य मुझे ही करने दो। आपकी शारीरिक स्थिति पहले जैसी नही रही है अतएव यह सेवा का मौका तो मुझे मिलना चाहिए।"

"मुनिजी! जब तक मेरे हाथ-पैरो मे शक्ति है तब तक मुझे ही करने दो फिर तो तुम्हे ही सम्भालना है।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"तपस्वीजी महाराज के स्वास्थ्य मे सुधार हो।" इस शुभ भावना से प्रेरित होकर स्थानीय श्री सघ नान्देड, एव बाहर की जनता ने शान्ति सप्ताह, दयाव्रत, दान-शील-तप-भाव की सम्यक् आराधना की झडी लगा दी। सैकडो जीवो को अभयदान मिला, सैकडो निर्धन नारायणो को भोजन, स्वधर्मी भाइयो को सहयोग दिया, इस प्रकार अनुमोदनीय-अनुकरणीय अनुष्ठानो के पीछे सैकडो-हजारो नर-नारियो का एक ही उद्देश्य था—"हमारे गुरुदेव स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करें।" सघ की भावना के अनुरूप ही तपस्वीराज के स्वास्थ्य मे पुन सुधार होता गया इसके साथ ही नादेड का वर्षावास भी पूर्ण हुआ। तपस्वीराज विहार की तैयारी करने लगे तब नान्देड का श्रीसघ जो नही चाहता था कि अभी महाराज श्री विहार करें, क्योकि—अभी तबियत मे कुछ ही सुधार हुआ है। कमजोरी अभी ज्यादा थी, वे बोले—

कृपानाथ! अभी कुछ दिन यही विराजो, चातुर्मास पूर्ण होने पर विहार करते है, यह आपश्री की मर्यादा है, किन्तु अभी आप अस्वस्थता मे थे, इसीलिए दूसरी बात आप—आगम की भाषा मे वयस्थविर, दीक्षा पर्याय-

स्थविर एव ज्ञान-स्थविर है, अतएव सघ की विनति है—कुछ दिन और विराजे। हमे सेवा का लाभ दे। आप जैसे महान् तपस्वी, महान् स्थविर के विराजने से धर्म-प्रभावना अच्छी होती रहेगी। गुरुदेव अर्जी स्वीकार करो।

प्रत्युत्तर मे तपस्वीराज ने सरल भाषा मे फरमाया—

साधक ज्ञान-दर्शन तथा चारित्र के विशुद्ध मार्ग मे स्थिर रहते हुए आने वाले दु ख-दर्द, विघ्न-बाधा, उपसर्गों-परीषहो से विचलित नही होता है, अपितु समता-भाव मे रमण करता है, आत्मिक गुणो की आराधना मे तल्लीन रहता है, स्व-पर हित साधन मे दत्तचित्त रहे ऐसे महान् मुनि—भगवन्तो को 'वीर' कहकर पुकारा गया है। आचाराग सूत्र मे भगवान् ने फरमाया है—

"एस वीरे पससिए, जे ण णिविजयइ।"

अर्थात् आने वाले परीषहो से जो नही घबराये अपितु सहन करता हुआ सयम मे गति करता रहे उसे वीर कहा है, वही प्रशसनीय है। अतएव विहार करना ही उचित है।

गतिमान जल-धारा की तरह सतो का जीवन होता है। वैसे तपस्वीराज का स्वास्थ्य जैसा चाहिए वैसा नही था पर उनकी अन्तर् आत्मा यही चाह रही थी कि—"अब यहाँ से विहार करके जालना की ओर बढना ही ठीक रहेगा।" उन्हे ऐसा आभास भी हुआ—"जालना जल्दी पहुँचने मे हित है।" हालाकि पैरो ने जबाव दे दिया था फिर भी आपश्री आपने आत्म-बल के सहारे बढते रहे। □□

१२।। अन्तिम विहार अन्तिम मजिल

"विघ्नै पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमाना,
प्रारभ्य उत्तमजना न परित्यजति ।"

कितने ही विघ्न आवें किन्तु प्रथम पुरुष अर्थात् उत्तम जन कभी भी अपने सम्यक् पथ से विचलित नही होते । बस, वैसे ही तपस्वीराज बावाजी महाराज भी अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर कदम बढाते रहे हालाकि—शरीर बहुत कृश हो चुका था किन्तु आत्मा सुदृढ थी । जिनशासन की उचित आराधना करते हुए अन्तिम विहार की अन्तिम मजिल लगभग १३ मील की पूर्ण करके आपश्री जालना पधार गये ।

गोशाला के बाहर ही आपश्री खडे रहे, अन्दर प्रवेश नही किया । तब स्थानीय श्रावक सघ ने पूछा—

गुरुदेव ! क्या बात हुई ? आपश्री बाहर ही क्यो रुक गये ? मकान की आज्ञा देने वाला भी हाजिर है, फिर आप क्या विचार कर रहे है ?

जाए सद्धाए णिक्खते तमेव अणुपालेज्जा,
विजहित्ता विसोत्तिय ।

(—भ० महावीर—आचाराग सूत्र)

अर्थात्—तथारूप अणगार को चाहिये कि जिस श्रद्धा-विश्वास के साथ प्रव्रज्या मार्ग अगीकार किया है उसमे किसी प्रकार की शका नही लाता हुआ जीवन पर्यंत उसी श्रद्धा के साथ पालन करता रहे ।

हमारे चरितनायक उक्त जिनवाणी के विशद भावो का चिन्तन-आचरण करते हुए बोले—

देवानुप्रिय श्रावको ! नाशवान् देह की अब क्या चिन्ता करना ? यह तो परिवर्तनशील है । सडन-गलन-विध्वसन धर्म से युक्त यह देह है । इससे ज्यादा चिन्ता आत्म-धन (ज्ञान-दर्शन-चारित्र) की होनी चाहिये, क्योकि—"न धम्मकज्जा परमत्थि कज्जम् ।" उत्तम धर्माराधना जैसा श्रेष्ठ कार्य दूसरा कोई नही है । मैंने तो कभी का अन्दर प्रवेश पा लिया है, अब इस मकान मे चन्द दिनो के लिये बसेरा अवश्य करना है । बाहर इसीलिये खडा हूँ कि—आप लोग मेरी शर्त मजूर करो तो गोशाला मे मेरा प्रवेश हो, मेरी शर्तं इस प्रकार है—

(१) मेरे पास (दर्शन-प्रवचन-प्रार्थना मे) आने वाने वाले वडी उम्र वाले नर-नारी जूते-चप्पल-बूट आदि पहनकर नही आवे।

(२) बिना मुँहपत्ती बाँधे कोई भी मेरे यहाँ प्रवेश नही करे।

(३) आधुनिक वेश (सूट-बूट-कोट-पट) पहनकर नही आवे और न ही आधुनिक-बाल कटिंग वाला।

(४) स्थानक मे बिना सामायिक कोई न बैठे।

(५) शुद्ध खादी के वस्त्र पहनने वाले से ही मैं बात करूँगा।

तपस्वीराज की उक्त शर्तों को स्थानीय सघ के सभी नर-नारियो ने उसी समय मजूर कर लिया। हालाकि—उनकी आचार-सहिता बडी कठोर थी फिर भी सभी सश्रद्धा परिपालन के लिये कटिबद्ध हो गये। तपस्वीराज को जब आश्वासन मिला तब अन्दर प्रवेश किया। अन्दर प्रवेश करने के बाद आवश्यक क्रिया करके तपस्वीराज ने फरमाया—

"मैं अब घर मे आ गया हूँ। मेरी यात्रा अब पूरी हुई।" कुछ लोग महाराजश्री की बात समझ पाये तथा कुछ तो समझ ही नही पाये।

जिस प्रकार कोई सम्राट अपना खजाना निर्धन व्यक्तियो के लिये खोल दे और घोषणा कर दे कि—"जितना धन चाहिये उतना ले सकते हो।" फिर तो कोई अभागा ही वचित रहेगा। खजाना लूटने की होडाहोड लग जायेगी। बस, वैसे ही तपस्वीराज का ज्ञान धन लूटने के लिये जालना निवासी पर्युपासना मे जुट गये। सभी लोगो की यही तमन्ना थी कि तपस्वीराज की जितनी सेवा-भक्ति बन सके, करके महालाभ प्राप्त करें। क्योंकि— आगम मे कहा है—

"तपस्वी साधक की उपासना करते हुए जीवात्मा को अगर भक्ति-भावो की सर्वोत्तम रसानुभूति अन्तर्मानस मे आ जाती है तो वह आत्मा तीर्थंकर गोत्र का बन्धन करने मे सफल हो जाती है। ससार को परित्त (घटाने का) करने का अनुपम लाभ प्राप्त करती है।" भावनापूर्वक नर-नारो सेवा भक्ति करने लगे। इस प्रकार जालना नगर तीर्थभूमि बन गया।

"तपस्वीराज अस्वस्थ हैं" यह जानकारी चारो ओर श्रद्धालु आत्माओ को हो चुकी थी, अतएव दर्शनार्थियो का मेला लग गया था। अभी ज्वर ने पीछा नही छोडा, कमजोरी बढती जा रही थी। फिर भी महामुनि तपस्वीराज—"मनस्वी कार्यार्थी न गणयति सुख न च दु खम्" इस सूक्ति के

अनुसार वीर योद्धा की भाँति अपने आत्म-चिंतन मे प्रतिपल ऊर्ध्वमुखी होते जा रहे थे। शरीर भले ही कृश हो गया पर हमारे चरितनायक तपस्वीराज के चेहरे पर आकुलता-व्याकुलता किंवा घबराहट कभी नजर नही आई। समता योग से प्लावित खिला-खिला-सा हो आपश्री का आनन रहता था। सचमुच तपोधनी श्री जी का आत्मिक पुरुषार्थ महान् था।

सेवा मे रत श्रद्धेय आत्मार्थी श्री बसन्तमुनि जी महाराज एव महासती जडावकुँवरजी महाराज आदि सतियो को अन्तिम पर्युपासना करने का अनुपम लाभ प्राप्त हुआ। जिन्हे सेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ वे आत्माएँ (साधक-साधिकाएँ) अभिनन्दनीय है।

गभीर हालत को देखकर चतुर्विध सघ ने दवा लेने का अनुरोध किया तब तपस्वीराज ने फरमाया—

मैं तप-सयम की दवा ले रहा हूँ, मेरी यही- खुराक है। इसी मे मेरा हित है। डॉक्टर-वैद्य की दवा लूँगा तब भी यह शरीर छोडना पडेगा और न लूँगा तब भी जाना है, फिर तप की दवाई लेना ही श्रेयस्कर है। इस शरीर का अब अन्तिम समय है, जितना भी माल ले लूँ अच्छा है। अन्तिम दवा रही है—वह है सथारा। उसे ग्रहण करना ही सच्ची दवा है। जिस प्रकार इस महान् मोक्ष-मार्ग मे अनेक उत्तम आत्मा पुरुषार्थ पराक्रम कर चुकी हैं। यह मार्ग भूतकाल मे अनेक वीरो-धीरो द्वारा सेवित होने से शकादि रहित है।

"पणया वीरा महावीहि।"

(—भगवान महावीर—आचाराग सूत्र)

चरे पयाइ परिसकमाणो, ज किंचि पास इइ मण्णमाणो।
लाभन्तरे जीविय बूहइत्ता, पच्छा परिन्नाय मलावधसी॥

अर्थात्—सयम (पदो) यात्रा मे दोष लगने के भय से परिशकित हुआ, लगे हुए यत्किंचित् दोष को भी ससार मे पाशरूप मानता हुआ, इस शरीर से जब तक ज्ञानादि का लाभ हो सकता है तब तक इसकी वृद्धि करता हुआ इस शरीर के अन्त का निश्चय करके प्रत्याख्यान के द्वारा अनशन के द्वारा कर्म मल को दूर करने का प्रयत्न करे।

(—भगवान महावीर उत्तरा० सू० अ० ४, गा० ७)

भगवान महावीर के पावन दर्शन के अनुसार शुभ सकल्प सजोकर माघ माह के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी के दिन सन्ध्या के समय चतुर्विध सघ

की उपस्थिति मे आपने जीवन पर्यंत के लिये सथारा स्वीकार कर लिया। उस अवसर पर सेवा मे विराजित तपस्वी श्री बसन्त मुनिजी महाराज एव सती वृन्द ने भी तपस्वीराज श्री गणेशमल जी महाराज के मुखारविंद से अट्ठम तप के प्रत्याख्यान लिये। अन्य अनेको भाई-बहनो ने भी तेले ग्रहण किये।

पौद्गलिक शरीर उत्तरोत्तर शिथिल हो रहा था, किन्तु उनके भावो मे ऊर्ध्वारोहण चल रहा था। आचाराग सूत्र के अनुसार—"मुणिणो सयय जागरति।" मुनि जन सदैव सयम भाव मे जागते रहते है तदनुसार कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज शारीरिक व्याधि से तनिक भी घबराये नही। न जीवित रहने की इच्छा करते हुए और न मरण भय से मुक्त होने की काक्षा रखते हुए समता-सुधा का पान करने मे शात-भाव मे निमग्न थे।

इस तरह २०१८ माघ वदी अमावस्या के दिन ८ बजकर ४५ मिनिट पर कर्नाटक केशरी जी महाराज पार्थिव शरीर से सम्बन्ध विच्छेद कर उत्तम भावो मे स्वर्ग की महान् यात्रा पर चल दिये। जिनशासन का एक महान् रत्न सबको छोडकर दिव्यालोक मे विलीन हो गया। □□
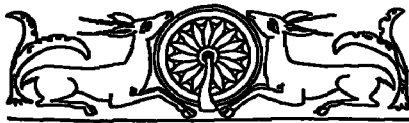
तपः_ गुरुनाथ कर्णाटक केसरी

श्रीगुरु - ग ेश - जीवन दर्शन

संस्मरण
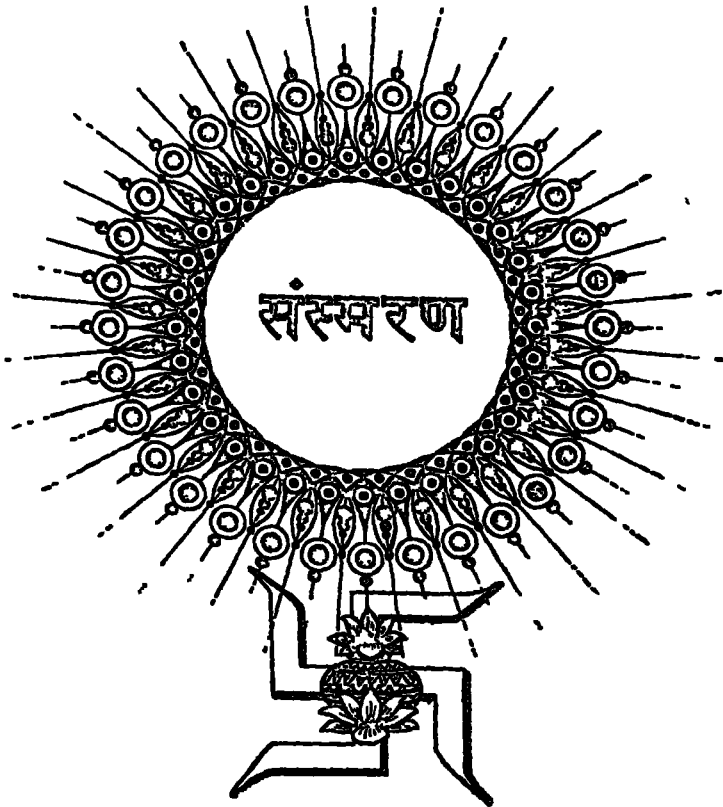
दिव्य व्यक्तित्व भव्य कृतित्व

गुणो की झिलमिलाती फ्रेम

मिथ्यात्वान्धकार-विनाशक, भास्कर सदृश देदीप्यमान प्रतिभा के धनी, प्रबल सन्मति प्रचारक, भव्य-प्रबोधक, प्रात स्मरणीय, कर्नाटक केशरी, श्रद्धेय, तपस्वीराज श्री गणेशमलजी महाराज के पावन दर्शन से लाभान्वित होने का सौभाग्य मुझे (रमेश मुनि) कर्नाटक प्रात मे अरसी खेडा तथा बाणा-वार नगर मे मिला था। उन दिनो मेरा बचपन बाणवार नगर मे विकसित हो रहा था। एकत्व भाव मे भावित भव्यता की प्रतिमूर्ति तपस्वीराज विहार करते हुए जब बाणावार पधारे थे तब आपश्री ने मुझे गुरु मन्त्र (आम्नाय-व्यवहार समकित विधि) का प्रतिबोध प्रदान किया था, साथ ही गुरु पाद-पद्मो मे दक्षिणास्वरूप पाच उपवास करने का भी फरमाया था। यद्यपि यह बात ३० वर्ष पूर्व की है, फिर भी मेरी स्मृति मे सुरक्षित है।

श्याम वर्णमडित लम्बा कद, छत्राकार सुहावना मस्तक, उन्नत ललाट, विशाल कर्ण युगल, आजानु बाहु, तप पूत चेहरे पर अठखेलियाँ करती हुई मुस्कान, मुखारविंद नि सृत सुधा स्रोत, सतत शातिदायक नेत्र प्रभा, भयभीतो को अभय दिलाने वाले युगल करकमल, यतनापूर्वक गति करने वाले चरण—इस प्रकार सभी सुन्दर सयोगो से आच्छादित एक अनुपम आकर्षणयुक्त शरीर का निर्माण जो बाह्य व्यक्तित्व को प्रगट कर रहा था। जैसा बाह्य व्यक्तित्व था वैसा आन्तरिक जीवन भी जिनका भव्य-नव्य पावन था जो चुम्बक के समान प्रत्येक आगन्तुक परिचित-अपरिचित महानु-भावो को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता हुआ जिनधर्मानुरागी बना लेता था। जिन्हे श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन समाज ही नही अपितु जैनेतर भी खद्दरधारी, बाबाजी, कर्नाटक केशरी श्री गणेशमलजी महाराज के नाम से जानते है।

उस कृश काया (शरीर) पर सुशोभित, मन-मोहक समता का प्रतीक स्वरूप साधु का निर्मल परिवेश, मुँह पर मुँहपत्ती, तन पर धवल शुद्ध खादी की चादर—चोलपट्टा, हाथ मे रजोहरण, बलिष्ट कन्धो पर हस्तलिखित आगम-मजूषा तथा एक हाथ मे सपात्र झोली। इन बाह्य अल्प उपकरणो, अल्प वस्त्रो से आवृत था उन महामना तपस्वी योगीराज के साधक-जीवन

का दृश्यमान रूप, तो आध्यात्मिक अन्तर्मु खी जीवन की सुमजुल झिलमिलाती झाकी और तेजस्वी, यशस्वी प्रतिभा की ज्ञानमय छवि जो बाह्य व्यक्तित्व की अपेक्षा काफी उच्चता की ओर बढ रही थी। सहज सरलता, आत्मिक सहिष्णुता, उच्चतम समता, शास्त्रोक्त स्पष्टता जिनके जीवन की अनमोल धरोहर थी, निधि थी। हृदयस्पर्शी-सन्मार्गोपदेशक, विवेक-व्यवहार मे कुशल साधक, परीषह विजेता, उग्रविहारी, कठोर तपस्वी, देव पूजनीय, जिनशासन-प्रभाकर, शासनाधीश प्रभु महावीर के चतुर्विध सघ को समर्पित, परम श्रद्धावान, ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप त्रिवेणी-सगम तीर्थ, सद्धर्म प्रदीप, जैन समाज के कल्पतरु, चितामणि रत्न सदृश जिनका अन्तर्जगत अच्छी तरह आलोकित था।

ऐसे महामना मुनिपु गव तपस्वीराज का आदरणीय व्यक्तित्व हिमालय की तरह जितना उत्तु ग था, उतना ही सागर की भाति गहरा था, विशाल था। चन्द शब्दो मे कहूँ तो महान्-महानतर, गुरु-गुरुतर।

आचार-विचार-समन्वित निर्मल छवि

उस छोटे से पार्थिव दीवट मे स्थित आत्म-कोष मे एक विशाल-विराट् व्यक्तित्व समाहित था। प्रतिदिन प्रतिवर्ष सैकडो, हजारो नर-नारियो ने आपको पहले भी देखा व बाद मे भी, दूर से समीप से, बाहर से भीतर से, रात मे दिन मे, बालक ने वृद्ध ने, विद्वानो ने अज्ञो ने, जिसकी भी उन पर दृष्टि गई सभी को उनकी आचार-विचार-व्यवहार सहिता मे यथावत् रूप ही दृष्टिगोचर हुआ। वस्तुत जीवन की एकरूपता, व्यवहार-कुशलता ने सभी को प्रभावित कर ही लिया। बाहर कुछ, भीतर कुछ, मन मे कुछ, वाणी मे कुछ, सभा मे कुछ, एकान्त मे कुछ ऐसा दुहरापन उन तपस्वीराज मे नही था।

जिसके द्वारा पावत्त जीवन मलिन होकर अधम गति को प्राप्त करता है ऐसा दभ तथा मायाचार जब ससारी जीवो को भी अनाचरणीय है तो साधक का लक्ष्य उस ओर होगा भी कैसे? वह तो उससे सदा-सर्वदा दूर रहने का सकल्प तथा आचरण करेगा। दभ तथा माया को ज्ञानियो ने कुतत्त्व माना है। ये वक्रता के प्रतीक है। सरलता-विनम्रता के घातक है। तपस्वीराज के जीवन मे इन दोनो तत्त्वो को अर्थात्—दभ तथा माया को बिल्कुल स्थान नही था। कोई भले ही बुरा माने वे स्पष्ट कहने मे कभी हिचकिचाहट का अनुभव नही करते थे। आप स्वय शुद्ध आचारी, व्यवहारी थे, साथ ही जो भी आपके सम्पर्क मे आता उसे सम्यक् राही बनाने का सदैव प्रयत्न करते थे। अनाचार से मुक्ति दिलाकर सदाचार मे स्थापित

करना ही आपश्री का काम था। ज्ञान और क्रिया के एकीकरण ने ही आपको महानता की भूमिका पर आसीन किया था। कई वार आपश्री कहा करते थे—

"ज्ञान भार क्रिया विना, क्रिया निष्फला ज्ञान विना।"

अर्थात्—क्रियाहीन ज्ञान भारभूत है और ज्ञान विहीन क्रिया निष्फल है। साधक जीवन मे ज्ञान और क्रिया का सगम होने पर "सोने मे सुगन्ध" जैसी आदरणीय बात बन जाती है।

कहा भी है—

एगनेण निसेहो जोगेसु न देसिओ विवि वाऽवि।
दलिअ पप्प निसेहो होज्ज विहि वा जहा रोगो॥

(—ओघनिर्युक्ति ५५)

जिनशासन मे न तो एकान्त रूप मे किसी क्रिया का निषेध है और न विधान ही है। परिस्थिति को देखकर ही उनका विधान या निषेध किया जाता है, जैसा कि रोग मे चिकित्सा के लिए।

कर्नाटक केशरी पद

मन मे एक कल्पना उठी कि हमारे चरितनायक को केवल "कर्नाटक केशरी" ही क्यो कहा जाता है? महाराष्ट्र केशरी क्यो नही? जब कि महाराष्ट्र प्रान्त आपश्री की प्रमुख विहारस्थली रही है। इसी प्रकार राजस्थान केशरी क्यो नही? क्योकि—मातृभूमि का गौरव राजस्थान को था।

कर्नाटक प्रात मे हजारो जैन परिवार आज भी हैं तथा पूर्व मे भी अपनी-अपनी सुविधानुसार जहाँ-तहाँ बसे हुए थे। साधुमार्गी सत-मुनिराजो के समागम के बिना अनेको जैन परिवार अपनी मूलभूत शुद्ध परम्परा से विमुख हो गये, कई विधर्मी बन गये, अनेको मूर्ति-पूजन मे लग गये, इस प्रकार सघ की दशा दयनीय स्थिति मे जा पहुँची। शुद्ध आचार-विचार परम्परा का विलुप्त जैसा वातावरण बन गया। खान-पान मे भी परिवर्तन आ गया। ऐसे अवसर पर परम श्रद्धेय तपस्वीराज श्री गणेशमल जी म० ने उग्र विहार करके सन्मार्ग प्रदान करने हेतु कर्नाटक प्रात को अपने चरणो से पावन किया था। कर्नाटक प्रात के उन जैन नामधारियो को पुन आपश्री ने अपनी ओजस्वी सम्यक् धर्मवर्षिणी पीयूष धारा (वाणी) से जागृत किया। आपकी बलवती प्रेरणा प्राप्त कर कर्नाटक सजग हो गया। स्थानकवासी सघो ने ही नही अपितु जैनेतर भाइयो ने भी आपके शुभागमन का स्वागत किया।

प्राचीन इतिहास के पन्ने साक्षी दे रहे है कि—आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी ने जिस प्रकार कर्नाटक प्रात मे पधार कर जैन धर्म का तेजस्वी प्रचार-प्रसार किया, उन्होने न विरोध को महत्त्व दिया न विनोद को, न सत्कार की चाह की, न तिरस्कार करने वाले पर द्वेष, न भूख की चिन्ता की, न प्यास की, न आराम चाहा, न नाम, केवल जैन धर्म की प्रभावना की अभिवृद्धि का ही उनका परम-चरम लक्ष्य था। कुछ ही वर्षों मे कर्नाटक प्रात के गाँव-गाँव, नगर-नगर मे "णमो अरिहताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्व साहूण" की मधुर स्वर लहरियाँ गूँजने लगी। अहिसा परमो धर्म के डके बजने लगे। तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की जयकारो से अनन्त आभा मण्डल प्रतिध्वनित होने लगा। सद्धर्म की अद्वितीय प्रभावना के प्रस्तोता आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी को कर्नाटक प्रात के प्रबुद्ध वर्ग ने उस समय "कर्नाटक केशरी" पद से विभूषित किया था। इस प्रकार का उल्लेख आज भी कन्नड भाषा के जैन साहित्य मे उपलब्ध होता है। ऐसा हमारे सुनने मे आया है।

मेरी दृष्टि मे उसी परम्परा का यह अनुकरण है। यह उसी शृखला की जुडती हुई कडी है। तपस्वीराज को भी "कर्नाटक केशरी" पद से समालकृत करके कर्नाटक के सघो ने जिनशासन की श्लाघनीय प्रभावना मे योगदान दिया है। वास्तव मे यह कार्य अनुमोदनीय कृत्य है। "गुणिषु प्रमोदम्।" के अनुसार गुणी आत्माओ के प्रति प्रत्येक सघ को स्वाभिमान होना ही चाहिये। कर्नाटक केशरी तपस्वीराज ने अनुकूल तथा प्रतिकूल वातावरण मे भी डटकर कर्नाटक प्रात मे शुद्ध स्थानकवासी जैन परम्परा का आरोपण किया, यह बात किसी से छिपी हुई नही है। जो श्रावक-श्राविका अपनी प्राचीन परम्परा भूल गये थे उन्हे पुन सम्यक्धर्म का सदेश देकर मुँहपत्ति बाँधना सिखाया। इतना ही नही मुँहपत्ति के सन्दर्भ मे आगम का प्रमाण देकर समझाया कि—"मुँहपत्ति जिनधर्मी को बाँधना आवश्यक है।" मिथ्यात्व तथा समकित का यथार्थ रूप भी स्पष्ट किया अर्थात् दोनो तत्वो मे कौन सा हेय तथा उपादेय है? दोनो से लाभ, हानि कितनी है? इसका सम्यक् ज्ञान कराया (दिया) फलस्वरूप सैकडो-हजारो भव्यात्माएँ मिथ्यात्वान्धकार से हटकर समकित के पथ पर चल पडे।

"केशरी" विशेषण क्यो?

जहाँ तक मैं सोचता हूँ—"केशरी" शब्द बेजोड शक्ति का प्रतीक है। केशरी सिंह को कहते हैं। जैसे—वह वन मे अकेला ही परिभ्रमण करता है, न

किसी से पराजित होता है और न किसी से भय ही खाता है। 'केशरी' निर्भयता का वाचक है। उसी प्रकार आत्मिक बल की दृष्टि से तपस्वीराज बेजोड शक्तिसम्पन्न थे। जिनका मनोबल धार्मिक क्रिया-कलापो मे कभी भी थका नही, शिथिल नही हुआ। जिनकी सिंहगर्जना-सी ललकार सैकडो-हजारो नर-नारियो को एक साथ स्तब्ध कर देती थी। अनेको वादी-प्रतिवादी आप श्री के सामने टिक नही पाते थे। मुँहपत्ति तथा मूर्ति के सम्बन्ध मे कई बार चर्चा-वादियो को आह्वान किया, पर किसी को उनके सामने आने की हिम्मत नही हुई। केशरीसिंह की भाँति हमारे चरितनायक श्री जी महाराष्ट्र तथा कर्नाटक प्रात मे निडरतापूर्वक धर्म का प्रचार-प्रसार करते रहे। हजारो भूले-भटके नर-नारियो को सम्यक् प्रतिबोध प्रदान कर उन्हे सम्यक्त्व-धर्म मे जीना सिखाया। मुँहपत्ति तथा खादी का अनुमोदनीय प्रचार किया।

श्रीफल से कठोर—मृदु

किसी भी महाराष्ट्र किंवा कर्नाटक के सपर्क मे आने वाले जैन-जैनेतर भाई से पूछेंगे कि—खद्दरधारी गुरु गणेश का स्वभाव कैसा था ? उत्तरदाता तपाक से यही कहेगा—"वे बडे उग्र स्वभावी थे। प्रत्येक व्यक्ति इसी कारण उनके निकट नही आ पाते थे। बहुत से भय के मारे सामने आ भी नही पाते, कदाचित कोई मिल जाता तो अपने को छिपाने का प्रयत्न करता।" कोई कभी यो भी सोचता—"सामने जायेंगे तो कही तपस्वीराज कुछ फटकार देंगे।"

मैंने जहाँ तक समझा है—उनका स्वभाव ऐसा नही था, यह समझने की कमी है। जब अन्तर् को भ्राति हटायें तो पता चलेगा कि—कर्नाटक केशरी जी महाराज आध्यात्मिक साधना-आराधना से ओत-प्रोत थे। सूर्य प्रकाश की तरह उनका जीवन स्पष्टत दृष्टिगोचर होता है। वे श्रीफल की तरह बाहर मे कठोर तथा भीतर मृदु स्वभावी थे। कठोरता मे भी हित रहा हुआ था।

वे केवल कठोर स्वभावी ही थे, ऐसा मानना भूल होगी, उनके साथ अन्याय होगा। कठोरता तथा कोमलता के समन्वित रूप थे हमारे चरितनायक बाबाजी श्री गणेशमलजी महाराज। वस्तुत आपके वाणी-प्रवाह मे कठोरता-कोमलतारूप गगा-यमुना का मधुर स्मित स्रोत सदा-सदा गतिमान था। आपकी अन्तर्मुखी साधना, आध्यात्मिक जीवन की सुदृढता, सचमुच स्नेह, शान्ति तथा सगठन शक्ति के प्रतीक स्वरूप थी, जिस साधना मे स्व तथा पर का कल्याण निहित था। बडे-बडे नगरो से लगाकर छोटे से छोटे

गॉवो मे परिभ्रमण करके आपश्री ने अनैक्यता, मिथ्यात्व, अशान्ति तथा अज्ञानता को मिटाने का प्रयास किया, जिसमे काफी हृद तक आप सफल हुए। स्नेह, शान्ति, सगठन एव सहयोग धर्म की पवित्र धारा प्रवाहित करके भगवान महावीर के निम्न सदेश को कार्यान्वित किया—

बुद्धे परिनिव्वुडे चरे गामगए नगरे व सजए।
"सतिमग्ग च बूहए" समय गोयम मा पमायए॥
(उत्तरा० १०/३६)

सुई का कार्य दो खण्ड वस्त्रो को जोडकर अखण्ड बनाने का है। बिछडे हुए स्वधर्मी बन्धुओ को फटकार के साथ मधुरता बरसाते हुए उन्हे स्नेह-सगठन-सद्भावना के एक सूत्र मे आबद्ध करने का ओजस्वी-तेजस्वी कार्य हमारे चरितनायक ने किया। ऐसे प्रशस्त कार्यों के लिए तपस्वीराज के सुदृढ कदम सक्रिय रहते। वस्तुत बाबाजी महाराज (गुरु गणेश) प्रकृति के सरल-भद्र, मन के मृदु-मीठे थे, इसी कारण आपको समाज मे, परिवार मे तथा सघ मे सदैव एकता-प्रेम-मैत्री तथा अपना दैनिक शुभ आचार धर्म अभीष्ट था। कही कभी ऐसा सुनने मे नही आया कि—"कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेश मल जी महाराज ने अमुक गाँव मे सम्प्रदायवाद का बीजारोपण किया या सघ मे बिखराव की स्थिति का निर्माण किया।" यह तपस्वीराज की महानता-उदारता की निशानी है। सकीर्ण विचारधारा को आपने अपने निकट कभी आने ही नही दिया, आपकी विराट् दृष्टि मे समस्त स्थानकवासी समाज का सर्वोदय समाहित था। ऐसे थे हमारे चरितनायक कठोर के साथ किसमिस (द्राक्षा) के समान मृदु मधुर तपस्वीराज।

स्वाध्याय ही ि ा भोजन था

जैन द्वादशागी पर गुरु गणेश की पूर्ण श्रद्धा-निष्ठा थी। अहिंसा-अनेकान्त-अपरिग्रह-सम्यक्दर्शन आदि तत्वो पर आपश्री का अत्यधिक स्वाभिमान था। शास्त्र-स्वाध्याय के प्रति आपकी रुचि ज्यादा थी। अनेको बार भक्तो को यही देखने को मिलता कि अकाल के पश्चात् अवकाशानुसार नियमित रूप से तन्मयतापूर्वक स्वाध्याय-चिंतन-मनन आपश्री का चलता ही रहता। वर्षावास काल मे आप अधिकाधिक आगमो का अनुशीलन-परिशीलन करने मे ही लगे रहते। सेवा मे स्थित सत-सतीवृन्द को भी आगम-वाचना प्रदान करते समय आपश्री फरमाते—

"सुयस्स आराहणाए ण अन्नाण खवेई।"
(—भगवान महावीर—उत्तरा० २९।५९)

श्रुत देव की आराधना करने से अज्ञान-दशा की इति होती है। समस्त दु खो से मुक्ति मिलती है। और भी कहा है—

"सज्झाए वा निउत्तेण सव्व दुक्खविमोक्खणे ।"

(—उत्तरा० २६/१०)

इतना ही नही, आपश्री ने अपने हाथो से ३२ शास्त्र लिखे है। "खण जाणाहि पडिए।" उक्त सूत्र के महत्त्व को सम्यक् प्रकार से समझकर आपने अपना अमूल्य समय का सदुपयोग अत्यधिक रूप से शास्त्र लेखन मे लगाया। आप द्वारा हस्तलिखित बत्तीसी आज भी कोटा सम्प्रदाय के सती वृन्द के पास मौजूद हैं, जो आगम भण्डार की एक अनमोल निधि तथा साहित्य कोष दुष्प्राप्य की थाती है।

तपोद्यान का सुवासित सुमन

सभी ससारियो की चैतन्य ऊर्जा अनन्त कर्मास्रव पुद्गलो से आवृत है। "तवसा निज्जरिज्जइ, तपसा क्षीयते कर्म।" अर्थात्-तपोयोग के द्वारा उसे अनावृत किया जा सकता है। आत्मानन्द मोह के द्वारा विकृत बना हुआ है, उसे तपोयोग के द्वारा विशुद्ध किया जा सकता है। जीवात्मा की अनन्त शक्ति अन्तराय कर्म के द्वारा आच्छादित हो चुकी है, तपोयोग ही जिसके लिये एक सबल साधन है प्रगट करने का। तपोद्यान मे रमण करना ही सच्ची साधना-आराधना है। इसी प्रेरणा से प्रेरित होकर तपस्वीराज तपाराधना के विराट् क्षेत्र मे कदम बढाते रहे।

दीक्षित होने के बाद आपश्री ने स्वाध्याय, चिंतन तथा तपाराधना मे विशेष रुचि ली, जिसका उल्लेख मैंने पूर्व प्रसग मे किया है। दस वर्ष पर्यंत आपने एकासना (एक बार भोजन करने की विधि) तप किया, उसके बाद आपकी भावना एकान्तर उपवास मे दत्तचित्त हो गई। उपवास के दिन ५० मील तथा पारणे के दिन चालीस मील की लम्बी-लम्बी मजिल तक करने की विराट क्षमता आपश्री मे अनुपम ही थी। उपवास तथा पारणे के दिन इतने लम्बे-लम्बे विहार करना आपके आत्मिक बल का महान् परिचायक था। एकान्तर तप का अजस्र स्रोत जीवन के अन्तिम क्षणो तक गतिशील रहा।

तपोद्यान का एक सुवासित सुमन तप साधना मे अनुपम आनन्द की अनुभूति मे लगा हुआ था। तप सौरभ को पल-पल बढाता जा रहा था। वही तप सौरभ जन-जन मे अपरिमित रूप से व्याप्त हो गई। आत्म-साधना, आराधना के तेज के कारण ही सैकडो प्रेतात्माएँ आप से क्षमा मागकर अपने

गाँवो मे परिभ्रमण करके आपश्री ने अनैक्यता, मिथ्यात्व, अशान्ति तथा अज्ञानता को मिटाने का प्रयास किया, जिसमे काफी हद तक आप सफल हुए। स्नेह, शान्ति, सगठन एव सहयोग धर्म की पवित्र धारा प्रवाहित करके भगवान महावीर के निम्न सदेश को कार्यान्वित किया—

बुद्धे परिनिव्वुडे चरे गामगए नगरे व सजए।
"सतिमग्ग च बूहए" समय गोयम मा पमायए ॥
(उत्तरा० १०/३६)

सुई का कार्य दो खण्ड वस्त्रो को जोडकर अखण्ड बनाने का है। बिछडे हुए स्वधर्मी बन्धुओ को फटकार के साथ मधुरता बरसाते हुए उन्हे स्नेह-सगठन-सद्भावना के एक सूत्र मे आबद्ध करने का ओजस्वी-तेजस्वी कार्य हमारे चरितनायक ने किया। ऐसे प्रशस्त कार्यों के लिए तपस्वीराज के सुदृढ कदम सक्रिय रहते। वस्तुत बाबाजी महाराज (गुरु गणेश) प्रकृति के सरल-भद्र, मन के मृदु-मीठे थे, इसी कारण आपको समाज मे, परिवार मे तथा सघ मे सदैव एकता-प्रेम-मैत्री तथा अपना दैनिक शुभ आचार धर्म अभीष्ट था। कही कभी ऐसा सुनने मे नही आया कि—"कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेश मल जी महाराज ने अमुक गाँव मे सम्प्रदायवाद का बीजारोपण किया या सघ मे बिखराव की स्थिति का निर्माण किया।" यह तपस्वीराज की महानता-उदारता की निशानी है। सकीर्ण विचारधारा को आपने अपने निकट कभी आने ही नही दिया, आपकी विराट् दृष्टि मे समस्त स्थानकवासी समाज का सर्वोदय समाहित था। ऐसे थे हमारे चरितनायक कठोर के साथ किसमिस (द्राक्षा) के समान मृदु मधुर तपस्वीराज।

स्वाध्याय ही ि ा भोजन था

जैन द्वादशागी पर गुरु गणेश की पूर्ण श्रद्धा-निष्ठा थी। अहिंसा-अनेकान्त-अपरिग्रह-सम्यक्दर्शन आदि तत्वो पर आपश्री का अत्यधिक स्वाभिमान था। शास्त्र-स्वाध्याय के प्रति आपकी रुचि ज्यादा थी। अनेको बार भक्तो को यही देखने को मिलता कि अकाल के पश्चात् अवकाशानुसार नियमित रूप से तन्मयतापूर्वक स्वाध्याय-चितन-मनन आपश्री का चलता ही रहता। वर्षावास काल मे आप अधिकाधिक आगमो का अनुशीलन-परिशीलन करने मे ही लगे रहते। सेवा मे स्थित सत-सतीवृन्द को भी आगम-वाचना प्रदान करते समय आपश्री फरमाते—

"सुयस्स आराहणाए ण अन्नाण खवेई।"
(—भगवान महावीर—उत्तरा० २६।५६)

श्रुत देव की आराधना करने से अज्ञान-दशा की इति होती है। समस्त दु खो से मुक्ति मिलती है। और भी कहा है—

"सज्झाए वा निउत्तेण सव्व दुक्खविमोक्खणे।"

(—उत्तरा० २६/१०)

इतना ही नही, आपश्री ने अपने हाथो से ३२ शास्त्र लिखे है। "खण जाणाहि पडिए।" उक्त सूत्र के महत्त्व को सम्यक् प्रकार से समझकर आपने अपना अमूल्य समय का सदुपयोग अत्यधिक रूप से शास्त्र लेखन मे लगाया। आप द्वारा हस्तलिखित बत्तीसी आज भी कोटा सम्प्रदाय के सती वृन्द के पास मौजूद है, जो आगम भण्डार की एक अनमोल निधि तथा साहित्य कोष दुष्प्राप्य की थाती है।

तपोद्यान का सुवासित सुमन

सभी ससारियो की चैतन्य ऊर्जा अनन्त कर्मास्रव पुद्गलो से आवृत है। "तवसा निज्जरिज्जइ, तपसा क्षीयते कर्म।" अर्थात्-तपोयोग के द्वारा उसे अनावृत किया जा सकता है। आत्मानन्द मोह के द्वारा विकृत बना हुआ है, उसे तपोयोग के द्वारा विशुद्ध किया जा सकता है। जीवात्मा की अनन्त शक्ति अन्तराय कर्म के द्वारा आच्छादित हो चुकी है, तपोयोग ही जिसके लिये एक सबल साधन है प्रगट करने का। तपोद्यान मे रमण करना ही सच्ची साधना-आराधना है। इसी प्रेरणा से प्रेरित होकर तपस्वीराज तपाराधना के विराट् क्षेत्र मे कदम बढाते रहे।

दीक्षित होने के बाद आपश्री ने स्वाध्याय, चिंतन तथा तपाराधना मे विशेष रुचि ली, जिसका उल्लेख मैंने पूर्व प्रसग मे किया है। दस वर्ष पर्यंत आपने एकासना (एक बार भोजन करने की विधि) तप किया, उसके बाद आपको भावना एकान्तर उपवास मे दत्तचित्त हो गई। उपवास के दिन ५० मील तथा पारणे के दिन चालीस मील की लम्बी-लम्बी मजिल तक करने की विराट क्षमता आपश्री मे अनुपम ही थी। उपवास तथा पारणे के दिन इतने लम्बे-लम्बे विहार करना आपके आत्मिक बल का महान् परिचायक था। एकान्तर तप का अजस्र स्रोत जीवन के अन्तिम क्षणो तक गतिशील रहा।

तपोद्यान का एक सुवासित सुमन तप साधना मे अनुपम आनन्द की अनुभूति मे लगा हुआ था। तप सौरभ को पल-पल बढाता जा रहा था। वही तप सौरभ जन-जन मे अपरिमित रूप से व्याप्त हो गई। आत्म-साधना, आराधना के तेज के कारण ही सैकडो प्रेतात्माएँ आप से क्षमा मागकर अपने

रास्ते पर लग गई अर्थात् दूसरो को दु ख देना उन्होने छोड दिया। इस तरह स्थान-स्थान पर आपश्री को विजयश्री मिलती गई।

निडर सदुपदेशक

"साफ कहना, सुखी रहना।" यह वाक्य प्रत्येक नर-नारियो के दिमाग मे नही बैठ पायेगा, जो आत्म-गुणाकाक्षी होगा वही इसके महत्व को समझेगा फिर इसका आचरण करेगा। क्योकि—सत्य हमेशा कटु होता है। कहा भी है—"अप्रियस्य पथ्यस्य वक्ता-श्रोता च दुर्लभा।" स्पष्ट कहने वाला खटकता है, किन्तु निष्पक्ष विचारो की कसौटी पर कसा जाय तो निष्कर्ष यही निकलेगा—"स्पष्ट कहने वाला दुश्मन नही अपितु परम हितैषी है।"

चरितनायक जी महाराज का स्वभाव ऐसा ही था, वे सदैव निर्वद्य स्पष्ट वक्तव्य देने मे कभी हिचकिचाते नही थे। साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाएँ किं वा इतर सेठ-साहूकार, राजा-रक कोई भी अधिकारी क्यो न हो, यदि वे अनुचित राह का अनुगमन कर रहे हो या दुराग्रह के दलदल मे उलझ रहे हो तो उन्हे सम्यक् राह पर लाने के लिये यथार्थ कटु सुनाने मे देर नही करते थे, कटु कहना भी पडे तो आप पीछे नही हटते थे।

आप अपनी व्याख्यान-सभा मे उपदेश-श्रवणार्थ आने वाले नर-नारियो को यही फरमाते—

"अति बारीक वस्त्र मत पहनो, मगल चिह्नो को छोडकर ज्यादा सोने के गहनो से लदकर मत आओ। अहिसा पोषक खद्दर के वस्त्रो का उपयोग करो। मुँहपत्ति लगाये बगैर मेरी सभा मे नही आना चाहिये। समकित रग से अपने जीवन को रगो, मिथ्यात्व को छोडो। कुदेव-कुगुरु तथा कुधर्म की आराधना ससार मे भटकायेगी इससे दूर रहो। अनार्य (पाश्चात्य) सस्कृति को मत अपनाओ, यह हितावही नही, अनिष्टकारक है। आर्य सस्कृति आत्म-कल्याणक है। 'मेरी सभा त्यागी की सभा है। यह कोई विवाह मण्डप नही है, जो ऐसे साज-धाज कर आती हो।" इस प्रकार नर-नारी दोनो को महाराज श्री स्पष्ट कहने मे कभी घबराते नही थे।

सादा जीवन उच्च विचार

हमारे चरितनायक तपस्वीराज की प्रकृति तथा प्रवृत्ति सादा जीवन उच्च विचारो पर आधारित थी। धार्मिक कार्यो मे जब निरर्थक आडम्बर होता देखते तो आप उसका खुलकर विरोध करते। जैसे—मुनियो के नगर-

प्रवेश के समय भारी जनता एकत्रित होना, विदाई के समय भी जनता की भीड, प्रसिद्धि के लिये पोस्टर छपवाना, दैनिक अखवारो मे प्रचार-प्रसार आदि आधुनिक उपकरणो, फोटुओ से आप सदैव दूर ही रहते थे। जहाँ लोकैषणा की चाह है, वही तो नाम की बुभुक्षा है। आपने लोकैषणा को कभी अपने जीवन मे स्थान ही नही दिया।

सादा जीवन जीने के लिये वेष-परिधान, खान-पान मे अत्यन्त सयम रखना पडता है, इसी कारण तपस्वीराज स्वय शुद्ध खद्दर के वस्त्रो का उपयोग करते और वह भी बहुत अल्प। जिस उत्तम कार्य का आपश्री ने सहृदय पालन किया, तत्कालीन समाज को तथारूप शिक्षा ही दी। आहार-शुद्धि पर भी आपश्री बहुत ध्यान रखते, आपका मन्तव्य ही बन गया था—"आहार शुद्धौ, विचार शुद्धि, विचार शुद्धौ आचार शुद्धि, आचार शुद्धौ सर्वशुद्धि।" आपके आध्यात्मिक सन्देश को प्राप्त कर अनेको भाई-बहनो ने विदेशी वस्त्रो को छोड दिया अर्थात् विदेशी वस्त्रो का परित्याग कर दिया, वे खादी पहनने लगे। आज भी वे खादी ही पहन रहे है।

"मुँह पर मुहपत्ति क्यो लगाना चाहिये?" उक्त प्रश्न का अनेको बार आपश्री ने समीचीन समाधान अपने उपदेश के माध्यम से किया—

सामायिक, पौषधव्रत, सवर, दया व्रत आदि साधनाकाल मे मुँह पर मुँहपत्ति बाँधनी ही चाहिये। मुँह पर बँधने वाले वस्त्र को ही मुँहपत्ति कहा है, हाथ मे रहने वाले वस्त्र को मुँहपत्ति नही हाथपत्ति कहा है। मुँहपत्ति के लिये आगम प्रमाण प्रस्तुत है—

मुहपोत्ति पडिलेहित्ता पडिलेहिज्ज गोच्छग।
गोच्छगलइयगुलिओ वत्थाइ पडिलेहए ॥

(—उत्तरा० २६, गा० ३२)

"हे साधक! मुखवस्त्रिका की प्रतिलेखना करने के बाद गोच्छक (रजोहरण) की प्रतिलेखना कर।"

महाराष्ट्र तथा कर्नाटकप्रान्त मे आपश्री ने मुँहपत्ति बाँधने का प्रभावपूर्ण प्रचार किया, जिसमे जैन लोगो ने तो मुँहपत्ति बाँधी ही, किन्तु सैकडो जैनेतर भी इससे वचित नही रहे। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी जनता को मुँहपत्ति का परिचय कराया, आपने कहा—आपरेशन करते समय डॉक्टर, नर्स अपने मुँह पर मुखवस्त्रिका बाँधते हैं, वह इसीलिये कि—अपने मुँह से निकलने वाली दुर्गन्धपूर्ण वायु मरीज के शरीर मे प्रवेश न करे। मदिरो मे प्रतिमा की पूजा करते समय भी पुजारी मुँह पर मुखवस्त्रिका बाँधता है।

आगम-ग्रथ-पुस्तक पढते समय भी इसी का प्रयोग होता है। यह विवेक-सभ्यता का प्रतीक भी है। सामायिक-प्रतिक्रमण तथा आत्मिक चर्चा ही यथार्थ मे पूजा है, भाव-पूजा के लिये मुँहपत्ति अत्यन्त आवश्यक है। तपस्वीराज ने सैकडो-हजारो व्यक्तियो के मुँह पर मुँहपत्ति बँधाकर जिनशासन की महती प्रभावना की।

सफल सर्जक तपस्वीराज

स्व-पर कल्याणक सर्वोदय भावनापरक सन्देशक तपस्वीराज हिंसक कृत्यो को बन्द कराने के लिये सदैव कटिवद्ध रहते थे। जहाँ कही भी हिंसक कृत्य होता हुआ दिखता, आपका अन्तर्मन सिहर उठता। गो को भारतीय सस्कृति मे माता का पद देकर पुकारा गया, उसे ही लोगो को निर्दयता-पूर्वक कत्ल करते देखा तब आपसे रहा नही गया। तत्कालोन जैन समाज को उद्बोधन देते हुए फरमाया—

"भगवान महावीर के शासन काल मे जिनधर्मोपासक लोग अपने अधिकार मे वडे-बडे गोकुल रखते थे, जिसमे गाया का यथोचित पालन होता साथ ही दूध-दही-घी भी शुद्ध मिलता। शुद्ध वस्तु मिलने से शरीर स्वस्थ रहता, "पहला सुख निरोगी काया।" जब शरीर स्वस्थ रहता तो धर्माराधना मे भी स्थिरता और हजारो गायो को जीवन दान मिलता था। आनन्द जी, कामदेव जैसे धनाढ्य श्रावको ने गोमाता का पालन किया और आज का श्रावक समाज परमार्थ रूप गायो के पालन की व्यवस्था भी नही कर पाता है। भगवान महावीर के उपासक श्रावक के व्रतो का पालन करने वाले भी गोकुल की सुरक्षा का पूर्णतया ध्यान रखते थे, अब आपको गोरक्षा का ध्यान रखना है। गोशाला की व्यवस्था रहे तो नि सहाय गायो को भी सहारा मिल सके।"

हमारे चरितनायक तपस्वीराज के प्रभावोत्पादक प्रवचनो से प्रेरित होकर कर्नाटक प्रान्त के रायचूर जिले के अन्तर्गत कोप्पल नगर के सघ ने ता० ३/११/४४ मे "श्री महावीर जैन गोशाला" की स्थापना की। आज दिन तक उक्त गोशाला मूक प्राणियो की यथाशक्ति सुरक्षा मे कटिबद्ध है। कर्नाटक के महानुभावो के योगदान से वह प्रगति रत है।

इसी तरह जब आपश्री चौसाला (महाराष्ट्र) पधारे वहाँ एक कसाई ११ ग्यारह गायो को कत्लखाने मे ले जा रहा था, उससे वे गायें छुडवाई तथा वहाँ भी सघ ने "श्री महावीर जैन गोशाला" स्थापित की।

अहिंसा धर्म का प्रचार करते हुए अर्थात् मानवता प्रतीक दयाभाव की दुन्दुभि का उद्घोष करते हुए औरगाबाद सघ को प्रेरणा दी। वहाँ भी "श्री महावीर जैन गोशाला" का जन्म हुआ। वैसे ही पुण्यभूमि जालना मे भी "श्री महावीर जैन गोशाला" बनी। सभी गोशाला विस्तृत व सक्रिय है, सैकडो-हजारो गायो का जीवन निर्वाह आनन्द के क्षणो मे व्यतीत हो रहा है।

कहा है—

तो समणो जइ सुमणो भावेण य जइ ण होइ पावमणो।
सयणे अ जणे अ समो, समो अ माणावमाणेसु॥

(अनुयोगद्वार १३२)

—जो साधक मन से सुमन (निर्मल मन वाला) है, सकल्प से कभी पापोन्मुखी नही होता, स्वजन तथा परजन मे, मान एव अपमान मे सदा सम रहता है, वह श्रमण है। □

नागराज के साथ महाराज

कैसा विचित्र ससार है? पत्थर पर बने हुए सर्प की अर्चा करते है, दूध से नहलाते, फूलो की माला से उसे सजाते साथ ही उस कृत्रिम मूर्ति से डरते किन्तु यदि कही असली सर्प निकल जाय तो उसे पत्थर तथा डडे से पीटकर मार डालते हैं।

सत जीवन मारक नही तारक, उद्धारक है, विष नही अमृत-सा मधुर है। जो भी उनके चरण-शरण मे आता है वह निर्भय बन जाता है, नौनिहाल हो जाता है। वास्तविक जीवन की रसानुभूति का आस्वादन सत-शरण मे ही होता है।

एक बार विशुद्ध चारित्रात्मा कर्नाटककेशरी, श्रद्धेय सतरत्न, समकित भास्कर, हमारे चरितनायक श्री गणेशमलजी महाराज समकित धर्म का प्रचार करते हुए "शाहगढ" पधारे। उचित स्थान पर अपने उपकरणो को रखकर प्रतिलेखनापूर्वक ठहर गये। कुछ समय बाद ही न जाने कही से

एक विषधर विशाल सर्प निकलकर जहाँ तपस्वीराज विराजित थे वहाँ कुछ ही दूर फण फैलाकर बैठ गया बिल्कुल निर्भयतापूर्वक।

महामना मुनिपुगव की दया दृष्टि 'अभयदयाण' का प्रतिनिधित्व करने वाली थी। सर्पराज उनके निकट ही बैठा हुआ था। उन्होने उसे अच्छी तरह से देखा पर वे घबराने वालो मे से नही थे अपनी निर्मल दृष्टि से उसे देखा, जहाँ बैठे थे, वही बैठे रहे तथा अपने नित्य नियमानुसार आगम स्वाध्याय मे दत्तचित्त हो गये। विषधर भी स्वाध्याय का असीम आनन्द लूटने के लिये श्रावक की तरह जमकर बैठ गया, मानो फन फैलाकर शास्त्र नवनीत की रसानुभूति ले रहा हो।

सत तथा सर्प का एक स्थान पर अर्थात् बिल्कुल निकट का सहवास देखकर बहुत से लोग स्तम्भित आश्चर्यचकित से रह गये। सभी सोचने लगे—"कही यह जन्तु तपस्वीराज का अनिष्ट न कर बैठे। आखिर तो यह विषैला जीव है। निकट ही बैठा है, काट न खाय।" ऐसा विचार कर वे बोले—

"कृपासिन्धु! लगता है, यह स्थान यह सर्पराज के रहने का है, तभी तो निडरतापूर्वक बैठा हुआ है। इसीलिए हमारी विनम्र विनती है, आपश्री इस स्थान को छोडकर अन्य स्थान पर पधार जावें या फिर इसे यहाँ से हटा दें।"

तपस्वीराज ने फरमाया—"भगवान् के समवसरण मे देवी-देवता, नर-नारी, तिर्यंच-प्राणी, पशु-पक्षी, सिह-सर्प आदि विभिन्न जाति के जीव उपस्थित होते हैं। जन्मजात शत्रुता रखने वाले भी जब वहाँ शत्रु भाव भूल जाते है तो क्या गणेशिया की सेवा मे सर्प भी नही आ सकता? सभी सन्नी प्राणी को शास्त्र वाणी सुनने का अधिकार है। नर-नारी, पशु-पक्षी सभी को जिनवाणी सुनने का अवसर मिलना चाहिए। सर्पराज जिनवाणी सुनने आया है, इसे सुनने समझने दो। सुनने का आनन्द इसे भी लूटने दो, यह भी सुनने को आया है। इसकी प्रकृति-प्रवृत्ति से ऐसा लग रहा है—इसके मन मे सत के प्रति प्रीति है! स्नेह है! मैत्री है! तभी तो निर्भयता से मेरे निकट बैठा है। कितने ध्यान से सुन रहा है। यदि ऐसा न होता तो कभी का इधर-उधर चला जाता।"

दस बजे से आया हुआ नागराज लगभग चार बजे तक तपस्वीराज की सेवा मे बठा रहा। तपस्वीराज की प्रत्येक क्रिया-कलापो को देखता रहा मानो पूर्वभव का कोई परिचित हो।

अन्तत तपस्वीराज को कहना पडा—"नागराज ! तुम्हारी ओर से काफी सेवा हो गई। अब तुम अपने स्थान की ओर चले जाओ, मुझे विहार करना है, कही ऐसा न हो, मेरे जाने के वाद तुम्हे कोई अज्ञ व्यक्ति पीडा पहुँचावे, कष्ट दे। अत अपने गन्तव्य पथ को ओर वढ जाओ।" इतना कहने पर भी नागराज गया नही तब चरितनायक जी ने उसे मागलिक सूत्र सुनाया, बस मागलिक सूत्र श्रवण कर अपने फन नीचे को झुकाता हुआ मानो श्रद्धापूर्वक वन्दना करके चला गया।

सभी दर्शक देखकर दग रह गये, सभी बोले—

"हमने पहली बार अपने जीवन मे नागराज तथा महाराज का एक स्थान पर स्नेहपूर्वक समागम देखा है।" □

महान् उपकार

हमारे चरितनायक कर्नाटक केशरी श्री तपस्वीराज गणेशमलजी महाराज उदयमान भास्कर की तरह महाराष्ट्र प्रात मे जिनशासन की शोभा मे अभिवृद्धि कर रहे थे। अनेको ने आपश्री का सम्पर्क पाकर अपने अन्धकार-मय जीवन को प्रकाशमान बनाया तथा कइयो की बाहर की पीडा भी दूर हो गई।

महोपकारी करुणा सागर परमश्रद्धेय सत-रत्न आत्माओ का जीवन आत्मीय गुणो से सदैव ओत-प्रोत रहता है। कहा भी है—

वदन प्रसादसदन सदय हृदय सुधामुचो वाच।
करण परोपकरण येषा केषा न ते वन्द्या॥

—जिनका वदन आनन्द का सदन है, हृदय दया से ओत-प्रोत है तथा इन्द्रियाँ परोपकारिणी है, वाणी मे अमृत है, ऐसे सत पुरुष किसके वन्दनीय नही होते ?

गगाखेड (महाराष्ट्र) के निकट एक छोटा-सा गाँव है जिसका नाम 'दगड गाँव' है। वहाँ ओसवाल परिवार की बस्ती ज्यादा नही थी। एक ओसवाल परिवार के घर मे गणेशमल श्रावक की धर्मपत्नी श्रीमती कमला देवी जो लगभग १८ वर्षों से अस्वस्थ थी। उस बहन की शारीरिक शक्ति

प्रतिदिन कमजोर होती गई, शरीर गलता गया। अनेको प्रकार के इलाज (उपचार) कराये पर कोई अन्तर (फर्क) नही पडा। शारीरिक व्याधि यदि हो तो उपचार कारगर हो पर उसके शरीर मे न कोई पेट-दर्द, सिर-दर्द, बदहजमी, न क्षयरोग, न ज्वर, जलन, न परिवार की ओर से कोई चिन्ता या दु ख। घर के लोगो को बडी चिन्ता रहने लगी। सभी यही सोचते—बात क्या है जो यह गिरती जा रही है ? जब से ससुराल मे आई है तभी से बीमार की बीमार।

अन्ततोगत्वा तपस्वीराज की तप-जप-ध्यान-मौन की महिमा उनके कान तक पहुँची, सभी ओर से हताश-निराश श्रीमान् सुश्रावक गणेशमलजी अपनी धर्मपत्नी कमलादेवी को लेकर गुरु-गणेश महान् तपस्वीरत्न के समीप आये। उनके समीप अपनी धर्मपत्नी के बारे मे जो बात थी वह सारी बतलाई, साथ ही अच्छी होने के लिये आशा (अपेक्षा) चाही।

दूसरे दिन व्याख्यान मे ही व्यन्तर-शक्ति उछल-कूद करने लग गई।

तपस्वीराज ने बाई को अट्ठम तप (तेले) के प्रत्याख्यान करवा दिये तथा उस घूमने वाली से पूछा—

"तुम कौन हो, इस बाई को कब से और क्यो सता रही है ? सारी हकीकत सुना दो, फिर ही जा पाओगी।"

उसने कोई जबाव नही दिया तब अट्ठम से आगे तप बढा दिया—५—८—१०—१४ उपवास हो गये फिर भी नही बोली, अन्ततोगत्वा पन्द्रहवे उपवास मे व्यतर शक्ति घबरा गई, आखिर उसे बोलना ही पडा—

"ओ बाबा ! मुझे क्यो कष्ट देते हो ? मैं कोई जबरन नही आई हूँ। मुझे तो तेरह सौ रुपये का खर्चा करके बुलाया है तब आई हूँ। इसमे मेरा क्या-क्या दोष है ?"

"किसने बुलाया तुझे ?"

"इस (कमलादेवी) के चाचा ने पुतली-निम्बू-सूई आदि का टोटका करके अमुक वृक्ष के नीचे गाडकर मेरा आह्वान किया है तब मैं आई हूँ।" व्यतरी बोली।

"इसके चाचा ने ऐसा काम क्यो किया ? कमलादेवी से उसकी क्या दुश्मनी थी जो उसने ऐसा जघन्य कृत्य किया ? सही-सही बताना।" तपस्वीराज ने उससे पूछा।

"इसके चाचा को इच्छा दूसरे लडके के साथ विवाह कराने की थी। किन्तु—इसकी (कमलादेवी) की माँ ने गणेशमल के साथ विवाह कर दिया, यही उसको अखर गया, इससे उसने "भानुमती"—कामण-टोटका करके मुझे आह्वान किया। तभी से मैं इसके पीछे पडी हुई हूँ।" व्यतरी बोली।

"अब इसे छोडकर चली जा, इसे दु ख देकर क्यो पाप बाँध रही हे ? पहले पाप किया जिससे अधम निंदनीय योनि मिली अब फिर पाप मे हो पडी है, तेरी अगली गति भी इससे बिगड जायेगी। अब तेरा क्या विचार है जल्दी बोल दे ?"

"मैं इसे छोडने वाली नही ,हूँ इसे लेकर ही जाऊँगी।"

तपस्वीराज ने उसे १६वाँ उपवास करा दिया।

जब खाना-पीना बन्द होता गया तो भानुमती के पैर उखड गये, अन्तत हार मानकर उसने कहा—

"बाबा! तुम्हारी शक्ति के समक्ष मैं कुछ भी नही हूँ [पर मैं बँधी हुई हूँ अत अमुक वृक्ष के नीचे जो सामान गडा हुआ है उसे निकाल देंगे तो मैं बिल्कुल चली जाऊँगी, फिर कभी नही आऊँगी।"

हुआ वैसा ही, वृक्ष के नीचे से, जो सामान निकला वह जैसा उसने बताया था वैसा ही था। उसे एक ओर फैक दिया। उसी दिन से भानुमती ने विदाई ले ली। कमलादेवी का रोग दूर हो गया। २२ दिन के उपवास का पारणा कर बिल्कुल स्वस्थ हो तपस्वीराज का महान् उपकार मानकर अनेको प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान लेकर अपने घर लौटे। □

गरीब निवाज

'साच को आच नही।" जो सत्य राह पर चलने वाला होता है, उसकी कसौटी जरूर होती है किन्तु खतरा सत्य को कभी नही है, असत्य हारता है, सत्य जीतता है। कभी-कभी सत्यवादी पर मौत के घने बादल मडरा जाते हैं पर जब सत्य धर्म की महावायु चलती है तब असत्य के पैर उखडे बिना नही रहते। तभी तो प्राचीन महर्षियो ने कहा—"सत्यमेव जयते।"

गुनाह किसी अन्य ने किया किन्तु अज्ञात अवस्था मे एक निर्दोष मुस्लिम भाई के नौजवान लडके को जज ने फाँसी का हुक्म (आदेश) दे दिया। जिसने

हत्या को वह पैसे वाला था इसीलिये उसकी चल गई। उसने अपनी बात पैसो से जमा दी और उस मुस्लिम गरीब को फँसा दिया। गुनाहगार ने ऐसे गवाह खडे कर दिये जिससे फैसले मे उसकी जीत होने को पूर्ण सभावना बन पडी। अभी तारीख (पेशी) सुनवाई बाकी थी।

इधर उस गरीब मुसलमान भाई ने अपने निर्दोष लडके को बचाने का भरसक प्रयत्न किया, वकीलो के द्वार खटखटाये, अधिकारियो के पैर चूमे, छोटे-मोटे जोहजूरी करने वालो की दासता की, लेकिन किसी के दिल पसीजे नही। कोई भी उपाय कारगर नही बना। सभी ने ठुकराया, किन्तु किसी को उसे गले लगाने की हिम्मत नही हुई। ग्रहदशा ही जब उल्टी होती है तो अच्छा व्यक्ति भी बुरा लगता है। कलियुग का प्रभाव ही ऐसा है कि चद चाँदी के टुकडो के पीछे अच्छे-अच्छे व्यक्ति सम्यक् राह से फिसल जाते है। अपने स्वार्थ के लिये ईमान को बेच डालते है, किन्तु कैसा भी कलियुग आये, सत्य-सत्य ही रहेगा। हराम हारेगा, राम कभी नही।

किसी भले व्यक्ति ने उसे सलाह दी—

"यदि तू सच्चा है, तुझे अपना बच्चा बचाना है तो इन लोगो की गुलामी छोड दे। जैसा मैं कहूँ वैसा कर तुझे निश्चित सफलता मिलेगी, बोल कहे तो बताऊँ?"

"जरूर बताओ, तुम्हारे बताये हुए मार्ग पर चलने को हम तैयार है।" मुस्लिम भाई ने कहा।

"जैन मुनि (साधु) गणेश बाबा बडे ही चमत्कारी औलिया फकीर हैं। उनके पास बडी गजब की सिद्धि है, उन्होने कइयो के कार्य सिद्ध कर दिये है अपनी तप-साधना-आराधना से, पर किसी से कभी एक पैसा भी नही लिया। अनेको जोगी-फकीर-पीर उनकी साधना के समक्ष नतमस्तक होते है। वे सत्य कहने मे कभी घबराते नही। बडे-बडे सरकारी लोग भी जिनसे भय खाते हैं। उनके चरणो मे चले जाओ। तुम्हारा आया हुआ सकट टल जायगा। तुम अपनी सत्य हकीकत उनके सामने दिल खोलकर रख देना। उनके दिल मे भेद भाव नही है, वे केवल जैन किवा हिन्दू के ही उपकारी नही बल्कि-सभी मानवो के प्रति उनका आत्मीय भाव है। वे सर्वोदय की परम पावन भावना के उज्ज्वल प्रतीक है। सभी दुखियो की दया करना, सभी को नेक नसीहत देना ही उनका धर्म है। वे जैन मुनि इस समय औरगाबाद के जैन मन्दिर (स्थानक) मे ठहरे हुए है, अल्लाह की इबादत मे लगे हुए है। तुम

वहाँ पहुँच जाओ, वहाँ उनके चरणो मे जाने से तुम्हारे लडके का जीवन बच जायेगा।"

मुस्लिम भाई अपने लडके को लेकर औरगाबाद (महाराज) तपस्वी-राज के पावन श्री चरणो मे आया तथा बोला—

"बाबा! हम दु खी है, हमारी पुकार सुनो। मेरा लडका जो बिल्कुल निर्दोष है, कोई गुनाह नही किया पर विद्वेषी दोषी व्यक्ति ने जालसाजी करके इसे फँसा दिया हैं तथा जज की ओर से फाँसी का हुकुम होने वाला है। इसके लिये मैंने कइयो के सामने अपना पल्ला पसारा किन्तु इस गरीब की किसी ने नही सुनी अत हे गरीब निवाज! मेरी सुनकर मेरे बच्चे को कैसे बचाया जाय, इसका कोई रास्ता निकालो। हमारी रक्षा करो।"

"तुम्हारे लडके ने गुनाह नही किया है यदि यह सत्य है तो तुम्हे घब-राने की जरूरत नही। जो अन्याय का पक्ष लेता है, अन्याय करने वाले का पक्षधर बनता है वही हारता है, न्याय की विजय होती है। मैं कहूँ जैसा तुम करोगे तो अल्लाताला पर विश्वास रखो विजय वरमाला स्वत चरण चूमेगी।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"आप कहेगे वैसा हम करेंगे।" मुस्लिम भाई बोला।

"अच्छा तो सर्वप्रथम जीवन भर के लिये मास खाना छोड दो, किसी भी त्यौहार या ईद पर बकरा आदि नही मारना, न मरवाना। बस, ये दो बात खुदा की कसम खाकर मजूर करलो, तुम्हारा बाल भी बाका नही होगा।"

तपस्वीराज बाबाजी महाराज के इन वचनो की खुदा की कसम के साथ मुस्लिम भाई ने मजूर किया। गुरुदेव ने दोनो बातो के नियम दिये और कहा—"अब अपने घर चले जाओ पर प्रण के पक्के रहना और विश्वास रखना सत वचन पर, सत्य की सदा जीत हुई और होकर रहेगी।"

हुआ वैसा ही जज का मानस बदला वह सोचने लगा—

"मुझे सत्य का पक्ष लेना चाहिये था, किन्तु असत्य का पक्षधर बन-कर गुनाहगार को छोडकर निर्दोष व्यक्ति की जान ले रहा हूँ। यह मेरी ओर से महापाप हो रहा है, यह अन्याय है। फैसले को निरस्त करना ही मेरे जीने का सार है।"

बस, दूसरे ही दिन मुस्लिम भाई के लडके को बरी कर दिया गया। गुरु श्रद्धा से जीवन बच गया। पुन मुस्लिम भाई गुरुदेव के चरणो मे आये।

हत्या की वह पैसे वाला था इसीलिये उसकी चल गई। उसने अपनी बात पैसो से जमा दी और उस मुस्लिम गरीब को फँसा दिया। गुनाहगार ने ऐसे गवाह खडे कर दिये जिससे फैसले मे उसको जीत होने की पूर्ण सभावना बन पडी। अभी तारीख (पेशी) सुनवाई बाकी थी।

इधर उस गरीब मुसलमान भाई ने अपने निर्दोष लडके को बचाने का भरसक प्रयत्न किया, वकीलो के द्वार खटखटाये, अधिकारियो के पैर चूमे, छोटे-मोटे जीहजूरी करने वालो की दासता की, लेकिन किसी के दिल पसीजे नही। कोई भी उपाय कारगर नही बना। सभी ने ठुकराया, किन्तु किसी को उसे गले लगाने की हिम्मत नही हुई। ग्रहदशा ही जब उल्टी होती है तो अच्छा व्यक्ति भी बुरा लगता है। कलियुग का प्रभाव ही ऐसा है कि चद चाँदी के टुकडो के पीछे अच्छे-अच्छे व्यक्ति सम्यक् राह से फिसल जाते है। अपने स्वार्थ के लिये ईमान को बेच डालते है, किन्तु कैसा भी कलियुग आये, सत्य-सत्य ही रहेगा। हराम हारेगा, राम कभी नही।

किसी भले व्यक्ति ने उसे सलाह दी—

"यदि तू सच्चा है, तुझे अपना बच्चा बचाना है तो इन लोगो की गुलामी छोड दे। जैसा मैं कहूँ वैसा कर तुझे निश्चित सफलता मिलेगी, बोल कहे तो बताऊँ?"

"जरूर बताओ, तुम्हारे बताये हुए मार्ग पर चलने को हम तैयार हैं।" मुस्लिम भाई ने कहा।

"जैन मुनि (साधु) गणेश बाबा बडे ही चमत्कारी औलिया फकीर है। उनके पास बडी गजब की सिद्धि है, उन्होने कइयो के कार्य सिद्ध कर दिये है अपनी तप-साधना-आराधना से, पर किसी से कभी एक पैसा भी नही लिया। अनेको जोगी-फकीर-पीर उनकी साधना के समक्ष नतमस्तक होते है। वे सत्य कहने मे कभी घबराते नही। बडे-बडे सरकारी लोग भी जिनसे भय खाते है। उनके चरणो मे चले जाओ। तुम्हारा आया हुआ सकट टल जायगा। तुम अपनी सत्य हकीकत उनके सामने दिल खोलकर रख देना। उनके दिल मे भेद भाव नही है, वे केवल जैन किंवा हिन्दू के ही उपकारी नही बल्कि-सभी मानवो के प्रति उनका आत्मीय भाव है। वे सर्वोदय की परम पावन भावना के उज्ज्वल प्रतीक है। सभी दुखियो की दया करना, सभी को नेक नसीहत देना ही उनका धर्म है। वे जैन मुनि इस समय औरगाबाद के जैन मन्दिर (स्थानक) मे ठहरे हुए है, अल्लाह की इबादत मे लगे हुए है। तुम

वहाँ पहुँच जाओ, वहाँ उनके चरणो मे जाने से तुम्हारे लडके का जीवन वच जायेगा।"

मुस्लिम भाई अपने लडके को लेकर औरगावाद (महाराज) तपस्वी-राज के पावन श्री चरणो मे आया तथा बोला—

"बाबा ! हम दु खी है, हमारी पुकार सुनो। मेरा लडका जो विल्कुल निर्दोष है, कोई गुनाह नही किया पर विद्वेषी दोषी व्यक्ति ने जालसाजी करके इसे फँसा दिया है तथा जज की ओर से फाँसी का हुकुम होने वाला है। इसके लिये मैंने कइयो के सामने अपना पल्ला पसारा किन्तु इस गरीब की किसी ने नही सुनी अत हे गरीब निवाज ! मेरी सुनकर मेरे बच्चे को कैसे बचाया जाय, इसका कोई रास्ता निकालो। हमारी रक्षा करो।"

"तुम्हारे लडके ने गुनाह नही किया है यदि यह सत्य है तो तुम्हे घव-राने की जरूरत नही। जो अन्याय का पक्ष लेता है, अन्याय करने वाले का पक्षधर बनता है वही हारता है, न्याय की विजय होती है। मैं कहूँ जैसा तुम करोगे तो अल्लाताला पर विश्वास रखो विजय वरमाला स्वत चरण चूमेगी।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"आप कहेगे वैसा हम करेंगे।" मुस्लिम भाई बोला।

"अच्छा तो सर्वप्रथम जीवन भर के लिये मास खाना छोड दो, किसी भी त्यौहार या ईद पर बकरा आदि नही मारना, न मरवाना। बस, ये दो बात खुदा की कसम खाकर मजूर करलो, तुम्हारा बाल भी बाका नही होगा।"

तपस्वीराज बाबाजी महाराज के इन वचनो की खुदा को कसम के साथ मुस्लिम भाई ने मजूर किया। गुरुदेव ने दोनो बातो के नियम दिये और कहा—"अब अपने घर चले जाओ पर प्रण के पक्के रहना और विश्वास रखना सत वचन पर, सत्य की सदा जीत हुई और होकर रहेगी।"

हुआ वैसा ही जज का मानस बदला वह सोचने लगा—

"मुझे सत्य का पक्ष लेना चाहिये था, किन्तु असत्य का पक्षधर बन-कर गुनाहगार को छोडकर निर्दोष व्यक्ति की जान ले रहा हूँ। यह मेरी ओर से महापाप हो रहा है, यह अन्याय है। फैसले को निरस्त करना ही मेरे जीने का सार है।"

वस, दूसरे ही दिन मुस्लिम भाई के लडके को बरी कर दिया गया। गुरु श्रद्धा से जीवन बच गया। पुन मुस्लिम भाई गुरुदेव के चरणो मे आये।

तपस्वीराज के भक्त वनकर जैनाचार जैन साधु धर्म की सहिता को समझा तथा जिनोपासक वन गया और वोला—

"धन्य हो ऐसे महासाधक को जो नि स्वार्थ भावना से सभी प्राणियो के कल्याण की कामना के साथ उनका उसी रूप मे निर्माण करते है। गरीव निवाज ! आपके इस महान् उपकार को मैं जीवन पर्यंत नही भूलूँगा।" □

दैविक चमत्कार

जिनका जीवन हमेशा चोरी-डकैती मे बीता, ऐसे लोग पाप से भय नही खाते। चोरी के साथ हिंसा, हत्या, अत्याचार करना उनके लिये एक छोटी-सी वात होती है। जो तस्करी के धन्धे मे अन्धे बन जाते है वे भला-बुरा क्या है इसकी कुछ भी चिंता नही करते। उन्हे अपना स्वार्थ ही दिखता है। धनवानो को तो लूटते किन्तु कभी-कभी साधु-मुनिराजो के पीछे भी पड जाते है।

परम श्रद्धेय कर्नाटक केशरी चरितनायक सद्गुरु श्री गणेशमलजी महाराज एक बार दोण्ड (महाराष्ट्र) की ओर विहार कर रहे थे। राह मे उनके पीछे दो-तीन चोर लग गये क्योकि उन्होने यही सोचा—ये महात्मा धनवानो के गुरु है, इनके पास अवश्य धन होगा। बडे-बडे लोग इनके दर्शन करने आते है तो गुरु दक्षिणा मे रुपये-पैसे-सोना-चाँदी इनको चढाते ही होगे। बाबा की झोली भी मोटी है, सामान बहुत भरा हुआ है ऐसा लग रहा है। आज अच्छा अवसर मिला है। कईयो को लूटा पर जो मजा आज आयेगा वह फिर कब आने वाला है ?

"ओ बाबा ! ठहरो, आज हमारा मनोरथ पूरा होने दो, जरा ठहरो। तुम्हारी झोली हमारे सम्मुख धर दो, हमे आज मालोमाल कर दो। बहुत दिनो की आशा आज पूर्ण हो जाने दो, हमे तुम्हारे कपडे (पात्र) बर्तन नही चाहिये। तुम्हारी झोली मे जो धन-माल हो वह दे दो, बस फिर आगे बढो।"

तपस्वीराज धर्मभूमि के महासेनानी थे। वे कोई तस्करो से भयभीत हो जायें ऐसी बात नही थी, पर महान् व्यक्ति असभ्य शिष्टाचार करने वालो से ज्यादा वार्तालाप करना व्यर्थ समझते है। बस, वैसे ही उन्होने मौन को ठीक समझकर अपने पात्रे की झोली नीचे रख दी।

चोरो ने पूछा—

"तुम्हे नही चाहियेगा ? हम सब लेकर चले जायेंगे, बोलते क्यो नही ? जबाब दो।"

"मैं जैन साधु हूँ। रुपया, पैसा, सोना-चाँदी कुछ भी नही रखता हूँ और न कभी दक्षिणा मे लेता हूँ। फिर भी तुम्हे विश्वास न हो तो देखलो।" तपस्वीराज ने सक्षिप्त उत्तर दिया।

"जैन साधु बहुत चालाक होते है अपना माल बचाने के लिये बोलते है—कि-हम पैसा नही रखते है। पर अपन तो आज लेकर ही जायेंगे।" ऐसा सोचकर उन चोरो ने झोली खोलने का प्रयास किया।

झोली खोलकर देखा तो वे सभी तस्कर दग रह गये। झोली मे रुपया-पैसा, सोना-चाँदी तो नजर नही आया पर पात्र मे बडा भारी भुजग (सर्प) दिखा, वे सभी घबराकर भागते बने। उन्होने पीछे मुडकर देखने का भी साहस नही किया। जबकि—तपस्वीराज की झोली मे सर्प नही था पर दैविक चमत्कार ही मानना पडेगा। ऐसा था हमारे चरितनायक महामना मुनि पुगव तपस्वीराज का तपोपूत चमत्कार। □

बाल-बाल बचे

द्वादशवर्षीय दुष्काल के परिप्रेक्ष्य मे क्रियोद्धारक श्रीमद् आचार्य भद्रबाहु स्वामी धर्म सघ हितार्थ अपने शिष्य समूह सहित एव सयम हितार्थ उत्तर भारत से दक्षिण भारत की ओर आये थे। कर्नाटक प्रान्तीय जनता ने शुभागत मुनि सघ का भावभीना स्वागत किया, उतना ही नही आचार्य देव के विद्वत्तापूर्ण व्यक्तित्व के सामने समर्पित हो गये। अल्प समय मे ही कर्नाटक की भूमि जिनधर्मोपदेश की शत सहस्र धाराओ से आप्लावित हो गई। जिनधर्म की ऐसी आशातीत प्रभावना फैली कि—सैकडो हजारो नर-नारी जिनधर्मानुयायी बन गये। अनेको आत्माएँ वैराग्य भाव से ओत-प्रोत हो आचार्य देव के शिष्य बनकर जिनशासन के प्रति समर्पित हो गये। कतिपय आत्माएँ श्रमणोपासक की श्रेणी मे आ गई। जिनधर्म की आचार सहिता का तलस्पर्शी अध्ययन कर उसे कन्नड भाषा मे लिखकर साहित्य जगत् मे अभिवृद्धि की। आज भी कन्नड भाषा मे काफी साहित्य उपलब्ध होता है।

आज भी कर्नाटक प्रान्त मे राजस्थान तथा गजरात के हजारो जैन परिवार जिनधर्मानुयायी है यहाँ तक कि कर्नाटक के मूल निवासी भी जिनधर्म का आचरण कर रहे है।

हमारे चरितनायक परमश्रद्धेय, खद्दरधारी, समक्ति धर्म प्रसारक, सद्गुरु गुरु-गणेश श्री गणेशमलजी महाराज ने भी इस धरा (कर्नाटक) को पावन किया, अपने चरण कमलो से ही नही पावन किया किन्तु जिन धर्मामृत से भी सिचन किया।

घटना स० २००२ की उसी कर्नाटक प्रान्त की है, आपश्री का वर्षावास अरसीखेडा होने वाला था, अभी आप धावनगिरी (कर्नाटक का शहर) मे विराज रहे थे। आपश्री के दर्शनार्थ बैंगलोर से पाँच कारे आई हुई थी। बैंगलोर सघ के सभी वडे-वडे अग्रगण्य श्रावक थे। तपस्वीराज के दर्शन-प्रवचन सुनकर कुछ जल्दी होने के कारण उन्होने निवेदन दिया—

"कृपासिन्धु! हमे कुछ जल्दी है अतएव आपश्री का मागलिक सूत्र सुनना चाहते है। आपकी कृपा रही तो फिर दर्शन करने आने के भाव रखते है।"

"कुछ देर के लिये ठहरो, जल्दी मत करो, धीरज के फल मीठे होते हैं। जल्दी करना मौत को आमत्रण देना होगा।" तपस्वीराज ने कुछ सोचकर फरमाया।

सभी लोग चुप बैठ गये, क्योकि—वे जानते थे तपस्वीराज बिना सोचे-समझे कभी किसी को रोक्ते नही है। सभी यथास्थान शान्त चित्त से बैठ गये तथा अपने हृदय मे नवकार महामत्र का स्मरण करते हुए तपस्वीराज की आज्ञा का इन्तजार करने लगे। कुछ समय व्यतीत होने के वाद सद्गुरुनाथ ने स्वय ही उन लोगो को महामत्र नवकार सुना दिया। सभी लोग बैंगलोर की ओर रवाना हो गये। लगभग १५-२० मील की यात्रा तय की होगी कि सभी कारें रुक गई। कार से बाहर निकलने पर लोगो को पता लगा कि—"एक बस, ट्रेन (रेलगाडी) से टकरा गई है।" यह बात केवल दस-पन्द्रह मिनिट पहले ही घटी है। सभी लोगो के रोम-रोम काँप गये। रेलपटरी के किनारे कई लोगो का अस्त-व्यस्त शरीर पडा है, चारो ओर खून ही खून। अग-भग के खण्ड-खण्ड आस-पास मे बिखरे पडे हैं। कुछ लोग घायल अवस्था मे पडे है। ऐसा लोमहर्षक दृश्य देखकर उन्हे तपस्वीराज गुरु-गणेश बाबा के वे वाक्य याद आये कि—"जल्दी मत करो। जल्दी

करना मौत को आमत्रण देना होगा।" उसी समय वे बैंगलोर निवासी उन घायल लोगो की यथोचित सेवा मे लग गये, उन्हे अपनी कार की सहायता से हॉस्पिटल (दवाखाना) मे ले गये तत्पश्चात् बेंगलोर न पहुँचकर वे पुन तपस्वीराज की सेवा मे उपस्थित हुए तथा ट्रेन-मोटर दुर्घटना का विवरण प्रस्तुत करते बोले—

"आपको यह कैसे पता लगा कि दुर्घटना होने वाली है? उस दुर्घटना को देखकर हमारे रोम-रोम काँप गये। आपकी महान् कृपा दृष्टि का सुफल ही मानेंगे जो हम सभी बाल-बाल बच गये।" समाधान की आकाक्षा देखी तो गुरुदेव ने फरमाया—

"देव-गुरु-धर्म के सुप्रताप से मुझे कुछ आभास हुआ और मैंने बोल दिया इसमे मेरा कुछ भी नही है। यह सब गुरु कृपा है। वह मोटर-ट्रेन दुर्घटना हुई उसके लिये भी मेरे पास समय नही था क्योकि मैं बहुत दूर था नही तो उसे भी रोकने का प्रयत्न करता किन्तु सामुदानिक कर्म का उदय होने पर उसे भोगने पडते है।" □

उपादान की प्राबल्यता

कभी-कभी निमित्त भी कारगर बनता है पर उपादान प्रबल हो तो। बस, वैसे ही हमारे चरितनायक कर्नाटक केशरी परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज "टेम्भूर्णी" (महाराष्ट्र) नगर मे वर्षावास व्यतीत कर रहे थे। धर्म-ध्यान, तप-जप का मानो मेला ही लग गया था। धार्मिक अनुष्ठानो मे नर-नारी दिल खोलकर भाग ले रहे थे।

एकदा अचानक एक ओसवाल भाई आँसू बरसाता हुआ गुरुदेव के चरणो मे आया। गुरुदेव ने सहज ही पूछ लिया—

"क्या बात हुई, आर्तध्यान क्यो कर रहे है? ऐसा क्या कारण बन गया है?"

"गुरुदेव! आर्तध्यान का कारण कोई लडाई झगडा नही है।"

"तो फिर तुम इतने जोर-जोर क्यो रो रहे हो?

"मेरा छोटा लडका मकान की तीसरी मजिल से नीचे गिर गया है, उसे भयकर चोट आई है। काफी खून बहा है, मृततुल्य बन गया, सभी

लोग यही कह रहे है कि 'अब बच्चा जीवित नही रह पायेगा।' अत मेरा मन यही कह रहा है—आपश्री पधार कर उसे मागलिक सूत्र सुनादें। यदि आयुष्य कर्म बाकी होगा तो वह अवश्य स्वस्थ हो जायेगा।"

तपस्वीराज उसी समय उस भाई के घर पधारे, वहाँ पहले से ही काफी भीड जमा हो चुकी थी, तपस्वीराज को आते हुए देखकर कुछ लोग आपस मे काना-फूसी करने लगे—"बच्चा तो मर गया है, अब तपस्वीराज क्या करेंगे ? मरे को जिन्दा करने की ताकत तो भगवान मे भी नही थी, फिर व्यर्थ ही तपस्वीराज को यहाँ ले आये।"

सरसरी निगाह से हमारे चरितनायकजी ने बच्चे को देखा तथा सभी को धैर्य बँधाते हुए कहा—

"कोई घबरावे नही, धैर्य धारण करे, बच्चा जीवित है। धर्म के प्रताप से अच्छा हो जायेगा। महामत्र नवकार के प्रभाव से इसकी मूर्च्छा दूर हो जायेगी।"

हुआ वैसा ही। गुरुदेव मागलिक सूत्र सुनाकर पधारे कि थोडी ही देर मे लडके ने आँखें खोल दी, बोलने भी लगा। मार तथा खून जाने से कमजोरी जरूर आई। मानो वह गुरुदेव के मागलिक की इतजार ही कर रहा था। इस दृश्य को लोग देखते ही रह गये।

इसे कहते है उपादान की प्राबल्यता, उपादान के बलबूते निमित्त कारगर होता है।

× × ×

ऐसी ही घटना हैद्राबाद (आन्ध्र प्रदेश) निवासी श्रीमान् सा० हस्तीमल जी, विजयराज कामदार समशेरगज के घर मे भी घटी उनका भी कहना है कि आपश्री अर्थात् कर्नाटक केशरी जी महाराज के नाम स्मरण से हमारा लडका ठीक हो गया। □

इसे कहते है सिद्धि

"इद शरीर व्याधिमदिरम्।" यह शरीर आधि-व्याधि-उपाधि का घर है। भगवान महावीर की वाणी मे—

अरई गण्ड विसूइया, आयका विविहा फुसन्ति ते।
विवडइ विद्ध सइ ते सरीरय समय गोयम मा पमायए ॥

(—उत्तरा० अ० १०, गा० २७)

गौतम ! तेरे शरीर को नाना प्रकार के रोग घेरे हुए हैं, चौरासी प्रकार के वायु के प्रकोप से चित्त का उद्वेग, रुधिर के प्रकोप से स्फोटक आदि, अजीर्ण की वृद्धि से विसूचिका, शूलादि रोग आदि से शरीर अत्यन्त निर्बल होता हुआ जीवन से भी रहित हो जाता है। अतएव, जब तक स्वस्थ है धर्मकरणी करले।

तात्पर्य यही है कि शरीर पुद्गलो का पिंड है इसका क्षण-क्षण मे परिवर्तन होता रहता है। कभी अच्छा कभी बुरा, जब तक पुण्य का प्राबल्य है तब-तक इसका कुछ भी बिगडने वाला नही, कुछ हुआ भी तो पुन किसी निमित्त को पाकर अच्छा हो जायेगा यदि आयुष्य कर्म शेष है तो—

एकदा बेंगलोर निवासी श्रीमान् अनराजजी साखला की पुत्रवधू को टी० बी० (क्षय रोग) की बीमारी हो गई। टी० बी० की बीमारी को कुछ वर्षों पूर्व मानव-समाज साक्षात् मौत का दूत ही मानती थी, और वह है भी वैसी ही। धीरे-धीरे इससे आतकित व्यक्ति गलता जाता है। उचित उपचार नही हो पाता है। आज भी पूर्ण रूप से वैज्ञानिक इस पर काबू नही कर पाये हैं।

साखलाजी ने काफी उपचार करवाया पर न जाने कर्म का जोर ही ऐसा था कि सारा इलाज शून्यवत् हो रहा। दिनो-दिन तन गलता गया। तब घबराकर साखलाजी की धर्मपत्नी सौ० चादबाई अपने पुत्र सज्जनराज से बोली—

"बेटा सज्जन् ! काफी इलाज करा लिया पर बहू को बिल्कुल भी आराम नही मिला, इसीलिये मेरा तो यही कहना है कि अब सारे इलाज बन्द करके इसे गुरुदेव (सद्गुरुनाथ) के पास ले चल, वहाँ सब कुछ ठीक हो जायेगा। यदि उपेक्षा करके नही ले जायेंगे तो बहू का जीवन खतरे मे पड जायेगा। मुझे पूर्ण विश्वास है गुरुदेव की सेवा मे जाने पर यह ठीक हो जायेगी।"

अन्तत अपनी बहू को लेकर वे बेंगलोर से (महाराष्ट्र) नान्देड आई तथा गुरुदेव के समक्ष सारी हकीकत कह सुनाई। साथ ही विनति करती हुई बोली—

"गुरुदेव ! सज्जन की बहू को टी० बी० बताई है, डॉक्टरो के हाथ की बात नही रही, अब तो आपके हाथ की बात है। कैसे भी हो बहू की बीमारी दूर हो जाय ऐसा रास्ता आपश्री को बताना है। सेवक की आशा को पूर्ण करो।"

"जब डॉक्टरो की दवाई कुछ काम नही करती तब तुम गणेशिया को याद करते हो। खैर, कोई बात नही गणेशिया का यही काम है—बने जब तक सम्यक् राह पर भूले-भटके राहियो को लाना, दु खियो को साता पहुँचाना।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"रोग से घबराने की जरूरत नही है, सम्यक्तया तप-जप करो साथ ही श्रद्धा रखो सब कुछ ठीक होगा।" इस प्रकार कहते हुए तपस्वीराज ने तप-जप की विधि बताई।

सद्गुरुनाथ की शुभ कृपा ही समझो। ऐसा कृपामृत बरसा कि—साखला की बहू के शरीर की (टी० बी०) बीमारी साफ हो गई। फेफडो का रोग धीरे-धीरे दूर हो गया। अल्प दिनो मे ही स्वास्थ्य लाभ को प्राप्त किया। जो काम हजारो रुपयो से नही हुआ वह कार्य तपस्वीराज के मार्ग दर्शन से हो गया। इसे कहते है सिद्धि। □

महाफल

"सद्धा परम दुल्लहा।" भगवान महावीर की वाणी मे कहा है—"श्रद्धा परम दुर्लभता से प्राप्त होती है।" जो श्रद्धापूर्वक सम्यक्त्व क्रिया का आचरण करता है, उसे सफलता शीघ्र ही मिलती है। सम्यक् तत्व तथा सुगुरु के बताये हुए मार्ग का अनुसरण करना ही सम्यक् श्रद्धा है।

बेंगलोर निवासी परम भक्त प्रियधर्मी सुश्रावक श्रीमान् अनराज जी साखला का पुत्र सोहनलाल जिसे अपेंडिस (पेट की बीमारी) की बीमारी हो गई। स्वास्थ्य लाभ के लिये बहुत उपचार कराया फिर भी बीमारी ठीक नही हुई। अन्तत डॉक्टरो ने कह दिया—"इसका ऑपरेशन करना ही ठीक रहेगा, यदि ऐसा न करोगे तो बीमारी बढ जायेगी। बेकाबू होने के बाद कुछ नही होगा अर्थात् फिर कोई भी दवा से ठीक नही होगा।"

सांखला जी ने सभी उपचार बन्द करवा दिये तथा वे सीधे तपस्वी-राज के चरणो मे आये और बोले—

"कृपानाथ ! सोहनराज के पेट मे अपेंडिस की बीमारी हो गई है, डॉक्टर बोलते हैं—ऑपरेशन करना पडेगा, ऐसा न करोगे तो ठीक नही होगा। मैं ऑपरेशन के पक्ष मे नही हूँ। अब आप ही फरमावें क्या किया जाय ? जैसा आपश्री फरमायेंगे, हम करने के लिये कटिबद्ध है।"

"काहे को ऑपरेशन के चक्कर मे पडते हो, धर्माराधना करो, तप-जप पर श्रद्धा रखो, इसके प्रभाव से जब बडी-बडी कर्म की ग्रन्थियाँ भी गल गईं, चूर-चूर हो जाती है। तो यह छोटी-सी पेट की गाँठ की क्या औकात है, जो जम कर रह जायेगी ? मेरे वचनो पर श्रद्धा हो तो सभी दवाई बन्द करके तप-जप की दवा दो सोहनलाल को। अपनी सम्यक् क्रिया पर भरोसा करो, श्रद्धा से निश्चित सफलता मिलेगी। महाफल की प्राप्ति सम्यक् श्रद्धा से ही होती है।"

सद्गुरुनाथ के कथनानुसार ही साखला जी ने किया। आप विश्वास करें, जैसा तपस्वीराज ने फरमाया वैसा ही हुआ, बिना ऑपरेशन किये ही सोहनलाल की अपेंडिस की बीमारी का शमन हो गया। तपस्वीराज की वाणी मे न जाने क्या चमत्कार था, वे जिसे बोल देते, वैसा ही हो जाता, तभी तो पेट की गाँठ भीतर की भीतर ही छूमन्तर हो गई। श्रद्धापूर्वक किया हुआ तप बाह्य बीमारी को साफ करने की क्षमता रखता है तो क्या आन्तरिक जीवन की शुद्धि नही हो सकती ? अवश्य।

श्रद्धापूर्वक क्रिया करने से सोहनलाल साखला श्रीमान् सुश्रावक अनराज जी साखला के सुपुत्र को महाफल की प्राप्ति हो गई। जो कार्य महिनो दवाइयाँ लेते ठीक नही हुआ वह अल्प पुरुषार्थ से हो गया। ऐसी थी तपस्वीराज की महा-साधना, तपाराधना। □

धर्म का प्रताप

प्रियधर्मी, दृढधर्मी, सुश्रावक श्रीमान् अनराज जी साखला बेंगलोर निवासी की सुपुत्री सौ० सूरज बाई अपने ससुराल खीचन मे थी।

एक दिन कुछ डाकुओ का समूह उसी गाँव मे आ धमका। योग की

बात उस दिन घर पर सूरजबाई अकेली ही थी। परिवार के सभी सदस्य बाहर गये हुए थे। उस समय सरकारी प्रबन्ध भी नहींवत् ही था। डाकुओ को अपने घर मे घुसते हुए देख सूरजबाई घबरा गई, आँखो के सामने अँधेरा छाने लगा।

अचानक सद्गुरुनाथ की याद आई। साथ ही ऐसा आभास हुआ—"घबरा मत, तेरे जेवर (आभूषण) सोना-चाँदी तथा रुपये-पैसे एक थाल मे रखकर ऊपर कपडा ढक दे। शान्ति से बैठकर सद्गुरुनाथ का जाप कर, अच्छा होगा।" सूरजबाई ने वैसा ही किया तथा जोर-जोर "सद्गुरुनाथ-सद्गुरुनाथ" इस प्रकार जाप करने लगी।

सूरजबाई का मकान बहुत बडा समझकर डाकू लोग बहुत बडी आशा लेकर आये पर तपस्वीराज के नाम का चमत्कार ही समझिये—सब कुछ होने पर भी उन्हे कुछ भी नजर नही आया। मानो उनकी दृष्टि ही बँध गई। सूरजबाई बैठी-बैठी जप कर रही थी। वहाँ भी वे आये पर उसे पगली मानकर, हिम्मत करके पूछा भी—

"सब सोना-चाँदी, रुपये-पैसे कहाँ है?"

"ये सामने थाल मे पडे है।" सूरजबाई ने निडरतापूर्वक कहा।

गुरु-गणेश के प्रताप से चोरो को कुछ भी नजर नही आया, सभी परस्पर बडबडाते हुए निकल गये।

जब सारा परिवार एकत्रित हुआ तो सूरजबाई ने हकीकत सुनाई, सभी दग रह गये बोले—"गुरु-गणेश का प्रताप ही समझो जो धन बचा, जान तथा शील की रक्षा हुई।" सभी गुरु-गणेश के पास आये, अपनी बात सुनाई तब सद्गुरु ने यही फरमाया—"धर्म का प्रताप ही बचाता है।" □

हम चार है

तप सम्राट् कर्नाटक केशरी गुरु-गणेश का जीवन-कोष तपाराधना के महान् ऐश्वर्य से सराबोर था। वे स्वय तपोद्यान मे मराल की भाँति क्रीडा मे मग्न रहते थे साथ ही जो भी उनके निकट दर्शनार्थी आते उन्हे भी तप-जप-सम्यक्त्व की प्रशस्त राह दिखाते। अपने लक्ष्य पर वे स्वय अटल थे तथा अन्य को भी लक्ष्यवान बनाने की आप मे अद्भुत क्षमता थी।

यही कारण था कि जनता आपके निकट भागी आती। राजस्थान, मध्यप्रदेश, पजाब, महाराष्ट्र, दक्षिण भारत (कर्नाटक, तामिलनाडु, आन्ध्र-प्रदेश) आदि अनेक प्रान्तो के सैकडो-हजारो जैन-जैनेतर नर-नारी बाबाजी महाराज के चरणो मे नत मस्तक हो तपाराधना के भाव यज्ञोत्सव मे सहर्ष भाग लेते हुए अपने आपको समर्पित कर देते। तपानुष्ठान मे जुट जाने वाले अपने आपको गौरवशाली मानते थे।

तपस्वीराज के स्वाध्याय-चिंतन तथा तप-त्याग का प्रभाव उन प्रेतात्माओ पर सीधा पडता जो नर-नारियो को दु खी करने मे लगे हुए थे। जो प्रेतात्मा देहधारियो को पीडित करती वे तपस्वीराज के महान् पुण्य प्रभाव से दु ख देना छोडकर अपने रास्ते चली जाती।

"विंचूर" नगर की माहेश्वरी समाज की एक बहू अपने पीहर जा रही थी, वह काफी दिनो से अस्वस्थ थी। उसे भी पता लगा कि—"तपस्वी-राज गुरु-गणेश लासलगाँव विराजित मे है।" अपने भाई को साथ मे लेकर वह भी तपस्वीराज के चरणो मे पहुँची। उस समय व्याख्यान चल रहा था, व्याख्यान सभा मे भी वह जोर-जोर से चिल्लाने लगी। तपस्वीराज ने पूछा—

"तू कौन है ? इस बहन को क्यो सताती है ?"

"तू तू क्या करता है ? हम एक नही चार है। इसने हमारे के स्थान पर मात्रा (पेशाब) किया, हमारे स्थान को अपवित्र कर दिया है इसीलिये हम इसे सता रही हैं।" वे बोली।

"अब तुम्हारी क्या इच्छा है, इसे सताना बाकी है या जाना है ?" तपस्वीराज ने कहा।

"अब नही सतायेंगी, बस अब जाना है। बाबा ! तुम्हारे दर्शन हो गये। तुम्हारे कहने से इसे छोड देंगी पर रास्ते मे इसे छोडकर चली जायेंगी।"

"सच बोल रही हो या झूठ ? छोडने के बाद वापिस तो नही आओगी ना ? यदि फिर आई तो मुझे कडा प्रबन्ध करना पडेगा। बोल दु ख तो न देगी ? सही-सही बोल दे, जो बोलना है अभी कह दे।"

"नही, अब नही सतायेंगी। आपका प्रभाव हमे सहन नही होता है। अब हमे माफ कर दें।"

बस, माहेश्वरी भाई अपनी बहन को लेकर घर पहुँचा, वह रास्ते मे ही ठीक हो गई। प्रत्यक्षदर्शियो ने तप के सफल चमत्कार को देखा तो वे आश्चर्याभिभूत हो गये। □

बात उस दिन घर पर सूरजबाई अकेली ही थी। परिवार के सभी सदस्य बाहर गये हुए थे। उस समय सरकारी प्रबन्ध भी नहीवत् ही था। डाकुओ को अपने घर मे घुसते हुए देख सूरजबाई घबरा गई, आँखो के सामने अँधेरा छाने लगा।

अचानक सद्गुरुनाथ की याद आई। साथ ही ऐसा आभास हुआ—"घबरा मत, तेरे जेवर (आभूषण) सोना-चाँदी तथा रुपये-पैसे एक थाल मे रखकर ऊपर कपडा ढक दे। शान्ति से बैठकर सद्गुरुनाथ का जाप कर, अच्छा होगा।" सूरजबाई ने वैसा ही किया तथा जोर-जोर "सद्गुरुनाथ-सद्गुरुनाथ" इस प्रकार जाप करने लगी।

सूरजबाई का मकान बहुत बडा समझकर डाकू लोग बहुत बडी आशा लेकर आये पर तपस्वीराज के नाम का चमत्कार ही समझिये—सब कुछ होने पर भी उन्हे कुछ भी नजर नही आया। मानो उनकी दृष्टि ही बँध गई। सूरजबाई बैठी-बैठी जप कर रही थी। वहाँ भी वे आये पर उसे पगली मानकर, हिम्मत करके पूछा भी—

"सब सोना-चाँदी, रुपये-पैसे कहाँ है ?"

"ये सामने थाल मे पडे है।" सूरजबाई ने निडरतापूर्वक कहा।

गुरु-गणेश के प्रताप से चोरो को कुछ भी नजर नही आया, सभी परस्पर बडबडाते हुए निकल गये।

जब सारा परिवार एकत्रित हुआ तो सूरजबाई ने हकीकत सुनाई, सभी दग रह गये बोले—"गुरु-गणेश का प्रताप ही समझो जो धन बचा, जान तथा शील की रक्षा हुई।" सभी गुरु-गणेश के पास आये, अपनी बात सुनाई तब सद्गुरु ने यही फरमाया—"धर्म का प्रताप ही बचाता है।" □

हम चार है

तप सम्राट् कर्नाटक केशरी गुरु-गणेश का जीवन-कोष तपाराधना के महान् ऐश्वर्य से सराबोर था। वे स्वय तपोद्यान मे मराल की भाँति क्रीडा मे मग्न रहते थे साथ ही जो भी उनके निकट दर्शनार्थी आते उन्हे भी तप-जप-सम्यक्त्व की प्रशस्त राह दिखाते। अपने लक्ष्य पर वे स्वय अटल थे तथा अन्य को भी लक्ष्यवान बनाने की आप मे अद्भुत क्षमता थी।

यही कारण था कि जनता आपके निकट भागी आती। राजस्थान, मध्यप्रदेश, पजाब, महाराष्ट्र, दक्षिण भारत (कर्नाटक, तामिलनाडु, आन्ध्र-प्रदेश) आदि अनेक प्रान्तो के सैकडो-हजारो जैन-जैनेतर नर-नारी बाबाजी महाराज के चरणो मे नत मस्तक हो तपाराधना के भाव यज्ञोत्सव मे सहर्ष भाग लेते हुए अपने आपको समर्पित कर देते। तपानुष्ठान मे जुट जाने वाले अपने आपको गौरवशाली मानते थे।

तपस्वीराज के स्वाध्याय-चिंतन तथा तप-त्याग का प्रभाव उन प्रेतात्माओ पर सीधा पडता जो नर-नारियो को दु खी करने मे लगे हुए थे। जो प्रेतात्मा देहधारियो को पीडित करती वे तपस्वीराज के महान् पुण्य प्रभाव से दु ख देना छोडकर अपने रास्ते चली जाती।

"विंचूर" नगर की माहेश्वरी समाज की एक बहू अपने पीहर जा रही थी, वह काफी दिनो से अस्वस्थ थी। उसे भी पता लगा कि—"तपस्वी-राज गुरु-गणेश लासलगाँव विराजित मे है।" अपने भाई को साथ मे लेकर वह भी तपस्वीराज के चरणो मे पहुँची। उस समय व्याख्यान चल रहा था, व्याख्यान सभा मे भी वह जोर-जोर से चिल्लाने लगी। तपस्वीराज ने पूछा—

"तूं कौन है ? इस बहन को क्यो सताती है ?"

"तू तू क्या करता है ? हम एक नही चार है। इसने हमारे के स्थान पर मात्रा (पेशाब) किया, हमारे स्थान को अपवित्र कर दिया है इसीलिये हम इसे सता रही हैं।" वे बोली।

"अब तुम्हारी क्या इच्छा है, इसे सताना बाकी है या जाना है ?" तपस्वीराज ने कहा।

"अब नही सतायेंगी, बस अब जाना है। बाबा ! तुम्हारे दर्शन हो गये। तुम्हारे कहने से इसे छोड देंगी पर रास्ते मे इसे छोडकर चली जायेंगी।"

"सच बोल रही हो या झूठ ? छोडने के बाद वापिस तो नही आओगी ना ? यदि फिर आई तो मुझे कडा प्रबन्ध करना पडेगा। बोल दु ख तो न देगी ? सही-सही बोल दे, जो बोलना है अभी कह दे।"

"नही, अब नही सतायेंगी। आपका प्रभाव हमे सहन नही होता है। अब हमे माफ कर दें।"

बस, माहेश्वरी भाई अपनी बहन को लेकर घर पहुँचा, वह रास्ते मे ही ठीक हो गई। प्रत्यक्षदर्शियो ने तप के सफल चमत्कार को देखा तो वे आश्चर्याभिभूत हो गये। □

विष हारा

वैजापुर के निकट 'खण्डाला' एक छोटा-सा गाँव है जहाँ हमारे चरितनायक तपस्वीराज अनेको छोटे-बडे गाँवो को पावन करते हुए पधारे। "जहाँ-जहाँ चरण पडे सतन के, वहाँ-वहाँ मगलमाल।" वाली कहावत के अनुसार धर्म-वाणी श्रवण करने वालो का मेला (महोत्सव) सा लगने लगा। तप-जप, शान्ति-सप्ताह की धूम मच गई। उपवास, आयम्बिल, तेले (अट्ठमतप) की होडाहोड ने जिनशासन की प्रभावना मे चार चाद लगा दिये।

अचानक एक घटना घटी कि—उसी नगर के एक धोबी (कपडा धोने वाला) परिवार के नव युवक (नौजवान) लडके को जो नदी पर कपडे धो रहा था जहरीले सर्प ने काट खाया। शरीर मे जहर फैलने लगा। लडके को ठीक करने के लिये अनेको उपचार कराये पर कोई भी उपचार सार्थक नही बना। तभी एक विवेकी व्यक्ति ने (जिसे—तपस्वीराज के तपमय जीवन तथा वाणी पर विश्वास था) धोबी से कहा—

"बच्चे को ठीक करना हो तो यहाँ जो बाबाजी महाराज चमत्कारी सन्तरत्न गुरु गणेश हैं, जैन साधु। उनके पास इस बच्चे को अतिशीघ्र ले जा, उनके चरणो मे इसे डाल दे तथा जैसा वे कहे वैसा कर ले, अवश्य तेरा बच्चा ठीक हो जायेगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।"

धोबी अपने लडके को लेकर श्रमणरत्न गुरु-गणेश के निकट आया, अपने बेटे को चरणो मे धरता हुआ विनम्र विनती करता हुआ बोला—

"महात्मन्! मेरे बच्चे को जहरीले सर्प ने काट खाया है, इसका बहुत उपचार कराया पर कुछ भी अन्तर नही पडा। अब आपका ही सहारा है, ऐसा रास्ता बताओ जिससे यह जल्दी ठीक हो जाये।"

नवकार महामत्र सुनाने के बाद बडी आत्मीयता से तपस्वीराज ने फरमाया—

"घबराने की आवश्यकता नही है, सर्प का जहर कुछ ही देर मे उतर जायगा, वह जो शान्ति सप्ताह चल रहा है इस बच्चे को उसमे खडा कर दो और जैसा वे लोग बोल रहे हैं वैसा इसे बोलने दो, चिंता जैसी बात नही है। बच्चा ठीक हो जायेगा।"

तपस्वीराज की बात मानकर लडके को शान्ति जाप मे खडा कर दिया। वह भी जाप मे मग्न होता गया। लडके के आयुष्य कर्म प्रबल थे।

दूसरी ओर तपस्वीराज तथा शान्ति जाप का प्रभाव ही मानना पडेगा, जाप करता-करता कुछ ही देर मे ठीक हो गया। जहर का प्रभाव नेस्तनाबूत हो गया। जाप के प्रभाव से विष अमृत मे बदल गया।

धोबी परिवार ही नही, देखने वाले सभी लोग स्तभित से रह गये। धोबी परिवार ने इसके उपलक्ष मे मास-शराब तथा शिकार का त्याग कर दिया। बाबाजी महाराज की जय-जयकार करते हुए अपने घर लौटे। □

कष्ट निवारक

तपस्वीराज कर्नाटक केशरी श्रीगणेशमलजी महाराज को जैन तो जानते ही थे किन्तु जैनेतर नर-नारियो के दिल मे भी वे छाये हुए थे अर्थात् जैनेतर जनता पर आपका विशेष प्रभाव था।

वैजनाथ परली (मराठवाडा) निवासी भगवानदासजी तोतले माहेश्वरी तपस्वीराज के प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति रखते थे। जब भी कभी इधर-उधर बाहर निकलते पहले सद्गुरुनाथ का नाम लेते, मन ही मन उनका स्मरण करते फिर अपने कार्य पर जाते। मनोवर्गणा के पुद्गल काफी प्रभावी भूमिका अदा करते हैं। सम्यक् श्रद्धा से यदि सुदेव-सुगुरु का स्मरण किया जाय तो वह निश्चित फलदायी होता है।

हुआ वैसा ही, एक दिन भगवानदास जी अपने खेत पर अकेले रात रहने के लिये गये, उनकी जेब मे कुछ रुपये तथा हाथ मे घडी बँधी रह गई। यह उन्हे याद नही रहा नही तो घर पर ही रख देते क्योकि—उनका खेत गाँव से जरा दूर था। अचानक कुछ चोरो ने खेत पर छापा बोल दिया। शान्त निस्तब्ध वेला थी। भगवानदास जी निद्राधीन थे। उन्हे क्या पता कि आज ही चोर लोग आ धमकेंगे ? चारो ओर से खेत को घेर लिया, लगभग १५-२० चोर होगे, जब भगवानदास जी की निद्रा खुली तो चारो ओर होहल्ला सुनकर वे घबरा गये। सोचने लगे—"क्या बवाल है ? भयकर कोलाहल इस निर्जन वन मे न जाने कौन लोग हैं ? क्यो घेरा डाल रहे है ? सभी के हाथो मे शस्त्र है। ये लोग बहुत हैं और मैं अकेला। ये लोग चोर ही होगे। क्योकि—दुश्मनी तो मैंने आज तक किसी के साथ रखी ही नही।" जरा हिम्मत करके पूछ ही लिया—

विष हारा

वैजापुर के निकट 'खण्डाला' एक छोटा-सा गाँव है जहाँ हमारे चरितनायक तपस्वीराज अनेको छोटे-बडे गाँवो को पावन करते हुए पधारे। "जहाँ-जहाँ चरण पडे सतन के, वहाँ-वहाँ मगलमाल।" वाली कहावत के अनुसार धर्म-वाणी श्रवण करने वालो का मेला (महोत्सव) सा लगने लगा। तप-जप, शान्ति-सप्ताह की धूम मच गई। उपवास, आयम्बिल, तेले (अट्ठमतप) की होडाहोड ने जिनशासन की प्रभावना मे चार चाद लगा दिये।

अचानक एक घटना घटी कि—उसी नगर के एक धोबी (कपडा धोने वाला) परिवार के नव युवक (नौजवान) लडके को जो नदी पर कपडे धो रहा था जहरीले सर्प ने काट खाया। शरीर मे जहर फैलने लगा। लडके को ठीक करने के लिये अनेको उपचार कराये पर कोई भी उपचार सार्थक नही बना। तभी एक विवेकी व्यक्ति ने (जिसे—तपस्वीराज के तपमय जीवन तथा वाणी पर विश्वास था) धोबी से कहा—

"बच्चे को ठीक करना हो तो यहाँ जो बाबाजी महाराज चमत्कारी सन्तरत्न गुरु गणेश हैं, जैन साधु। उनके पास इस बच्चे को अतिशीघ्र ले जा, उनके चरणो मे इसे डाल दे तथा जैसा वे कहे वैसा कर ले, अवश्य तेरा बच्चा ठीक हो जायेगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।"

धोबी अपने लडके को लेकर श्रमणरत्न गुरु-गणेश के निकट आया, अपने बेटे को चरणो मे धरता हुआ विनम्र विनती करता हुआ बोला—

"महात्मन्! मेरे बच्चे को जहरीले सर्प ने काट खाया है, इसका बहुत उपचार कराया पर कुछ भी अन्तर नही पडा। अब आपका ही सहारा है, ऐसा रास्ता बताओ जिससे यह जल्दी ठीक हो जाये।"

नवकार महामन्त्र सुनाने के बाद बडी आत्मीयता से तपस्वीराज ने फरमाया—

"घबराने की आवश्यकता नही है, सर्प का जहर कुछ ही देर मे उतर जायगा, वह जो शान्ति सप्ताह चल रहा है इस बच्चे को उसमे खडा कर दो और जैसा वे लोग बोल रहे हैं वैसा इसे बोलने दो, चिंता जैसी बात नही है। बच्चा ठीक हो जायेगा।"

तपस्वीराज की बात मानकर लडके को शान्ति जाप मे खडा कर दिया। वह भी जाप मे मग्न होता गया। लडके के आयुष्य कर्म प्रबल थे।

दूसरी ओर तपस्वीराज तथा शान्ति जाप का प्रभाव ही मानना पडेगा, जाप करता-करता कुछ ही देर मे ठीक हो गया। जहर का प्रभाव नेस्तनाबूत हो गया। जाप के प्रभाव से विष अमृत मे बदल गया।

धोबी परिवार ही नही, देखने वाले सभी लोग स्तभित से रह गये। धोबी परिवार ने इसके उपलक्ष मे मास-शराब तथा शिकार का त्याग कर दिया। बाबाजी महाराज की जय-जयकार करते हुए अपने घर लौटे। □

कष्ट निवारक

तपस्वीराज कर्नाटक केशरी श्रीगणेशमलजी महाराज को जैन तो जानते ही थे किन्तु जैनेतर नर-नारियो के दिल मे भी वे छाये हुए थे अर्थात् जैनेतर जनता पर आपका विशेष प्रभाव था।

वैजनाथ परली (मराठवाडा) निवासी भगवानदासजी तोतले माहेश्वरी तपस्वीराज के प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति रखते थे। जब भी कभी इधर-उधर बाहर निकलते पहले सद्गुरुनाथ का नाम लेते, मन ही मन उनका स्मरण करते फिर अपने कार्य पर जाते। मनोवर्गणा के पुद्गल काफी प्रभावी भूमिका अदा करते हैं। सम्यक् श्रद्धा से यदि सुदेव-सुगुरु का स्मरण किया जाय तो वह निश्चित फलदायी होता है।

हुआ वैसा ही, एक दिन भगवानदास जी अपने खेत पर अकेले रात रहने के लिये गये, उनकी जेब मे कुछ रुपये तथा हाथ मे घडी बँधी रह गई। यह उन्हे याद नही रहा नही तो घर पर ही रख देते क्योकि—उनका खेत गॉव से जरा दूर था। अचानक कुछ चोरो ने खेत पर धावा बोल दिया। शान्त निस्तब्ध वेला थी। भगवानदास जी निद्राधीन थे। उन्हे क्या पता कि आज ही चोर लोग आ धमकेंगे ? चारो ओर से खेत को घेर लिया, लगभग १५-२० चोर होगे, जब भगवानदास जी की निद्रा खुली तो चारो ओर होहल्ला सुनकर वे घबरा गये। सोचने लगे—"क्या बवाल है ? भयकर कोलाहल इस निर्जन वन मे न जाने कौन लोग हैं ? क्यो घेरा डाल रहे है ? सभी के हाथो मे शस्त्र है। ये लोग बहुत है और मैं अकेला। ये लोग चोर ही होगे। क्योकि—दुश्मनी तो मैंने आज तक किसी के साथ रखी ही नही।"
जरा हिम्मत करके पूछ ही लिया—

"आप लोग कौन हो ? यहाँ किसलिए आये हो ?"

"हम चोर है, जो कुछ तुम्हारे पास हो चुपचाप रख दो नही तो गोली के शिकार बनोगे। यदि जीवन प्यारा है तो जो कुछ भी हो निकालो, देर मत करो। जल्दी करो, हमे आगे जाना है।" चोरो ने कहा।

भगवानदास जी से सोचा—यदि यहाँ देर करेंगे तो मृत्यु के मुँह मे झोके जायेंगे, इससे यही अच्छा है जो कुछ अपने पास है इन्हे सौप दूँ। जान बचेगी तो और मिलेगा।

लगभग (३००) तीन सौ रुपये तथा एक हाथ घडी आदि जो सामान था सब उन चोरो के सामने रखते हुए भगवानदास जी ने कहा—अब मेरे पास कुछ भा नही है।

सारा माल अपने अधिकार मे करते हुए कुछ चोरो ने कहा—"इसे मार डालो, क्योकि—यह जिन्दा रहेगा तो अपना भण्डाफोड हो जायेगा।"

मार डालने की बात सुनते ही भगवानदास जी का कलेजा काँप उठा, पैरो तले की जमीन खिसकने लगी, आँखो मे अधेरा छा गया, अब उन्हे कोई सहारा नजर नही आया जो मृत्यु से बचा पाये, तभी सद्गुरुनाथ गुरु-गणेश याद आये—आँखें बन्द करके एक निष्ठा से सद्गुरुनाथ का मन ही मन स्मरण करने लगे एक ही लगन से—"हे गुरुदेव ! धन भले ही गया मेरी जिन्दगी बच जाय यही चाहता हूँ। इन लोगो की दूषित भावना मे परिवर्तन आ जाय, बस यही आपसे मेरी चाहना है।"

महान् चमत्कार ही मानिये—कुछ क्षणो के बाद ही उन तस्करो के दिल मे एकदम परिवर्तन आया—कुमति, सुमति के रूप मे बदली, कुछ तस्करो ने अपने साथियो से कहा—"इसकी सारी पूँजी अपने अधिकार मे आ गुई अब इसे मारने से क्या मतलब ? माल भी ले लेना तथा मार डालना, यह तो सरासर अन्याय होगा। इसके भी तो परिवार-पत्नी-पुत्र आदि होगे, सभी अपने को अभिशाप देंगे, अत हमारा यही कहना है इसे छोड दो।"

'जब लोगो का मानस बदला तो सभी तस्कर वहाँ से भाग गये, एक भी नही ठहरा। भगवानदास जी ने कुछ देर बाद जब आँखें खोली तो वे दग रह गये क्योकि—उस समय वहाँ वे अकेले ही थे, सभी चोर अपने रास्ते लगे।

प्रात काल होते ही भगवानदास जी को पता तो था ही कि तपस्वीराज सद्गुरुनाथ औरगाबाद विराजित है, वहाँ पहुँचे तथा अपनी आप वीती घटना सुनाते हुए वे बोले—

"गुरुदेव! आपकी महती कृपा से ही मैं बच पाया हूँ।"

ऐसा था महातपस्वी का कष्ट निवारक नाम। □

वे कौन थे ?

"बहता पानी निर्मला।" सत, मुनि-जन प्रवाहित जल की तरह विहार करते रहते है। विहार के क्षणो मे उन्हे अनेको प्रकार के कटु-मधुर अनुभव मिलते रहते हैं। इसीलिये कहा भी है—"विहार चरिया मुणिणो पसत्था।"

बस, ऐसे ही हमारे तपस्वीराज कर्नाटक केशरी जी महाराज तपस्या होती तब भी विहार करते तथा पारणे मे भी विहार कर लेते। एक बार आपश्री ने प्रात काल विहार किया ही था, इधर जालना (महाराष्ट्र) निवासी प्रियधर्मी सुश्रावक श्रीमान् रगलालजी कोठारी की भावना हुई कि "आज तपस्वीराज के साथ पैदल चलकर विहार यात्रा का आनन्द लेना चाहिये।" इसी बलवती प्रेरणा से प्रेरित होकर वे तपस्वीराज के साथ हो गये, पैदल चलने की अनुभूति करने के लिये किन्तु जल्दी-जल्दी मे साथ मे भोजन लेना भूल गये और न उन्होने प्रात कुछ खाया ही था।

आगे-आगे हमारे चरितनायक जी महाराज तथा पीछे-पीछे रगलाल जी कोठारी यात्रा (मजिल) तय करते रहे। तपस्वीराज के तो उपवास था किन्तु रगलाल जी कोठारी के नही था, चलते-चलते थकान आने लगी, पेट मे भूख सताने लगी, इधर गर्मी बढने लगी, सूर्य तपने लगा। कोठारी जी ने घडी देखी तो लगभग साढे दस बजने आ गई। तपस्वी महामुनिजी ने क्षुधा तथा पिपासा पर जबरदस्त नियन्त्रण कर रखा था, किन्तु सेठ रंगलाल जी ने नही कर रखा था। भूखे पैदल यात्रा करना जरा कठिन ही होता है, जिसमे फिर एकाध बार चलने का काम पडे तो बहुत भारी हो जाता है।

आगम वाड्मय के अनुभवी श्रद्धेय गुरुदेव कर्नाटक केशरी जी महाराज सेठ के चेहरे को देखकर ताड गये कि "अब सेठ को थकान आ गई है साथ ही भूख-प्यास भी लग रही है।"

एक गॉव के निकट पहुँचते-पहुँचते तपस्वीराज के ध्यान का समय आ गया।

"क्यो रगलाल! भूख लगी है न?"

"हाँ गुरुदेव! आपके तो उपवास है पर आज मैंने सबेरे से ही कुछ नही खाया है और न उपवास है, न साथ मे कुछ लाया।" सेठ रगलाल ने कहा।

"धीरज धरो, क्षुधा वेदनीय परीषह सामने आ जाय उसे समता से जीते तभी तो तप कहलाता है। यहाँ न तुम्हारा कोई परिचित है और न तुम कुछ लेकर आये हो, फिर भी चिन्ता न करो, कोई न कोई मिलेगा ही।" इतना कहकर तपस्वीराज ने वही गॉव के निकट एक वृक्ष के नीचे अपने उपकरण व्यवस्थित रखकर ध्यान क्रिया प्रारम्भ कर दी।

सेठ रगलाल जी कुछ देर तो बैठे रहे पर बाद मे रहा नही गया। गॉव मे गये कुछ सामान लेने अर्थात् खाद्य सामग्री के लिये पर काम जमा नही, फिर मन मसोस कर गुरुदेव ध्यानस्थ थे वहाँ आकर बैठ गये सोचने लगे—

"एक दिन की भूखी यात्रा मे ही मेरी यह दशा हो गई है, न भोजन मिल पाया और न पानी। चलना और भूखे रहना कितनी खरी कसौटी है? धन्य है मुनि जीवन मे रहने वाले साधको को। पैदल परिभ्रमण करने पर भी यदि नही मिला तो भी मस्त अपनी साधना-आराधना मे और मिला तो भी सहज भाव। वस्तुत सत-मुनिराजो ने आसक्ति भाव पर विजय पाई है तभी तपस्वीराज अपने आत्म-चिंतन-स्वाध्याय-ध्यान मे कितने तल्लीन है? मुनि जीवन कसौटी के पथ से ही गुजरता है। मेरा क्या होगा? क्या भूखे ही दिन गुजारना पडेगा?"

ऐसा सोच-विचार कर ही रहे थे, इतने मे एक पति-पत्नी का जोडा कुछ सामान लेकर तपस्वीराज के दर्शनार्थ उपस्थित हुआ। सेठ से पूछा तो सेठ ने कहा—"अभी गुरुदेव ध्यान कर रहे है।" वे लोग थोडी देर बैठे फिर बोले—

"न जाने महाराज का ध्यान कब खुले, तब तक हम भोजन लाये है, लो भोजन कर लो, आप महाराज के साथ आये हो ऐसा लगता है? भूखे होगे, यहाँ अपने घरो की बस्ती नही है।" सेठ रगलाल जी को भोजन देते हुए बोले—"आप भोजन करें तब तक हम घूम कर आते है।"

भरपेट भोजन कर लिया तथा कुछ देर तक उन भोजन देने वालो का

इन्तजार करने लगे, पर वे नही आये तब सेठ गुरुदेव के निकट आकर हकीकत सुनाते हुए बोले—

"कृपानाथ ! एक प्रति-पत्नी का जोडा आया, भोजन देते हुए बोला—"अभी आते है।" किन्तु बहुत देर हो गई आया नही, न मैंने उनसे पूछा कि तुम कौन हो ? कहाँ के हो ? पर आज जैसा भोजन मैंने पहले जिन्दगी मे कभी नही खाया। वे दोनो कौन तथा कहाँ के थे यदि आपको मालूम हो तो बताने की कृपा करें।"

"तुम्हारा काम हो गया न ? फिर भले वे कोई भी हो, तुम्हे अपने काम मे सफलता मिल गई।" इसके आगे तपस्वीराज ने कुछ भी नही कहा।

सुना जाता है—वे कोई मनुष्य नही थे किन्तु तपस्वीराज के परम भक्त देव ने ही वह काम किया था। पर सेठ रगलाल जी कोठारी के मन मे—"वे कौन थे ?" यह रहस्यमय बात वैसी ही रह गई। □

साता से साता

भावी के गर्भ मे क्या-क्या छिपा हुआ है इसे या तो जानने वाला ही जान पाता है या जो भुक्तभोगी बनता है उसी के समझ मे आती है। कभी-कभी ऐसी घटना आँखो के सामने आती है कि उसे सुनने वाले के रोम-रोम काँप जाते है, सारे शरीर मे सिहरन दौड जाती है। देखने वाला यही जान पायेगा कि "सभी मरेंगे, मर गये होंगे, बचने की बिल्कुल आशा ही नही करनी चाहिए।" किन्तु होता है इससे विपरीत ही।

एक बार सिकन्द्राबाद निवासी धर्मप्रेमी सुश्रावक व्रतधारी श्रीमान् हस्तीमलजी मुणोत अपनी धर्मपत्नी के साथ कार मे बैठकर गुरुदेव कर्नाटक केशरी जी महाराज के दर्शनार्थ आ रहे थे, उनकी धर्मपत्नी सौ० सगर्भा थी।

कार अपनी रफ्तार से चली जा रही थी, मुणोतजी अन्दर बैठे-बैठे सद्गुरुदेव के दर्शन-प्रवचन का महिमावत चिंतन कर रहे थे। अचानक कार ने राह छोड दी, ड्राइवर (सचालक) का जरा सा दृष्टि फेर हुआ कि कार एक-दो-तीन बार एक साथ पलटा खा गई। ऐसी भयानक स्थिति मे कौन सोच सकता है कि वे बच पायेंगे ? जहाँ गाडी (कार) तीन बार उलट जाय फिर भी अन्दर मे बैठने वाले को कुछ भी हानि न पहुँचे वे ज्यो के त्यो सुरक्षित

रह जायँ तो यही समझा जायेगा कि "बैठने वाले महान् पुण्यात्मा है उनके आयुष्य कर्म प्रबल है।" बस, वैसे ही मुणोत जी के सामने मारणान्तिक घात का प्रसग उपस्थित हो गया था किन्तु सातावेदनीय कर्म तथा उनकी धर्म भावना का प्रभाव विशेष बलवान था, फिर वे गुरु-गणेश (सद्गुरुनाथ) के दर्शन का शुभ सकल्प लेकर निकले थे, इन सभी पावन सयोगो का महाप्रसाद ही समझो कि कार मे बैठे हुए मुणोत जी, उनकी धर्मपत्नी तथा ड्राइवर को बिल्कुल भी चोट नही आई। सभी का जीवन अधर झूले मे था पर गुरु कृपा से बच गया। तभी तो कहा है—

"जेहि राखे निज धर्म को तेहि राखे करतार।"

पुण्य प्राबल्यता ही समय-समय पर रक्षक का काम करती है।

अन्ततोगत्वा मुणोत जी जहाँ गुरुदेव विराजमान थे वहाँ सकुशल पहुँच गये। सविनय वन्दना करने के पश्चात् अपने प्रवास की घटना उनके सम्मुख रखते हुए बोले—

"गुरुदेव! आपके दर्शन करने हमारे नसीब मे थे सो हो गये वरना आज तो हमारा खेल खतम होने वाला था।"

"हुआ क्या? तुम यह क्या बोल रहे हो? खेल खत्म किसका होता है? मेरे समझ मे नही आया।" तपस्वीराज ने जानकारी के लिए पूछा।

"कृपानाथ! आपश्री के दर्शनार्थ कार से आ रहे थे। रास्ते मे कार उलट गई, तीन पलटे खा गई, धर्मपत्नी तो घबरा गई थी पर उस उलटन-पुलटन मे भी हमारे मुँह से आपका नाम निकलता रहा। पुण्य प्राबल्य तथा आपश्री का महाप्रताप ही मानूँगा सो हमारा बाल भी बाका नही हुआ। हम सकुशल आपश्री के पावन चरणो मे आ गये। मेरी जिन्दगी मे मैंने ऐसा पहला चमत्कार देखा है, अपने आप मे बडा अनोखा है, अद्वितीय है।" मुणोतजी ने कहा।

"जब सातावेदनीय कर्म का उदय होता है तो आई हुई सकट की घडियाँ भी टल जाती है। इसीलिये सवर-निर्जरा धर्म की सम्यक् आराधना जितनी बन सके उतनी करनी, ऐसा न बन सके तो अन्य जीवो को साता मिले ऐसे कार्य सतत करते रहना चाहिए। साता देने वाले को अवश्य साता मिलती है। असाता के कृत्य तथा पापाराधना से जितने बचोगे उतने ही सुख के निकट पहुँचते जाओगे। तुम्हारे जीवन मे यह घात आई

थी पर पुण्योदय से टल गई।" तपस्वीराज की पीयूष वर्षिणी वाणी को सुनकर मुणोत जी बडे प्रभावित हुए। प्रवचन-दर्शन तथा मागलिक सूत्र का लाभ लेकर वे आनन्दपूर्वक घर लौटे।

तपस्वीराज का नाम हृदय मे चलता रहा तो मुणोतजी की भयानक घात टल गई। ऐसा था, तपस्वीराज के नाम का महाप्रताप। □

हम जोगिणियाँ है

श्रद्धेय तपस्वीराज बाबाजी महाराज गुरु गणेशमल जी महाराज अपना प्रभावी वर्षावास वैजापुर (महाराष्ट्र) मे व्यतीत कर रहे थे। मिथ्यात्व दूर करते हुए सम्यक्त्व बीज का सागोपाग वपन कर रहे थे।

राजस्थान प्रात की रहने वाली एक बागरेचा परिवार की बहन काफी वर्षों से पीडित थी, उसकी पीडा का उसे भी पता नही लग रहा था। बहुत दवाई करवाई, पैसा खर्चा पर कुछ भी फर्क नही पडा। तबियत अच्छी करने के लिए मिथ्या क्रियाकलाप भी किये, भोपे-भेरू, फकीर-सन्यासी, साधुओ के कहे अनुसार भी किया पर सब कुछ शून्यवत ही रहा।

किसी जानने वाले ने कहा—

"दक्षिण भारत (महाराष्ट्र) मे बाबाजी खद्दरधारी श्री गणेशमलजी महाराज विचरण कर रहे हैं। उनकी तपाराधना-साधना बडी कठोर है। वे बडे ही चमत्कारी हैं, उनकी जबान मे सिद्धि है, उनकी दृष्टि मे तेज है, उनके आचार-विचार-व्यवहार मे सम्यक्त्व है। उनके चरणो मे सोने-चादी की बनी छोटी-बडी कई देवमूर्तियाँ, ताँबा-पीतल तथा अन्य धातु के बने हुए पगलिये, ताबीज-डोरे सभी पडे रहते हैं। उनकी सेवा मे जाने पर तथा जैसा वे कहे वैसा करने पर सैकडो-हजारो को आराम मिला है तथा मिल रहा है अत मेरी बात मानकर तुम भी उनके चरणो मे चले जाओ। सब कुछ ठीक होगा।"

"बाबाजी महाराज अभी कहाँ होगे ?" उन्होने पूछा।

"अभी उनका चातुर्मास वैजापुर (महाराष्ट्र) मे है।"

पता लगने पर बागरेचा परिवार वैजापुर आया। तपस्वीराज के

पावन दर्शन किये। प्रवचन-सभा मे ही वह बागरेचा परिवार की बहन धुनने-चिल्लाने लगी।

बाबाजी महाराज ने कहा—"अब तुम्हे जाना पडेगा।"

"ओ साधु महात्मा! तुम दयालु हो। हमे मत निकालो। पन्द्रह वर्षों से टिके हुए है। हमारा जमा जमाया घर मत बिखेरो।" व्यतर आत्माएँ बोली।

"तुम कौन हो? इसे क्यो कष्ट दे रही हो? क्या पूर्वभव का वैर-बदला ले रही है? सत्य-सत्य हकीकत बता दो।" तपस्वीराज ने पूछा।

"हम जोगिनियाँ है, एक-दो नही अनेक है। पन्द्रह वर्ष पूर्व हम क्रीडा कर रही थी, वहाँ अर्थात् जहाँ हमारे खेलने का स्थान था वहाँ इसने मात्रा (पेशाब) कर दिया, इसीलिये हमे गुस्सा आया तब से हम इसके शरीर से क्रीडा करती है। इसके हमारे बीच अन्य कोई वैर नही है।"

"अब कितने दिन और रहने का विचार है? जो भी हो अभी बोल दो।" तपस्वीराज ने फरमाया।

"कुछ दिन और रहने दो फिर निकलना ही है।" वे बोली।

बागरेचा बाई को तपस्वीराज ने तप उपवास करा दिया, धीरे-धीरे बढते-बढते बावीस (२२) उपवास तक पहुँचे। अन्ततोगत्वा सभी जोगिनियाँ माफी मागकर भागती बनी। तपस्वीराज के चरणो मे पूर्ण स्वस्थता-लाभ प्राप्त कर बागरेचा परिवार सहर्ष घर लौटा। □

हराम की पराजय

धुलिया (महाराष्ट्र) चम्पालाल जी की बहू जिसका नाम कमलाबाई था, बहुत दिनो से वह ऊपर की बाधा से पीडित थी। कई दिनो तक अनेको प्रकार के उपचार कराये पर कमलाबाई का शरीर स्वस्थ नही बन पाया।

अन्ततोगत्वा तपस्वीराज के चरणो मे उसे लाये, ज्योही तपस्वीराज की सूर्य-सी तेज दृष्टि पडी कि व्यतर शक्ति उस समय निकाल कर भाग गई, फिर भी पूर्णरूप से पिंड नही छोडा। मिथ्यादृष्टि जीव वह भले ही देव हो कि नर-नारी, तिर्यंच प्राणी उन्हे तमाच्छादित (मिथ्यात्व गुण) जीवन ही प्रिय है, वे भास्कर की भाँति श्र तदेव-मुनियो को कैसे देख सकते है? मलिन

आत्माओ को सत जीवन अमृत तुल्य नही, जहर जैसा लगता है। प्रकाश (समकित) नही उन्हे अन्धेरा (मिथ्यात्व) प्यारा है, वे उन्नति नही अवनति के ग्राहक बनते है। कई बार दैविक शक्ति (तपस्वोराज) तथा दैत्य शक्ति का परस्पर मिलाप हुआ किन्तु दैत्य शक्ति आँख चुराकर भागने मे सफल हुई।

तपस्वीराज ने जरा कडकाई अपनाई। पहले उसे हर तरह से समझाने का प्रयत्न किया, जब वह समझ नही पाई तब गुरु-गणेश ने अपनी औपध (तप) देना चालू कर दिया। उपवास अट्ठम धीरे-धीरे पन्द्रह उपवास तक पहुँचे कि व्यतर शक्ति घबरा गई, अन्तत उसे हार खानी पडी।

माफी मागते हुए बोली—

"ओ बाबा! अब मुझे छोड दो, आप तो दयालु है, काहे को मुझे इस प्रकार मार रहे हो? अब मैं इसे कभी नही सताऊँगी, अब छोड दो। अव तकलीफ नही दूँगी।"

"और कुछ बाकी हो तो बोल?" तपस्वीराज से पूछा।

"नही, अब कुछ नही।" इस प्रकार बोलकर व्यतर आत्मा ने उसी समय कमलाबाई का पिंड छोड दिया।

बस, तपस्वीराज की जयकार से नभ मण्डल गूंज उठा। हराम हारा, राम की जीत हुई। □

तपोमय व्यक्तित्व

तपस्वीराज सद्गुरुनाथ कर्नाटक केशरो खद्दरधारी समकित धर्म प्रचारक गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज के व्यक्तित्व से स्थानकवासी, मूर्तिपूजक जैन समाज तो परिचित आर्कषित थी ही साथ ही जैनेतर समाज जिसमे—माहेश्वरी, अग्रवाल, ब्राह्मण, मराठा भी ज्यादा प्रभावित थे। होना भी सहज ही था क्योकि—गुण-गणेश का विमल व्यक्तित्व तथा सावद्य कर्तृत्व बडा ही उत्तम था। सत जोवन किसी एक व्यक्ति विशेष का नही अपितु समस्त प्राणी के श्रद्धा का केन्द्र विन्दु होता है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" की पावन भावना से जिनका अन्तर्हृदय सदैव जुडा रहता है। प्रेरणास्पद उपकारकर्ता महामनस्वी श्रमण का जीवन प्रतिपल प्रतिक्षण आदरणीय बनता है, इसमे कही अतिशयोक्ति नही है। तपस्वीराज का ऐसा ही प्रभावी

व्यक्तित्व सुदूर प्रान्त तक सुमन सौरभ सा फैला हुआ था। दु खी-दर्दी के लिये आरामदायी के साथ सम्यक् दर्शक रूप थे बाबाजी महाराज गुरु-गणेश।

निजामाबाद (आन्ध्रप्रदेश) निवासी माहेश्वरी समाज के एक सद् गृहस्थ राममोहन जी अपने बीस (२०) वर्षीय लडके से बहुत परेशान थे, क्योकि वह छह वर्षों से पागलपन का शिकार बना हुआ था, उसके पागल बनने का कारण अज्ञात था। अपने लडके की ऐसी दु खद स्थिति के कारण सारा परिवार दु खी था। साँप-छछून्दर जैसी समस्या का निर्माण हो गया। वे अपने लडके को न छोड सकते थे, न रखने मे प्रसन्न थे।

हर किसी को पीट देना, तोड-फोड करना, सामान फैंक देना, चिल्लाना, गालियें देना आदि कारण ही उसके ऐसे थे जिससे घर की विषम स्थिति बनी हुई थी, बहुत से लोगो से उपचार कराये पर कोई अन्तर नही हुआ। मस्तिष्क यदि अव्यवस्थित हो जाता है तो सारा जीवन ही अस्त-व्यस्त हो जाता है। तभी तो कहा है—

"अप्पा अरी होइ अणवट्ठियस्स।" अपनी आत्मा के पूर्व दूषित कर्म कभी-कभी ऐसे उपस्थित हो जाते है जिससे अस्त-व्यस्तता हो जाती है। अपनी आत्मा ही शत्रु तथा मित्र है।

लडके की ऐसी दयनीय दशा को देख एक जानने वाले पडौसी भाई जिसे कुछ दिनो पहले ही पता लगा था—"तपस्वीराज के तपोमय व्यक्तित्व का।" उन्होने कहा—

"तुम अपने लडके को जैन मुनि (साधु) बाबाजी श्री गणेशमलजी महाराज के पास ले जाओ, उनके पास ऐसा दिव्य आत्मिक चमत्कार है कि तुम्हारा लडका थोडे दिनो मे ही ठीक हो जायेगा। वे ऐसे नि स्पृह बाबा (साधु) हैं जो बिना (दक्षिणा) पैसा लिये ठीक कर देते है। उनकी दृष्टि, उनके तप-जप-आत्मिक-त्याग मे इतनी शक्ति है कि—मुर्झित-से व्यवहार मे नव चेतना का निर्माण कर देगी।"

पडोसी की बात पर विश्वास करते हुए राममोहन जी ने पूछा—"वे जैन बाबा कहाँ मिलेंगे ?

"कुछ लोगो से मुझे पता लगा है कि—वे महात्मा (जैन मुनि) आन्ध्र-प्रदेश मे ही हैं, पता लगाकर जल्दी पहुँच जाओ।"

अन्ततोगत्वा राममोहन जी अपने बेटे को लेकर गुण-गणेश तपस्वी-राज के चरणो मे जा पहुँचे, अपनी राम कहानी कह सुनाई। लडके के हाथ-पैरो मे साकल (जजीर) बँधी देख तपस्वीराज ने वह खुलवा दी तथा दूसरे

दिन उसे उपवास करवा दिया फिर अट्ठम, पाँच आगे आठ उपवास तक आये तब तक लडके का पागलपन छूमन्तर हो गया। तप-जप तथा तपस्वी-राज के शुभ मागलिक का प्रभाव व लडके के सातावेदनीय कर्म का उदय आदि सभी सयोगो से लडका आठ दिन मे ही ठीक हो गया।

वर्षों की औषधि ने जो काम नही किया वह काम तपस्वीराज की तपोमय औषधि ने कर दिखाया। राममोहन माहेश्वरी नव जीवन प्रदायक, प्रखर व्यक्तित्व सम्पन्न, गुरु-गणेश का महान् उपकार मानता हुआ, अनेक प्रकार के प्रत्याख्यान लेकर प्रसन्न चित्त अपने घर लौटा। ऐसा था—हमारे चरित-नायक तपस्वीराज का तपोमय व्यक्तित्व। □

वैद्यराज की महौषध

दिमाग एक पॉवर हाउस है। पॉवर हाउस मे जब विकृति आ जाय किंवा पॉवर सतुलित न हो तो सर्वत्र प्रकाश की जगह अन्धेरा ही अन्धेरा छा जाता है, व्यवस्था अव्यवस्थित हो जाता है। बस, वैसे ही दिमाग एक केन्द्रीय सरकार है। केन्द्र मे शिथिलता आई तो सारे प्रान्तो (अग-उपागो) मे अराजकता आ जाती है।

राजनी (खानदेश) निवासी लोढा परिवार के एक लडके के दिमाग मे गर्मी चढ गई, क्योकि—वह ज्यादा सोच-विचार करता था। रात हो कि दिन, अकेला हो कि लोगो के बीच कुछ न कुछ बडबडाना, जोर-जोर से चिल्लाना, तोड-फोड करना, जोर-जोर से हँसना-रोना इस प्रकार अकारण हो चलता रहता। हर माता-पिता अपनी सतान को अच्छी हालत मे देखना चाहते हैं, बस वैसे ही लोढा परिवार ने पानी की तरह पैसा बहाया अपने लडके को अच्छा करने के लिये किन्तु सभी प्रयास निष्फल रहे।

जब लडके की हालत मे कोई सुधार नही आया तब आस-पास वाले कोई बोलते—अब क्यो पैसा बर्बाद करते हो, इसे पागलखाने मे छोड आओ, इसके यहाँ रहने से (हमको) हमारे मानस को विक्षिप्तता का अनुभव होता है। कोई कहता—हमे तो ऐसा लग रहा है कि कोई देवी-देव, भैरू-भवानी है। कोई यूँ भी बोलने लगा—नवरात्रि मे किसी दुश्मन ने इस पर कुछ कर दिया है। "भिन्ना वाणी मुखे-मुखे।" वाणी बातें सुन-सुनकर लोढा परिवार बडा दु खद स्थिति मे पड गया।

एक विवेकशील व्यक्ति ने कहा—"किसी की बातो पर ध्यान न दो और न दु ख खेद करो। मुझे पता लगा है कि—बावाजी महाराज गुरु-गणेश के चरणो मे ऐसे सैकडो-हजारो नर-नारियो ने दु खो से मुक्ति पाई है। अत तुम इसे अर्थात् अपने लडके को वहाँ ले जाओ। उनकी शुभ दृष्टि तथा मागलिक हो इसे ठीक कर देगी। यदि वे कुछ तप बता दे तो वह कर लेना जिससे इन लोगो के कथनानुसार जो भी होगा वह बिल्कुल ठीक हो जायेगा।"

हितैषी व्यक्ति के वाक्यो पर श्रद्धा करके लोढा परिवार जहाँ सद्गुरु नाथ कर्नाटक केशरी तपस्वीराज विराजित थे वहाँ आया। अपने बावले (पागल) लडके को सामने बिठाकर बोले—

"दीन दयालु गुरुदेव! यह कुछ वर्षों से पागल हो गया है। बहुत इलाज कराये पर कुछ नही हुआ। अब तो आपका ही शरणा है। आप तो सभी दैविक, पाशविक शक्ति, तत्र-मत्र-यत्रो के महा वैद्यराज है। मेरी श्रद्धा है, मेरा लडका आपश्री के बताये मार्ग से ठीक हो जायेगा।"

जब कभी तपस्वीराज स्वाध्याय चिंतन मे मग्न होते तो स्वाध्याय मे विघ्न उपस्थित होने पर जरा कडकाई भी ले आते। उस समय वे फरमाते—

"क्या गणेशिया ने दवाखाना खोल रखा है? क्या मेरे पास दवाई रखी है? मैं कोई गृहस्थ थोडे ही हूँ जो जादू-टोना बताया करूँ? जब बीमारी ने घेरा, असाता वेदनीय का उदय हुआ तो यहाँ भाग आये, असाता मे गणेशिया और भगवान याद आये, कभी साता मे रहते हुए भगवान को याद किया है?"

फिर मृदुमना तपस्वीराज आगत श्रद्धालु आत्माओ को रास्ता दिखा ही देते। बस, वैसे ही लोढा के साथ भी बना अन्तत सत्पुरुष सन्तरत्न गुरु-गणेश ने तेला करवाया अर्थात् अट्ठम तप के प्रत्याख्यान करवाये। साथ ही तीन दिन तक मागलिक सुनाई फिर अट्ठम, इस प्रकार पाँच तेले करवाये, बस तप का महाप्रभाव ही समझो लडका ठीक हो गया। इस प्रकार महान वैद्यराज की महौषध तप-जप बराबर काम कर गई। लोढ़ा परिवार लडके को लेकर सकुशल घर लौटे।

□

सफल सर्जन

मुँहपत्ति बँधाने वाले बाबा कर्नाटक केशरी, समकित धर्म प्रसारक, खद्दरधारी, सद्गुरुनाथ, तपस्वीराज श्री गणेशमलजी महाराज उन दिनो महाराष्ट्र मे सद्धर्म का प्रचार-प्रसार करने मे लगे हुए थे। जैन-जैनेतर सभी धर्मप्रेमी आत्माओ के हृदय पटल पर आपका श्रद्धा से आपूरित प्रभाव था। आपकी प्रवचन-सभा मे जैन समाज तो मुँहपत्ति मुँह पर बाँधती ही थी किन्तु जैनेतर समाज के नर-नारी भी सश्रद्धा इसे अपने मुँह पर बाँधते थे। आपश्री अपने प्रवचन मे तप तथा सम्यक्त्व धर्म को स्वीकार करने का विशेष रूप से फरमाया करते थे। आत्म धर्म का तात्त्विक विवेचन जो सरल सहज भाव भाषा मे होता था, श्रोताओ के अन्तर्हृदय मे जल्दी उतरता था। यही कारण था कि—दूर-दूर से जनता आपश्री के दर्शन तथा प्रवचन पीयूष का पान करने आती थी, साथ ही अनेको की शारीरिक पीडा भी दूर हो जाती थी।

यवतमाल (जिला) के अन्तर्गत पलसपुर गाँव का एक मराठा परिवार का भाई जो बहुत समय से कुष्ठ रोग से पीडित था, उसके शरीर से पीप (मवाद) चिकना पानी झरता रहता, जिससे मक्खियाँ भिन-भिनाती रहती, शरीर से दुर्गन्ध आती, विचारे का चलना-फिरना, उठना-बैठना, खाना-पीना, सोना आदि सभी हराम सा हो गया। स्वय तो दुखी था ही, परिवार के लोग भी दुखी थे। यहाँ तक कि वे उसकी सेवा करने से घबरा गये। अब उन्हे घृणा होने लगी, वे भी उससे दूर रहने लगे। जो कुछ देना होता तो दूर से ही देते। "छूत की बीमारी कही हमे न लग जाय।" इस विचार से उसके खाने-पीने के बर्तन भी अलग रखते। कुछ दिनो मे तो निकट आने मे भी कतराने लगे। ऐसे घृणास्पद वातावरण से कुष्ठ (कोढ) रोग से पीडित वह व्यक्ति अपनी नफरत भरी जिन्दगी से ऊब गया।

एक दिन जिन्दगी से छुटकारा पाने के लिये दुखी मन होकर मरने का विचार कर अपने एक पुराने मित्र से मिला और हकीकत सुनाते हुए बोला—

"मित्र! मेरे लिये यह जिन्दगी भारभूत है, इस दुर्गन्धमय शरीर से जब परिवार के लोग भी घृणा करते है तो दूसरे क्यो नही करते होगे? अतएव मुझे तो कही से थोडा जहर लाकर दे. दे जिसे खाकर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दूँ, इस भयकर वातावरण से मुक्ति मिले।"

"मित्र ! जहर खाना तो दूर रहा ऐसा विचार भी नही करना चाहिये। मैंने सन्त महात्मा (जैन साधु) द्वारा सुना है कि जहर खाकर मरना अधम गति का मेहमान बनना है। भले ही यहाँ के दु खो से अर्थात् वर्तमान शारीरिक दु खो से छुटकारा मिल जायेगा पर भविष्य अन्धकारमय हो जायेगा। अगला जीवन इससे भी ज्यादा खराब हो जायेगा।"

"तो फिर क्या करना चाहिये ?"

"एक जैन बाबा श्री गणेशमलजी महाराज इधर ही महाराष्ट्र मे धर्म-प्रचार कर रहे है। वे बडे ही चमत्कारी है, न जन्त्र-मन्त्र करते, न टोना-टोटका। केवल तप (उपवास) व्रत कराते है, मगलिक सूत्र सुनाते है, जिससे सैंकडो लोग चगे हो गये। अतएव मेरा कहना मानो तो उनके चरणो मे चले जाओ। तुम्हे मरना तो है ही, एक बार उनके पास जाओ, जैसा वे कहे वैसा कर लेना। मुझे पूर्ण विश्वास है तुम्हारा कोढ दूर हो जायेगा, अर्थात् उनकी शुभ कृपा से तुम्हारी तबियत ठीक हो जायेगी।"

"वे जैन बाबा कहाँ होगे ? यदि तुम्हे पता हो तो बता दो। उनके पास भी जाकर अपना भाग्य आजमा लू ँ।" गलित कुष्ठ रोग जिसे था वह बोला।

"वे ढाणकी जो कुछ ही दूर है, वहाँ विराजित हैं, ऐसा आने-जाने वालो से सुना है।"

मराठा, रोग पीडित व्यक्ति ढाणकी तपस्वीराज के चरणो मे पहुँचा, तथा सश्रद्धा चरणो मे नमस्कार करता हुआ अपनी मातृभाषा मराठी मे बोला—

"ओ बाबा ! मला तुमच्चेच शरण आहे, आपण जे मला सागाल तसे मी करीन, पण माझा रोग बरा झाला पाहिजे।"

अर्थात् वह बोला—बाबा मुझे अब तुम्हारा शरण ही है। जैसा तुम कहोगे, वैसा मैं करूँगा पर मेरी तबियत अच्छी हो जानी चाहिये।

दयालुदेव तपस्वीराज ने उसे सहज ही कह दिया—

"तुम्हे एक महीने का उपवास करना पडेगा, एक महीने मे ही स्वास्थ्य अच्छा हो जायेगा। बोल मजूर है ? जब तक तप चलेगा तब तक यही रहना पडेगा।"

"ऐसे तो मैंने आज तक एक उपवास भी नही किया है पर अब आपके कथनानुसार अवश्य व्रत करूँगा। आपकी शुभ कृपा है, कुछ सन्देह ही नही।

आधी से ऊपर जिन्दगी वैसे ही रोते-रोते गुजर गई है, फिर क्यो न पिछली जिन्दगी मे तप करूँ ? आज से ही मुझे उपवास करवा दें।"

तपस्वीराज ने तप तथा जप दोनो की सम्यक् विधि बतला दी। मराठा भाई ने धीरे तप का क्रम बढाने का उपक्रम किया। जिसने कभी एक उपवास भी नही किया उसने मासखमण (एक महिने का) तप पूर्ण कर दिया। शुभ सकल्पानुसार शुभ होने मे क्या देर लगती है ? एक महिने मे कुष्ठरोग (गलित कुष्ठ) जड-मूल से साफ हो गया। शरीर नीरोग बन गया। चेहरे को गई हुई रौनक फिर से आ गई। मानो नया जीवन पाया हो ऐसा शरीर हो गया। प्रत्यक्षदर्शियो को कहना पडा—हजारो रुपये लेकर भी जो काम डॉक्टर-वैद्य-हकीम नही कर पाये वह काम गणेश बाबा ने करके दिखाया। असली सर्जन तो तपस्वीराज हैं, इस जनम की बीमारी तो मिटाते ही है उससे भी ज्यादा मिथ्यात्व की बीमारी को दूर करके सैकडो-हजारो मरीजो को सम्यक्त्व औषध देकर स्वस्थ बनाया है।

मराठा बन्धु स्वस्थ हो गुरु-गणेश बाबा से अनेको प्रकार के त्याग स्वीकार कर सहर्ष अपने घर लौटा। □

दया धर्म की जय

क्रूर, खूखार, दयाहीन मनुष्य से बढकर और कौन होगा ? पेट, परिवार, पद-पैसा, प्रतिष्ठा, पत्नी-पुत्र आदि के लिए मानव परिवेश मे रहता हुआ ऐसे जघन्य कृत्य कर गुजरता है, किंवा अधमाधम कार्य करने के लिए कमर कसकर तैयार रहता है। मानव आज अपनी स्वार्थलिप्सा मे फँसकर पावन-पवित्र मानवता को धूमिल-कलकित करता जा रहा है। जिह्वा की लोलुपता मे पडकर अन्य प्राणियो को बेमौत मारना, त्रास पहुँचाना, अपने पेट मे स्थान देना ही उसने अपना कार्यक्षेत्र मान लिया है।

दूसरी ओर कुछ ऐसे भी मानव है, जिनमे—दयाहीनता, क्रूरता, खूखारता का अशमात्र भी लेप नही मिलेगा। मानव के रूप मे अतिमानव, महामानवता के गुणो से जो ओत-प्रोत हैं, जिनकी दृष्टि हिंसा-हत्या-अत्याचार को देख भी नही सकती। जो प्रतिपल-प्रतिक्षण दुराग्रहो, दुराचारो को मिटाने का भरसक प्रयत्न करते रहते है, सदकार्यों के लिये वे अपने जीवन का समर्पण भी कर देते हैं। जिस प्रकार क्रूर व्यक्ति अपनी क्रूरता के

"मित्र ! जहर खाना तो दूर रहा ऐसा विचार भी नहीं करना चाहिये। मैंने सन्त महात्मा (जैन साधु) द्वारा सुना है कि जहर खाकर मरना अधम गति का मेहमान बनना है। भले ही यहाँ के दु खो से अर्थात् वर्तमान शारीरिक दु खो से छुटकारा मिल जायेगा पर भविष्य अन्धकारमय हो जायेगा। अगला जीवन इससे भी ज्यादा खराब हो जायेगा।"

"तो फिर क्या करना चाहिये ?"

"एक जैन बाबा श्री गणेशमलजी महाराज इधर ही महाराष्ट्र मे धर्म-प्रचार कर रहे है। वे बडे ही चमत्कारी है, न जन्त्र-मन्त्र करते, न टोना-टोटका। केवल तप (उपवास) व्रत कराते है, मगलिक सूत्र सुनाते हैं, जिससे सैकडो लोग चगे हो गये। अतएव मेरा कहना मानो तो उनके चरणो मे चले जाओ। तुम्हे मरना तो है ही, एक बार उनके पास जाओ, जैसा वे कहे वैसा कर लेना। मुझे पूर्ण विश्वास है तुम्हारा कोढ दूर हो जायेगा, अर्थात् उनकी शुभ कृपा से तुम्हारी तबियत ठीक हो जायेगी।"

"वे जैन बाबा कहाँ होगे ? यदि तुम्हे पता हो तो बता दो। उनके पास भी जाकर अपना भाग्य आजमा लूँ।" गलित कुष्ठ रोग जिसे था वह बोला।

"वे ढाणकी जो कुछ ही दूर है, वहाँ विराजित है, ऐसा आने-जाने वालो से सुना है।"

मराठा, रोग पीडित व्यक्ति ढाणकी तपस्वीराज के चरणो मे पहुँचा, तथा सश्रद्धा चरणो मे नमस्कार करता हुआ अपनी मातृभाषा मराठी मे बोला—

"ओ बाबा ! मला तुमचेच शरण आहे, आपण जे मला सागाल तसे मी करीन, पण माझा रोग बरा झाला पाहिजे।"

अर्थात् वह बोला—बाबा मुझे अब तुम्हारा शरण ही है। जैसा तुम कहोगे, वैसा मैं करूँगा पर मेरी तबियत अच्छी हो जानी चाहिये।

दयालुदेव तपस्वीराज ने उसे सहज ही कह दिया—

"तुम्हे एक महीने का उपवास करना पडेगा, एक महीने मे ही स्वास्थ्य अच्छा हो जायेगा। बोल मजूर है ? जब तक तप चलेगा तब तक यही रहना पडेगा।"

"ऐसे तो मैंने आज तक एक उपवास भी नही किया है पर अब आपके कथनानुसार अवश्य व्रत करूँगा। आपकी शुभ कृपा है, कुछ सन्देह ही नही।

"मैं ब्राह्मण जाति का व्यक्ति हूँ, हिन्दू हूँ।"

"क्या ब्राह्मण किंवा हिन्दू जाति का यही धर्म है ? कर्तव्य है, जिसे सस्कृति के स्वर मे चिल्लाते रहना—"गो हमारी माता है।" और दूसरी ओर चद चाँदी के टुकडो के पीछे सस्कृति की हत्या कर देना, क्या तुमने भारतीय सस्कृति मे यही सीखा है ? बेटा अपनी माँ की हत्या करके, खून का कीच मचाये वही सपूत है ? तुम हिन्दू होकर गो-हत्या को प्रोत्साहन दे रहे हो, यह न्याय है या अन्याय ? तुम मझधार मे डब रहे हो या सस्कृति का सही रूप मे पालन कर रहे हो ? तुम भारतीय होकर भी भारतीयता को कलकित कर रहे हो। यदि तुम अपने कर्तव्य की राह पर सही रूप से चलते तो क्या तुम्हारे रहते ऐसे जगत् निन्द्य कार्य कभी होते ? मेरी समझ मे कभी नही। एक काटा पैर मे लग जाता है तो उसे भी तुम सहन नही कर सकते तो ये निरपराधी मूक प्राणी छुरिये कैसे सहन करेंगे ? हम सत है, ससारी बखेडो से सदा दूर रहते हैं पर जहाँ तक हो सकेगा हिंसात्मक प्रवृत्ति को रोकने का भरसक प्रयत्न करना, हमारा परम कर्तव्य है। यदि तुम सही रूप मे ब्राह्मण हो तो ब्राह्मणत्व तथा हिन्दुत्व धर्म की रक्षा के लिए तत्पर रहो अर्थात् गो-हत्या प्रवृत्ति पर रोक लगे ऐसा प्रयत्न करो।" तपस्वीराज ने अधिकारी को मार्ग दर्शन दिया।

गुरु गणेश के मार्मिक सन्देश से अधिकारी का मानस जाग गया, उसी समय क्षमा मागता हुआ बोला—

"बाबा ! तुम सच्चे रूप मे मानव क्या, महामानव हो, गुरु हो, मैं अपने ब्राह्मणत्व धर्म से भटक गया था। आज मुझे तुमने सही पथ पर लाकर खडा कर दिया है। इस महान् उपकार को मैं कभी नही भूलूँगा। आज से ही गायो को कत्लखाने तक जाने से बचाने का भरसक प्रयत्न करूँगा।" दयाधर्म को स्वीकार कर अधिकारी लौट जाता है, उन कसाइयो पर भी सद्गुरु के वचनो का प्रभाव पडा, उन्होने भी सहज मे ही गायें सौप दी।

अन्तत तपस्वीराज की उत्तम भावना के अनुरूप चौसाला के प्रागण मे "श्री महावीर जैन गौशाला" का जन्म हुआ। चारो ओर तपस्वीराज तथा दयाधर्म की जयकारो से नभ मण्डल गूज उठा। □

सम्यक् समाधान

स० २००६ की घटना है, मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता परम श्रद्धेय आत्मार्थी श्री वसन्तलाल जी महाराज दर्शन एव सेवा भावना से प्रेरित होकर कर्नाटक

लिये कमर कसकर तैयार रहता है, उसी प्रकार महान् मानव क्रूरता का प्रतिकार करने मे वीर योद्धा की भाँति डट जाता है।

दयासिन्धु, कर्नाटक केशरी, हमारे चरितनायक, परम श्रद्धेय, गुरुदेव श्री गणेशमलजी महाराज अपना होली चातुर्मास चौसाला (महाराष्ट्र) मे व्यतीत कर रहे थे। स्वाध्याय-चिंतन मे लगे हुए थे। अचानक बाजार मे उनकी दृष्टि पहुँची। कुछ लोग लगभग १०-११ गायो को बन्धन मे डालकर जबरन खीचते हुए ले जा रहे थे। उन्होने उनकी वेष-भूषा से पहचान लिया कि "ये लोग कसाई है और गायो को कत्लखाने की ओर ले जा रहे है।" उनसे रहा नही गया, उसी समय वे बाहर आये, विचार किया—"यदि जरा-सी देर भी हो गई तो ये दयाहीन निर्दयी लोग चन्द मिनटो मे ही गायो को कत्ल कर देंगे।" आगे बढकर गायो को रोकते हुए कसाइयो को ललकार कर बोले—

"मनुष्यो ! मनुष्य बनकर जीओ। मानवता के धवल परिवेष पर दानवता का दूषित धब्बा क्यो लगा रहे हो ? जघन्य कृत्य यह हिंसामय कार्य करके क्यो नर्क के द्वार खोल रहे हो ? पूर्व के अधम कर्मों के कारण तो यहाँ दुःख उठा रहे हो फिर यहाँ अधमाधम कर्म क्यो करते हो ?"

कसाई लोग तपस्वीराज के सामने खडे नही रह सके, सभी उल्टे पैरो अपने अधिकारी के पास पहुँचे। तब तक तो इधर बहुत से जैन-जैनेतर भाई अहिंसाप्रेमी एकत्रित हो गये तथा तपस्वीराज की आज्ञानुसार सभी गायो को अपने (ताबे) कब्जे मे किया।

थोडी ही देर मे कसाई लोग अपने अधिकारी को लेकर गुरु गणेश बाबा के पास आये। अधिकारी आक्रोश युक्त बोला—

"ओ बाबा ! गायो को क्यो रोक रखी है ? तुम महात्मा लोगो का क्या यही काम है, राह पर चलने वालो से भिडना ? तुम अपना काम करो, जगत् अपना काम करे। जगत् के लोगो के काम मे बाधा उत्पन्न करना तुम जैसे सन्यासी महात्माओ को शोभा नही देता है। गायो को छोडो और अपने रास्ते लगो। काहे को गरीब लोगो की कमाई मे रोडा अटकाते हो ?"

"तुम किस जाति के हो ? यह मैं जानना चाहता हूँ।" तपस्वीराज ने पूछा।

"पहले आप बताइये, आप कौन है ?" अधिकारी पूछ बैठा।

"मैं सर्वप्रथम मानव फिर भारतीय,परम्परा को अक्षुण्ण रखने वाली श्रमण शृखला का एक अग हूँ जैन साधु। मैं अपने सही कर्तव्य पर हूँ। अब आप कौन हैं अपना परिचय दें।" तपस्वीराज ने फरमाया।

खण

३
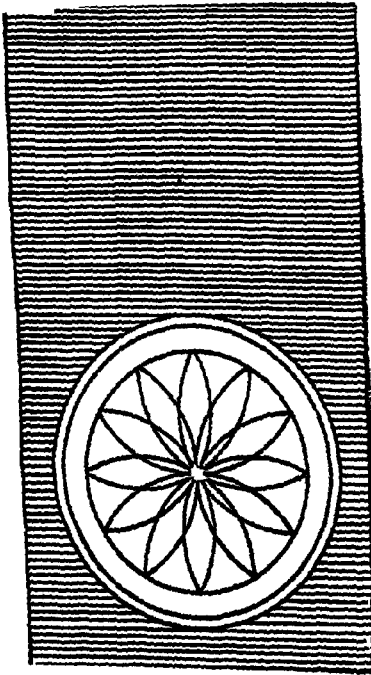
त :पूत द् ुरु । टिक केसरी

ुरु-गणे -जीव द्

इतिहास और परम्पर

केशरी महामुनिपु गव श्री गणेशमलजी महाराज की पावन सेवा से उपस्थित हुए। ऐसे वे गुरुदेव मेवाड भूषण श्री प्रतापमल जी महाराज की सेवा मे थे तभी से तप-जप-ध्यान-मौन की और एकान्त साधना-क्रिया मे निमग्न रहते थे। गुरु गणेश बाबा के पास गये तो वहाँ भी अपनी आराधना चालू ही थी।

एक दिन अर्धरात्रि के पश्चात् जब आप (श्री बसन्तलाल जी महाराज) खडे-खडे ध्यान-साधना पूर्णकर पद्मासन लगाकर बैठे-बैठे चिन्तन कर रहे थे तभी आपको हल्की-सी निद्रा आई, जिसे कहते हैं—सुप्तासुप्त अवस्था, न गहरी निद्रा, न स्पष्ट जागरण (जागृत अवस्था)। अर्द्धनिद्रित अवस्था मे आपने एक दृश्य देखा, वह इस प्रकार था—

अत्यन्त धवल परिधान पहने हुए एक व्यक्ति जो बहुत ही सुन्दर है, (मानो देवकुमार के समान) सामने खडा होकर पूछ रहा है—

"तुम यहाँ क्यो आये हो?"

"मैं तपस्वीराज के दर्शन तथा सेवा पयुपासना के लिए आया हूँ।"

"कही छल-छिद्र, निन्दा-विकथा करने की या असद्‌भावना लेकर तो नही आये हो? सही-सही बोल देना।"

"सद्‌भावना को ही मेरे हृदय मे स्थान है।"

प्रश्नोत्तर के बाद उस अदृश्यशक्ति ने वही नाटकीय दृश्य उपस्थित किया।

मुकुट, कुण्डल, हार, कटिसूत्र आदि दिव्य आभरणो से सुसज्जित एक नही अनेको देवी-देवता प्रगट हुए तथा नृत्य करके चले गये।

प्रात काल होने पर आपने (श्री बसन्तलाल जी महाराज ने) तपस्वीराज बाबाजी महाराज के सामने रात्रि की घटना अथ से इति तक प्रस्तुत कर दी, साथ ही यह समाधान चाहा कि—यह क्या था?

प्रत्युत्तर मे गुरु गणेश ने फरमाया—"तुम डरे तो नही? ऐसे चमत्कार एक क्या अनेको देखोगे।"

"कृपासिन्धु! जिस आत्मा ने मुझसे प्रश्न किये वो कौन है?" पुन आत्मार्थी श्री बसन्तलाल जी महाराज ने पूछा।

"यह जो तुम्हे दृश्य हुआ है वह न पाखण्ड है और न कोई जजाल, किन्तु—कुप्पल निवासी माणकचन्द जी मुथा की आत्मा जो देव पर्याय मे उत्पन्न हुई है, वही तुम्हारे पास आई थी।" सम्यक् समाधान हमारे चरितनायक श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज ने किया।

सम्यक् समाधान को पाकर आत्मार्थी श्री बसन्तलाल जी महाराज बडे प्रभावित हुए। □

खण्ड

३
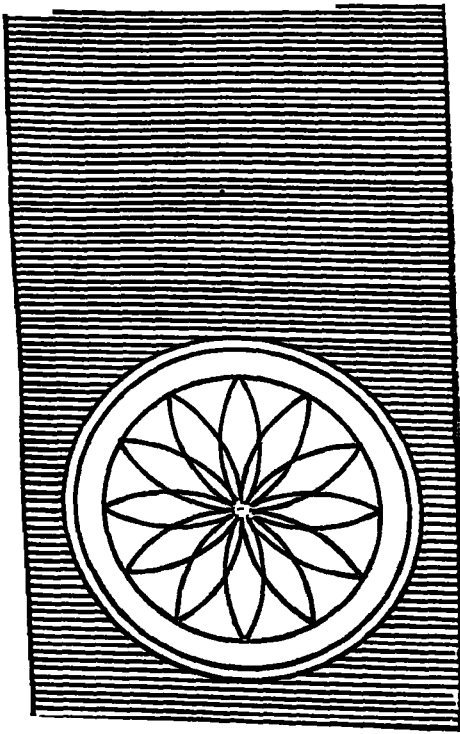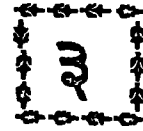
त :पूत द ु रु । क टिक केसरी

ु रु -गणे -जीव द

इतिहास

और

पर पर

कोटा सम्प्रदाय एक परम्परा

वीर निर्वाण के पश्चात् क्रमश श्रीमद् धर्माचार्य सुधर्मा स्वामी प्रभृति देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण तक २७ ज्योतिर्धर महाप्रभावी उदीयमान आचार्य हुए हैं, जिनके द्वारा जिनशासन की अपूर्व प्रभावना हुई।

वीर स० ६८० मे सर्वप्रथम देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण ने भव्य-हितार्थ वीर-वाणी को लिपिबद्ध करके एक महत्त्वपूर्ण सेवा कार्य पूरा किया। तत्पश्चात् गच्छ परम्पराओ का विस्तार होने लगा। वि० स० १५३१ मे "लौकागच्छ" की निर्मल कीर्ति देश के कोने-कोने मे सुमन-सौरभ वत् फैलने लगी। तत्सबन्धित आठ पाटानुपाट आचार्य परम्पराओ का सक्षिप्त नामोल्लेख इस प्रकार है—

भाणचन्द्र ऋषि जी महाराज
भद्रचन्द्र ऋषि जी महाराज
लूनचन्द्र ऋषि जी महाराज
भीमचन्द्र ऋषि जी महाराज
जगमाल ऋषि जी महाराज
सखा ऋषि जी महाराज
रूपचन्द्र ऋषि जी महाराज
जीवाजी ऋषि जी महाराज

इनके बाद अनेक महामुनिपुगव साधक वृन्दो ने क्रियोद्धार किया, जिनमे विशेष ख्याति सम्पन्न धर्म प्रसारक धर्माचार्य श्री जीवराज जी महाराज एव हरजी ऋषि जी महाराज उल्लेखनीय है। उनके विषय मे कुछ ऐतिहासिक तथ्य प्रसिद्ध हैं उन्हे यहाँ अकित कर रहा हूँ—

राजस्थान (मारवाड) प्रान्त के पीपाड नगर मे वि० स० १६६६ मे यति तेजपाल जी एव कुँवरपाल जी के ६ शिष्यो ने क्रियोद्धार किया, जिनके नाम इस प्रकार थे—

श्रीमद् अमीपाल जी, श्री महीपाल जी, श्री हीराचन्द जी, श्री गिरधारीलाल जी एव श्री हरजी ऋषि जी। इनमे श्री जीवराज जी तथा श्री गिरधारी लाल जी, श्री हरजी स्वामी (ऋषि) जी की शिष्य परम्परा फैली।

वि० स० १६६६ मे श्रीमद् जीवराज जी महाराज को आचार्य पद प्राप्त हुआ, उनके सप्त रत्न (सात शिष्य) प्रमुख हुए। वे सभी क्रमश आचार्य बनकर जिनशासन की सेवा मे अग्रगण्य हुए। उन्हे इस नाम से पुकारा गया है—

पूज्य श्री पूनमचन्द जी महाराज
पूज्य श्री नानकराम जी महाराज
पूज्य श्री शीतलदास जी महाराज
पूज्य श्री स्वामीदास जी महाराज
पूज्य श्री कुन्दनमल जी महाराज
पूज्य श्री नाथूराम जी महाराज
पूज्य श्री दौलतराम जी महाराज

कोटा सम्प्रदाय का इस प्रकार प्रतिदिन विस्तार होता रहा, इस शृखला मे केवल सन्तो का विस्तार ही नही उत्कृष्ट ज्ञान-दर्शन-चारित्र सम्पन्न आत्माओ का आविर्भाव पुरजोर से होता रहा। यह कोटा सम्प्रदाय आगे चलकर कई शाखाओ मे विभक्त हो गई, जिसमे एक शाखा के अगगण्य जैनाचार्यों की शुभ नामावली निम्न है—

पूज्य श्री जीवराज जी महाराज
,, ,, हरजी ऋषि जी महाराज
,, ,, गुलाबचन्द जी महाराज (गोदाजी महाराज)
,, ,, फरसराम जी महाराज
,, ,, लोकपाल जी महाराज
,, ,, मयाराम जी महाराज
,, ,, दौलतराम जी महाराज
,, ,, लालचन्द जी महाराज
,, ,, गोविन्दराम जी महाराज
,, ,, फतहचन्द जी महाराज
,, ,, ज्ञानचन्द जी महाराज
,, ,, छगनलाल जी महाराज
,, ,, रोडमल जी महाराज
,, ,, तपस्वी प्रेमराज जी महाराज

× × ×

परमपूज्य बाल ब्रह्मचारी

श्री जीवराज जी महाराज साहब
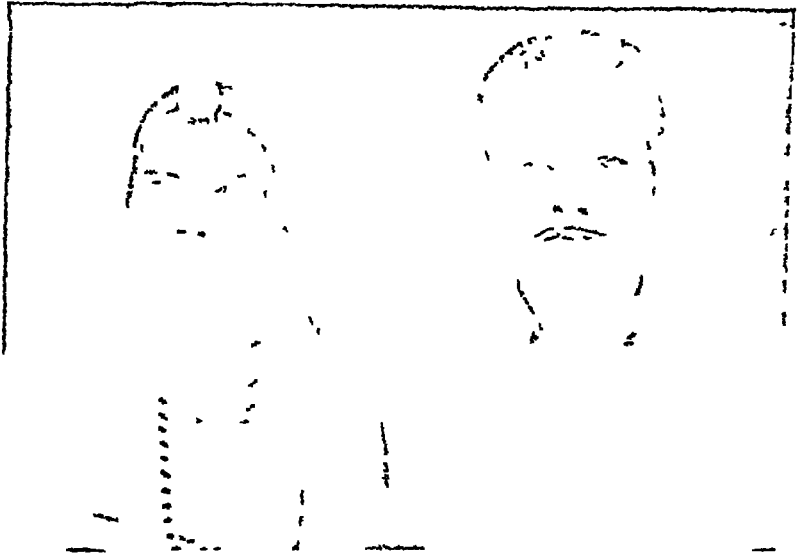
ग्रन्थ प्रकाशन मे उदारतापूर्वक सहयोग देने वाले

गुरुभक्त दानवीर सुश्रावक श्री पारसमल जी तालेडा (मद्रास)

एवम्

धर्मशीला सुश्राविका सौ० किरणबाई तालेडा

आचार्य श्री दौलतराम जी महाराज

जन्म —वि० स० १८०१ काली पीपल गाँव मे
दीक्षा — „ „ १८१४ फाल्गुन शुक्ला ५
दीक्षागुरु—आचार्य श्री मयाराम जी महाराज
स्वर्गवास—वि० स० १८६० पौप शुक्ला ६ रविवार, उणियारा ग्राम

आपश्री का जन्म कोटा राज्य के अन्तर्गत "काला पीपल गाँव" में हुआ था। आप जाति के वगैरवाल थे। शैशवकाल से ही आपश्री का जीवन धार्मिक सस्कारो से ओतप्रोत था। आचार्य श्री मयागम जी महाराज के मार्मिक सन्देशो से वैराग्य प्राप्त कर वि० स० १८१४ फाल्गुन शुक्ला ५ की मगल वेला में दीक्षा स्वीकार की। अपने गुरु क्रियानिष्ठ प्रखर वक्ता आ० श्री आत्माराम जी महाराज से विनयपूर्वक ज्ञान सम्पादन किया। निर्मल मेधा शक्ति के कारण अल्प वर्षों मे ही आपने आशातीत ज्ञानाभ्यास कर लिया। ज्ञान-क्रिया के सुन्दर सगम से आपका जीवन उत्तरोत्तर उन्नतिशील होता रहा। फलस्वरूप सयमी गुणो से प्रभावित होकर चतुर्विध सघ ने आपको आचार्य पद से शुभालकृत किया।

मुख्य रूप से कोटा एव उसके निकटवर्ती क्षेत्र आपकी विहार स्थली रही है। इस क्षेत्र मे अथक परिश्रम के द्वारा आपश्री ने धर्म प्रचार किया। भगवान महावीर के सन्देशो को घर-घर पहुँचाने का प्रयत्न किया। धर्म प्रचार मे आने वाले परीषहो को सहन किया, फिर भी आप उसी क्षेत्र मे डटे रहे। कोटा नगर मे उस समय आपके प्रवचनो का प्रभाव सरावगी, माहेश्वरी, अग्रवाल, पोरवाल, वगैरवाल, ओसवाल आदि पर बहुत अच्छा पड़ा। इस कारण लगभग तीन सौ घर वालो ने आपके मुखारविन्द से समकित (गुरु आम्नाय) स्वीकार की। धीरे-धीरे बूदीबारा आदि क्षेत्रो मे भी आपश्री के त्याग-सयम तथा प्रवचन की सौरभ पहुँची, वे भी आपके अनुयायी बने।

आपकी विहार स्थली उस समय अधिक रूपेण कोटा तथा उसके आस-पास रही इसीलिए आपश्री का समूह कोटा सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

एकदा आपका (आचार्य प्रवर श्री दौलतराम जी महाराज) अपनी शिष्य मण्डली सहित धर्म प्रचार करते हुए दिल्ली मे शुभागमन हुआ। वैसे सुन रखा था कि "यहाँ एक श्रावक जैनागम के अच्छे ज्ञाता हैं।" वे आगम मर्मज्ञ सुश्रावक श्रीमान् दलपतसिंह जी थे, उनसे परस्पर तत्त्वचर्चा के साथ वार्तालाप हुआ। धीरे-धीरे सम्पर्क मे आते-आते उन्होने केवल दशवैकालिक

के माध्यम से पूज्य प्रवर के समक्ष ३२ सूत्रो का निष्कर्ष प्रस्तुत किया, उसे आचार्य प्रवर ने केवल सुना ही नही समझा—श्रद्धा तथा हृदयगम किया। *"ऐसे महामना, आगममर्मज्ञ, जिनशासन प्रभावक सुश्रावक, हमारे बीच है यह* जिनशासन की महान् शोभा है, जैनत्व का गौरव है।" ये वाक्य थे हमारे जैनाचार्य श्री दौलतराम जी महाराज के।

दिल्ली पधारने से पूज्य प्रवर का आगमिक ज्ञान-अनुभव बहुत पुष्ट बना।

रत्नत्रय को प्रख्याति से प्रभावित होकर काठियावाड प्रान्त मे विचरण (परिभ्रमण) करने वाले महामुनि श्री अजरामर जी महाराज ने दर्शन एव अध्ययनार्थ आपको याद किया। आपश्री (पू० श्री दौलतराम जी महाराज) से ज्ञान प्राप्त करने हेतु आपको काठियावाड का निमत्रण आया। तदनुसार आपश्री मार्गवर्ती क्षेत्रो को जिनशासन के महान् अमृतरूपवाणी से सिंचन करते हुए लीमडी (गुजरात) पधारे।

आपके शुभागमन के पश्चात् श्री अजरामर जी महाराज तथा "समकितसार" नामक ग्रन्थ के लेखक विद्वद्वर्य श्री जेठमल जी महाराज भी वहाँ पधार गये। इस प्रकार तीनो महान् श्रमणो के पावन मिलन से लीमडी शहर तीर्थ स्थली बन गया। जनता मे हर्षोल्लास तथा भक्ति की पवित्र गगा बह गई। मुनि-मण्डल मे पारस्परिक अनुभूतियो का काफी आनन्दपूर्वक आदान-प्रदान हुआ। इस प्रकार को श्लाघनीय प्रभावना करते आप श्री आचार्य देव सात चातुर्मास व्यतीत कर पुन राजस्थान मे पधार गये।

जयपुर राज्य के अन्तर्गत "रावजी का उणियारा" गाम मे आपश्री धर्मोपदेश द्वारा जनता को लाभान्वित कर रहे थे तभी एक दिन रात्रि मे दिल्ली निवासी आगममर्मज्ञ सुश्रावक श्रीमान् दलपतसिंह जी को स्वप्न मे ऐसा आभास ध्वनि के माध्यम से हुआ कि "अब शीघ्र ही सूर्य अस्त होने वाला है।" प्रात काल श्रावक जी ने अपने ज्योतिष ज्ञान से विचार किया तथा सोचा—"इस समय सूर्य के समान प्रकाशमान आचार्यदेव श्री दौलतराम जी महाराज हैं।" तत्क्षण समझ लिया कि "अब आचार्यदेव का आयुष्य विशेष लम्बा नही लगता है। उन्हे सकेत करना मेरा परम कर्तव्य है।" वे तत्काल उणियारा गाँव आये जहाँ आचार्य देव विराजमान थे।

सतो ने उन्हे देखकर पहचान लिया कि "ये दिल्ली के ज्ञानी श्रावक हैं।" उसी समय आचार्य देव के निकट आकर बोले—

"भगवन्त ! दिल्ली के श्रावक दलपतसिह जी आये है। वे आपश्री से मिलना चाहते हैं।"

आचार्य देव ने सोचा—एकाएक श्रावकजी यहाँ मुझसे मिलने आये है सचमुच इसमे कोई महत्त्वपूर्ण कार्य होना चाहिए। जरा गहराई मे उतरे तो अपने लिए ही विज्ञान लगाने लगे तो उन्हे पता लग गया कि "अब इस पार्थिव देह मे मेरा सात दिन का मुकाम (विश्राम) और है।" उसी समय उन्होने सथारा स्वीकार कर लिया। श्रावकजी जब अन्दर आये तो वे न बोले, उसके पहले ही आचार्य देव ने फरमा दिया—

"पुण्यात्मन् ! आप मुझे सावधान करने का शुभ सकल्प लेकर आये हो पर वह कार्य मैंने कर लिया है, अर्थात्—जीवन पर्यंत के लिए मैंने सथारा स्वीकार कर लिया है।"

सुज्ञ वृन्द इस मार्मिक प्रसग से जान सकते है कि—उस जमाने मे वे आत्माएँ कितनी निर्मलमना होती थी ?

इस प्रकार आचार्य देव श्री दौलतराम जी महाराज काफी वर्षों तक शुद्ध सयमी जीवन के माध्यम से चतुर्विध सघ की खूब अभिवृद्धि करते हुए सात दिन के सथारे सहित स० १८६० पौष शुक्ला ६ रविवार के दिन महा यात्रा पर चल पडे।

आचार्य श्री लालचन्द जी महाराज

जन्म—आतडी (अतरडी) ग्राम मे १८ वी सदी मे
दीक्षा गुरु—आचार्य श्री दौलतराम जी महाराज
स्वर्गवास—१८ वी सदी के अन्तिम वर्षों मे

आपका जन्म अठारहवी सदी मे बूदी राज्य के निकट "अन्तरडो" गाँव मे हुआ। आप सोनी जाति के चमकते नक्षत्र थे। बचपन से चित्रकला से आपको ज्यादा लगाव था। धीरे-धीरे अभ्यास करते रहने से इस कला मे आप बडे ही निष्णात बन गये। उस सदी मे आस-पास के सभी लोग आपकी चित्रकला से अत्यधिक प्रभावित थे। जहाँ भी चित्र बनवाने का काम पडता तो लोग आपको ही बुलाते।

एक बार अन्तरडी के ठाकुर साहब (छोटे गाँव के मालिक) ने अपने भवन मे रामायण सम्बन्धित चित्र बनवाने के लिये आपको बुलाया। तदनुसार रग-रोगन आदि सभी सामग्री लेकर आप वहाँ पहुँचे। अपनी मेधा शक्ति से जितने अच्छे चित्र बन सकते थे, बनाये। चित्र इतने चमकीले तथा

आकर्षक बने कि उन्हे दर्शक देखता ही रहे पर थके नही। कुछ कार्य अधूरा था इसीलिये समय हो जाने से ऐसा ही छोडकर चले गये। दूसरे दिन पुन आकर देखा तो घबरा गये, उनकी आँखें खुली की खुली हो रह गई। रोम-रोम काँप गया। सोचने लगे—

"यदि वस्त्र ढक कर गया होता तो बेचारी सैकडो-हजारो मक्खियाँ अपने प्राण नही खोती। मेरी छोटी-सी भूल का यह भयकर परिणाम बना जो ढेर सारे जीवो के प्राण चले गये। ऐसे जघन्य कृत्य न जाने पहले कितनी वार हुए होगे ? गौर से देखने पर मुझे आज पता चला। हे भगवान् ! आज तक कितने निरपराध जीवो की हत्या का पाप मेरे सिर पर पडा है ? हाय ! अब इन पाप कृत्यो से मुक्ति लेना ही मेरे लिये उचित है, यही अपराध का प्रायश्चित्त होगा।"

"आत्म-कल्याण की राह को आत्मसात् करने के लिये धर्मगुरु का सान्निध्य अत्यन्त आवश्यक है।" जब शुभ विचार बनता है तब शुभ आचार-निर्माण का योग भी मिल जाता है। आपश्री को उस समय धर्माचार्य श्रीमद् दौलतराम जी महाराज का समागम—प्रवचन-श्रवण का लाभ मिला। बस, उन्ही के पावन चरणो मे उत्तमोत्तम भावो से जैन दीक्षा स्वीकार कर ली।

आचार्य देव की सविनय पर्युपासना करते हुए आपने आगमिक ज्ञान गूढ तत्व प्राप्त किया। धीरे-धीरे विनय-विवेक तथा विज्ञान त्रिधारा के आगार मुनि श्री लालजी महाराज हो गये। आपको सम्यक् क्रिया तथा ज्ञान पर अधिक रुचि थी तथा उसी के अनुरूप चलने का प्रयत्न करते थे तभी तो चतुर्विध सघ ने आपकी साधनामय शासन पद्धति से प्रसन्न हो आपश्री को आचार्य पद पर स्थापित किया।

आपकी उपस्थिति मे कोटा सम्प्रदाय मे २७ (सत्ताविस) प० महान ज्ञानी मुनि एव साधु-साध्वियो की सख्या २७५ तक पहुँच चुकी थी। इस प्रकार कोटा सम्प्रदाय के विस्तार मे आपश्री का श्लाघनीय योगदान रहा है।

पूज्य प्रवर श्री गोविन्दराम जी महाराज

क्रियानिष्ठ आचार्य प्रवर श्री लालचन्द जी महाराज के स्वर्गवास होने के पश्चात् चतुर्विध सघ ने ज्ञान-क्रियानिष्ठ तप पूत पूज्य श्री गोविन्द-राम जी महाराज को सघाचार्य के रूप मे प्रतिष्ठित करके वीर शासन की शोभा मे अभिवृद्धि की। आपके जीवन सम्बन्धित अधिक जानकारी अज्ञात है। फिर भी आपके शासन-काल मे जिनधर्म की अधिक प्रभावना फैली। वि० स० १९०२ मे कोटा शहर मे आपने पार्थिव देह का परित्याग किया।

पूज्य प्रवर श्री फतहचन्द जी महाराज (फत्तेचन्द जी महाराज)

कोटा के निकट टोक नगर मे आपका जन्म हुआ था। आप क्षत्रिय परिवार के थे। जैन श्रमण का आत्म-धर्म से ओत-प्रोत सन्देश को सुनकर आपको ससारी भावो से विरक्ति आ गई। आपने जैन दीक्षा लेना स्वीकार कर लिया तब जैनेतर लोगो ने आपको दीक्षा नही लेने के लिये वहुत समझाया किन्तु आप अपने शुभ सकल्प पर दृढ रहे। अन्तत आपने जैन श्रमण परम्परा की मुनि दीक्षा ले ली।

भगवान् महावीर के सम्यक् पथ का अनुगमन करते हुए रत्नत्रय की अभिवृद्धि मे दृढयोद्धा की भाँति जुट गये। एक दिन वह भी आया जब आप सघ के नायक (आचार्य) के रूप मे उदित हुए। धर्म शासन की बागडोर अच्छी तरह से सँभाली। वि० स० १९११ मे कोटा के रामपुरा बाजार मे आपका स्वर्गवास हुआ।

पूज्य श्री ज्ञानचन्द जी महाराज

"यथानाम तथागुण।" के अनुसार जैसा आपका नाम था वैसे ही आपश्री ज्ञान-गुणानुरूप थे। दीक्षित होने के पश्चात् आपश्री ने अपने गुरुदेव के सन्निकट रहकर अच्छा ज्ञान खजाना एकत्रित किया।

आपश्री के विचरण काल मे भी धर्म प्रभावना आशातीत रूप मे फैली। आपश्री की जीवनी अज्ञात ही रही। वि० स० १९२६ मे राणापुर मे सथारे सहित आपश्री ने स्वर्गवास प्राप्त किया।

आचार्य प्रवर श्री छगनलाल जी महाराज

स्थानकवासी परम्परा मे कोटा सम्प्रदाय का भी गौरवशाली स्थान रहा है। जैन समाज मे इस परम्परा की विशिष्ट ख्याति रही है। इस मुनि परम्परा मे बडे-बडे विद्वान सत-तपस्वी हुए है। पूज्य श्री छगनलाल जी महाराज इसी परम्परा के महान् प्रतापी आचार्य हुए है।

आपश्री का जन्म बूँदी से लगभग १६ माईल दूर 'राणीपुर' गाँव मे हुआ था। इस नगर मे जैन, पोरवाल, बघेरवाल, सरावगी, आदि जिन-धर्मियो के वहुत से घर थे। सभी स्थानकवासी परम्परा को मानने वाले थे। आपके अर्थात् छगनलाल जी के पिता का नाम माणकचन्द जी तथा माता का नाम मानाबाई था। आपश्री के जन्म सवत् के बारे मे प्राचीन कविता से प्रमाण मिलता है, वह इस प्रकार है—

ग्यारे वर्ष हु की वय ज्ञान उतपत भयो,
तात-मात हु से आज्ञा पाय सुख साज की।

आकर्षक बने कि उन्हे दर्शक देखता ही रहे पर थके नही। कुछ कार्य अधूरा था इसीलिये समय हो जाने से ऐसा ही छोडकर चले गये। दूसरे दिन पुन आकर देखा तो घबरा गये, उनकी आँखें खुली की खुली हो रह गई। रोम-रोम कॉप गया। सोचने लगे—

"यदि वस्त्र ढक कर गया होता तो बेचारी सैकडो-हजारो मक्खियाँ अपने प्राण नही खोती। मेरी छोटी-सी भूल का यह भयकर परिणाम बना जो ढेर सारे जीवो के प्राण चले गये। ऐसे जघन्य कृत्य न जाने पहले कितनी बार हुए होगे ? गौर से देखने पर मुझे आज पता चला। हे भगवान् ! आज तक कितने निरपराध जीवो की हत्या का पाप मेरे सिर पर पडा है ? हाय ! अब इन पाप कृत्यो से मुक्ति लेना ही मेरे लिये उचित है, यही अपराध का प्रायश्चित्त होगा।"

"आत्म-कल्याण की राह को आत्मसात् करने के लिये धर्मगुरु का सान्निध्य अत्यन्त आवश्यक है।" जब शुभ विचार बनता है तब शुभ आचार-निर्माण का योग भी मिल जाता है। आपश्री को उस समय धर्माचार्य श्रीमद् दौलतराम जी महाराज का समागम—प्रवचन-श्रवण का लाभ मिला। बस, उन्ही के पावन चरणो मे उत्तमोत्तम भावो से जैन दीक्षा स्वीकार कर ली।

आचार्य देव की सविनय पर्युपासना करते हुए आपने आगमिक ज्ञान गूढ तत्व प्राप्त किया। धीरे-धीरे विनय-विवेक तथा विज्ञान त्रिधारा के आगार मुनि श्री लालजी महाराज हो गये। आपको सम्यक् क्रिया तथा ज्ञान पर अधिक रुचि थी तथा उसी के अनुरूप चलने का प्रयत्न करते थे तभी तो चतुर्विध सघ ने आपकी साधनामय शासन पद्धति से प्रसन्न हो आपश्री को आचार्य पद पर स्थापित किया।

आपकी उपस्थिति मे कोटा सम्प्रदाय मे २७ (सत्ताविस) प० महान ज्ञानी मुनि एव साधु-साध्वियो की सख्या २७५ तक पहुँच चुकी थी। इस प्रकार कोटा सम्प्रदाय के विस्तार मे आपश्री का श्लाघनीय योगदान रहा है।

पूज्य प्रवर श्री गोविन्दराम जी महाराज

क्रियानिष्ठ आचार्य प्रवर श्री लालचन्द जी महाराज के स्वर्गवास होने के पश्चात् चतुर्विध सघ ने ज्ञान-क्रियानिष्ठ तप पूत पूज्य श्री गोविन्द-राम जी महाराज को सघाचार्य के रूप मे प्रतिष्ठित करके वीर शासन की शोभा मे अभिवृद्धि की। आपके जीवन सम्बन्धित अधिक जानकारी अज्ञात है। फिर भी आपके शासन-काल मे जिनधर्म की अधिक प्रभावना फैली। वि० स० १९०२ मे कोटा शहर मे आपने पार्थिव देह का परित्याग किया।

पूज्य प्रवर श्री फतहचन्द जी महाराज (फत्तेचन्द जी महाराज)

कोटा के निकट टोक नगर मे आपका जन्म हुआ था। आप क्षत्रिय परिवार के थे। जैन श्रमण का आत्म-धर्म से ओत-प्रोत सन्देश को सुनकर आपको ससारी भावो से विरक्ति आ गई। आपने जैन दीक्षा लेना स्वीकार कर लिया तब जैनेतर लोगो ने आपको दीक्षा नही लेने के लिये बहुत समझाया किन्तु आप अपने शुभ सकल्प पर दृढ रहे। अन्तत आपने जैन श्रमण परम्परा की मुनि दीक्षा ले ली।

भगवान् महावीर के सम्यक् पथ का अनुगमन करते हुए रत्नत्रय की अभिवृद्धि मे दृढयोद्धा की भाँति जुट गये। एक दिन वह भी आया जब आप सघ के नायक (आचार्य) के रूप मे उदित हुए। धर्म शासन की बागडोर अच्छी तरह से सँभाली। वि० स० १९११ मे कोटा के रामपुरा बाजार मे आपका स्वर्गवास हुआ।

पूज्य श्री ज्ञानचन्द जी महाराज

"यथानाम तथागुण।" के अनुसार जैसा आपका नाम था वैसे ही आपश्री ज्ञान-गुणानुरूप थे। दीक्षित होने के पश्चात् आपश्री ने अपने गुरुदेव के सन्निकट रहकर अच्छा ज्ञान खजाना एकत्रित किया।

आपश्री के विचरण काल मे भी धर्म प्रभावना आशातीत रूप मे फैली। आपश्री की जीवनी अज्ञात ही रही। वि० स० १९२६ मे राणापुर मे सथारे सहित आपश्री ने स्वर्गवास प्राप्त किया।

आचार्य प्रवर श्री छगनलाल जी महाराज

स्थानकवासी परम्परा मे कोटा सम्प्रदाय का भी गौरवशाली स्थान रहा है। जैन समाज मे इस परम्परा की विशिष्ट ख्याति रही है। इस मुनि परम्परा मे बडे-बडे विद्वान सत-तपस्वी हुए है। पूज्य श्री छगनलाल जी महाराज इसी परम्परा के महान् प्रतापी आचार्य हुए है।

आपश्री का जन्म बूँदी से लगभग १६ माईल दूर 'राणीपुर' गाँव मे हुआ था। इस नगर मे जैन, पोरवाल, बघेरवाल, सरावगी, आदि जिन-धर्मियो के बहुत से घर थे। सभी स्थानकवासी परम्परा को मानने वाले थे। आपके अर्थात् छगनलाल जी के पिता का नाम माणकचन्द जी तथा माता का नाम मानाबाई था। आपश्री के जन्म सवत् के बारे मे प्राचीन कविता से प्रमाण मिलता है, वह इस प्रकार है—

ग्यारे वर्ष हु की वय ज्ञान उतपत भयो,
तात-मात हु से आज्ञा पाय सुख साज की।

त्याग भव सागर पर्याय वस कोटे बीच,
आज्ञा जिम धार शिव पथ जिनराज की ॥
उन्नीसौ अग्यारे सुद फाग पचमी के दिन,
बटी है बधाई वाग चरित समाज की।
बालक स्वरूप सब जगत् सराह करे,
छाजे है छबीली छवो 'छगन' मुनिराज की ॥

इससे स्पष्टत पता चलता है कि आपश्री ने स० १९११ मे सम्यक् बोध प्राप्त कर मुनिव्रत स्वीकार किया। आपश्री का दीक्षा दिन कविता के अनुसार फाल्गुन शुक्ला ५ प्रगट होता है। कही ऐसा भी प्रमाण मिला कि आपश्री के एक भाई और थे जिनका नाम "मगनलाल" था। उन्होने भी आपश्री के साथ जैनेन्द्री दीक्षा स्वीकार की। आपश्री की दीक्षा मे परिवार की ओर से काफी विघ्नो के बादल मडराये किन्तु आपके दृढ सकल्प के सामने अन्तत उन्हे नतमस्तक होना पडा। दोनो भाई मुनि बनकर ज्ञान-ध्यान की सम्यक् साधना-आराधना मे लोभी वणिक् की भाँति जुड गये। गुरु कृपा से अल्प वर्षों मे ही आशातीत अध्ययन कर लिया, जैनागम वाङ्मय के ठोस अनुभवी बनकर अद्वितीय प्रभावना मे आपश्री ने योगदान दिया।

हाडोती तथा खेराड प्रान्त मे ही नही अन्य क्षेत्रो नगरो मे आपश्री की ज्ञानमय महिमा फैल गई। इन क्षेत्रो के ओसवाल, पोरवाल, बघेरवाल, अग्रवाल, माहेश्वरी तथा इतर जनता की जिह्वा पर श्री छगनमुनि मगन-मुनि छा गये तब चतुर्विध सघ ने ज्येष्ठ मुनि श्री छगनलाल जी महाराज को आचार्य पद पर विराजित किया।

आपश्री केवल हाडोती प्रान्त मे ही नही रहे, राजस्थान, मध्यप्रदेश की भूमि को पावन करते हुए एकदा महाराष्ट्र प्रान्त मे आपश्री (आचार्य देव श्री छगनलाल जी महाराज) का पदार्पण हुआ। वहाँ ऋषि सम्प्रदाय के महान प्रतापी आचार्य कवि कुलभूषण श्री तिलोक ऋषि जी महाराज से स्नेह मिलन हुआ जो बडा ही ऐतिहासिक रहा। पारस्परिक तत्त्व चर्चा पर भी काफी विचार-विमर्श हुआ जो अपने आप मे अद्वितीय था। उन दिनो महाराष्ट्र मे धर्म प्रचार करना भगवान महावीर के अहिंसामूलक सिद्धान्तो का प्रसार करना बडा कठिन कार्य था। कदम-कदम पर परीषह-उपसर्गों की भरमार थी, एक प्रकार की बाढ थी किन्तु इन दोनो महापूज्यवरो ने दृढता-पूर्वक परीषहो से नही घबराते हुए धर्म प्रचार किया था।

कहा जाता है कि बम्बई जैसे क्षेत्र मे उस काल मे धर्म की गगा बहाने वाले आचार्य श्रीमद् छगनलाल जी महाराज थे। जिन्होने वि० स०

१९४८ मे बम्बई मे वर्षावास सम्पन्न किया था। बम्बई जैसे क्षेत्र को सत-मुनिराजो के लिए सुगम बनाकर आपश्री ने महान् उपकार किया।

आपश्री की विद्वत्ता तथा वक्तृत्व शैली बडी ही विलक्षण थी। एक ही बात को हेतु-न्याय-दृष्टान्त, आगमिक तथ्य द्वारा इतना स्पष्ट करते कि—सुनने वाला अल्प समय मे ही अच्छी तरह से बात (वक्तव्य) को समझ जाता। आपके शिष्य परिवार मे प्रमुख दो सतो का नाम आता है—घोर तपस्वी श्री देवीलाल जो महाराज जो बडे उग्र तपस्वी थे। आत्मार्थी थे। छह माह तक उपवास की लम्बी तपाराधना जिन्होने की थी।

एक स्थान पर ऐसा भी पढने को मिला कि "पूज्य श्री धर्मप्राण धर्मदास जी महाराज के सम्प्रदाय के स्व० महाराष्ट्र मत्री श्री किशनलाल जी महाराज को दीक्षा पाठ आपश्री ने ही दिया है।"

आपश्री (अर्थात् आचार्य प्रवर महान प्रभावी चमत्कारी परम प्रतापी श्रद्धेय श्री छगनलाल जी महाराज) का वि० स० १९५४ मे अलोद मे सथारा, आलोचना सहित स्वर्गवास हुआ।

पूज्य श्री रोडमल जी महाराज

आपश्री उग्र तपस्वी, साथ ही उग्र विहारी भी थे। साधक जीवन आभ्यन्तर तथा बाह्य दोनो तपाराधना मे आपश्री सतत भाग लेते रहे, तपाराधना-साधना मे आपको अनुपम आत्म तुष्टि की अनुभूति होती थी। कभी-कभी आपश्री कठिन से कठिन अभिग्रह भी धारण कर लिया करते थे। पूज्य प्रवर श्री छगनलाल जी महाराज के पश्चात् साघिक स्थिति को ठीक तरह से बनाये रखने का सारा कार्यभार आपश्री ने सभाला। साध्वाचार को सम्यक् परिपालना स्वय उत्तमोत्तम भावो से करना तथा अपनी आज्ञा मे विचरण करने वाले साधु-साध्वियो को उसी पथ को ओर बढाना आपश्री का कार्यक्षेत्र था।

आपश्री प्रकृति के बडे सरल, स्नेहिल-स्वभावी थे। अन्तिम समय मे ४५ दिन का सथारा करके आलोचना-क्षमापना सहित आपश्री ने अपना देह त्याग किया।

तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी महाराज

जन्म सवत्—१९२४ ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी बिलाडा (राज०)
दीक्षा सवत्—१९४५ पोष कृष्णा ५ गुरुवार
दीक्षा गुरु —तपस्वीराज श्री रोडमल जी महाराज
स्वर्गवास —वि० स० १९९७ चिचवड (महा०) ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या

भारत देश मे अनेको प्रातो मे धर्मनिष्ठ छोटे-बडे नगर है, जहाँ पावन जिनधर्मानुरागी आत्माएँ निवास करती है। उसी प्रकार राजस्थान प्रात के जोधपुर (जिले) के अन्तर्गत "विलाडा" नामक नगर है। जहाँ धर्मप्रेमी अनेक गुण सम्पन्न सुश्रावक श्रीमान् भेरुदास जी बरमेचा अपनी धर्मपत्नी सौ० धर्मशीला 'कुन्दनबाई' के साथ दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर रहे थे। बरमेचा परिवार सम्पत्तिशाली तो था ही साथ ही सुगुरु की सगति करने वाला था। उनके घर मे वि० स० १९२४ ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी के दिन अमूल्य पुत्र रत्न सुसतति का जन्म हुआ।

सुसतान वही होती है जो आगे चलकर अपने कुल के गौरव को तो बढाता ही है साथ ही समाज, जाति, राष्ट्र तक को अपने कुशल आचार-विचार-व्यवहार रूप सुवास से सुरभित करता है। पुत्र जन्म से बरमेचा परिवार मे अपार आनन्द तथा प्रेम भरा वातावरण छा गया जिससे सभी लोग बालक को प्रेम (स्नेह) से उठाने लगे, अपने हाथो मे लेने लगे इसीलिये पुत्र का नाम "प्रेमराज" रखा।

कुछ वर्षों तक आपकी माता का ममतामयी प्यार भरा वरदहस्त आप पर रहा किन्तु जल्दी ही आपकी पूज्या माता का वियोग हो गया। आपके पिता श्री का दिल अत्यन्त दु खी हुआ, अन्तत आपके पिता आपको लेकर राजस्थान बिलाडा से दक्षिण प्रात के पूना शहर के समीप "फूलगाँव" मे चले आये। यहाँ आने पर भी विरह दूर नही हुआ, एक दिन पिताजी भी आपको एकाकी छोडकर महायात्रा पर चल पडे। हृदयभेदी सकट भी आपने सहन किये। "महान् वही होता है जो आये सकटो का हसते हुए सामना करता है पर कभी घबराता नही।" वही बात हमारे प्रेमराज के जीवन मे थी।

"व्यापार-व्यवसाय मे एक से दो भले।" इसी उक्ति के अनुसार आप अर्थात् श्री प्रेमराज जी पूना आये, यहाँ आपको "श्रीमान् धर्मप्रेमी तेजमल जी मूलचन्द जो" बाम्बोरी वालो का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ।

एक बार आपश्री व्यापार कार्यवशात् अहमद नगर गये, धार्मिक प्रवृत्ति तो आपकी प्रारम्भ से ही थी आपको पता लगा कि—"यहाँ ज्ञान सिन्धु छ काया रक्षक, महात्यागी श्रीमज्जैनाचार्य छगनलाल जी महाराज विराजमान हैं।" आप वहाँ पहुँच गये। आचार्य देव का सहज ही आपको प्रवचन सुनने को मिल गया। वैराग्योत्पादक सदेश से आपकी आत्मा जागृत हो गई, अर्थात् आपकी भावना सयम लेने की हो गई। बस, फिर क्या था ? अपने काका की आज्ञा लेकर दीक्षा की तैयारी मे लग गये।

वि० स० १९४९ की पोष कृष्णा पचमी गुरुवार को अहमदनगर मे आपश्री ने दीक्षा स्वीकार की। आपश्री के दीक्षादाता रहे आचार्य श्री छगन लाल जी महाराज और दीक्षा गुरु तपस्वीराज श्री रोडमलजी महाराज।

आपश्री ने अपने गुरुदेव के निकट रहकर विनयपूर्वक तलस्पर्शी आगम ज्ञान प्राप्त किया। आपकी रुचि ज्ञानाध्ययन तथा तप पर विशेष रूप से थी। जैन समाज के बालक-बालिकाओ को बचपन से ही धार्मिक ज्ञान मिले, इसकी आपश्री ने भरसक प्रेरणा दी। उसी का प्रमाण है चिचवड स्थित "श्री फतेचन्द जैन विद्यालय।" कोटा सम्प्रदाय के अलौकिक सिद्धियो के भण्डार जैनाचार्य श्रीमद् फतेचन्द जी महाराज का विमल नाम जिससे जुडा हुआ है।

आपश्री शास्त्रज्ञानी, प्रवचनकार के साथ उग्र तपस्वी भी थे। २१-३१-४१-४५-५२-५३-६७ इस प्रकार लम्बी-लम्बी उपवास तपाराधना से आपश्री ने अपने कर्म ईंधन को भस्मीभूत किया है। आपश्री तपस्या, लम्बा-लम्बा विहार आदि सब कुछ करते हुए भी शयन नही करते थे, अर्थात् निद्रा लेनी होती तो बैठे-बैठे [ही लेते थे। स्वाध्याय, चितन, मनन, प्रवचन ही आपका आध्यात्मिक भोजन था। आपश्री को विहार स्थली मुख्यत राज-स्थान, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र आदि प्रात रहे है।

आपश्री ने वि० स० १९९६ मे चिंचवड (महा०) मे वर्षावास सानन्द क्षणो मे व्यतीत किया, तत्पश्चात् स० १९९७ के ज्येष्ठ मास की अमावस्या की रात्रि मे सथारा सहित शास्त्र-चिंतन करते-करते पार्थिव देह का परित्याग किया।

महान् तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी महाराज
की शिष्य परम्परा
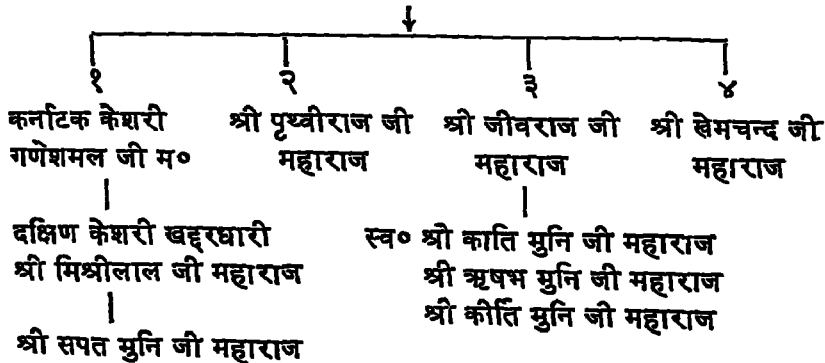
स्थविर पद विभूषित श्री जीवाराज जी महाराज

महाराष्ट्र प्रान्त के पूना (जिला) के अन्तर्गत छोटे से "नायगाँव" नामक गाँव मे आपश्री को जन्म लेने का सौभाग्य मिला। अर्थात् नायगाँव मे जन्म लेकर आपने उसे ख्याति सम्पन्न बना दिया। आपके पिता धर्मप्रेमी, श्रमण भक्त श्रीमान् प्रेमराज जी कॉकलिया तथा मातुश्री धर्मशीला सौ० चम्पाबाई थी। आपका जन्म वि० स० १९७१ मे हुआ।

काकरिया परिवार के जीवन मे आनन्द रस छा गया। तब सभी ने आपका 'जीवराज' नाम रखा। बचपन मे चेचक की बीमारी ने आपकी एक आँख ले ली। इस भयकर रोग से ग्रसित जरूर हुए पर पुण्य (आयुष्य कर्म) की प्राबल्यता थी, जिनशासन की महान् प्रभावना करने वाले थे इसीलिये आप चेचक से बच गये। धीरे-धीरे माता-पिता के सुसस्कार तथा पूर्व धर्म-करणी के महाप्रभाव से उत्तम सस्कारी बनते गये। भौतिक ज्ञान के लिये स्कूल भी गये। "विद्या के साथ विनय तथा विनय के साथ विद्या।" दोनो का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है।

वि० स० १९८४ मे प्रेममूर्ति, मधुर वक्ता, तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी महाराज का चातुर्मास 'चिंचवड' नगर मे था, उस समय आपश्री के साथ उग्र तपस्वी श्री देवीलाल जी महाराज भी थे।

प्रेमराज जी काकरिया अपने पुत्र जीवराज को साथ मे लेकर चिंचवड दर्शनार्थ आये। तपस्वीराज का प्रेरक प्रवचन सुनकर जीवराज जी को वैराग्य उत्पन्न हो गया। पिता श्री प्रेमराज जी भी कहाँ पीछे रहने वाले थे, वे भी दीक्षा के लिये तैयार हो गये। इधर 'धनगरजवले' गाँव के रहने वाले श्रीमान् प्रेमराज जी सचेती भी दीक्षा के लिये तैयार हो गये। इस प्रकार तीन आत्माएँ सयम राह पर चलने के लिये उत्कंठित हो गई। इनके दीक्षा लेने के भाव है, यह जानकर चिंचवड के श्री सघ ने उत्सुक भावो से गुरुदेव श्री प्रेमराज जी महाराज से विनति की कि—"दीक्षा करने का शुभ लाभ हमे दिया जाय।"

हुआ वैसा ही वि० स० १९८४ के मार्गशीर्ष पूर्णिमा के दिन चिंचवड नगर मे तीनो मुमुक्षुओ (नायगाँव के प्रेमराज जी कार्कलिया तथा उनके पुत्र जीवराज जी, तृतीय प्रेमराज जी सचेती 'धनगरजवले' वाले) की बडी धूम-धाम से शुभ मूहूर्त मे दीक्षा विधि सम्पन्न हुई। आप तीनो की दीक्षा के समय गुरुदेव श्री प्रेमराज जी महाराज तपस्वीराज श्री देवीलाल जी महाराज एव कर्नाटक केशरी खद्दरधारी श्री गणेशमल जी महाराज तीनो ही महान् सत रत्न उपस्थित थे।

प्रेमराज जी काकलिया का नाम 'पृथ्वीराज जी महाराज' उनके सुपुत्र का 'जीवराज जी महाराज', प्रेमराज जी सचेती का नाम 'खेमचन्द जी महाराज' रखा गया। तीनो ही महान् तपस्वीराज श्री प्रेमराज जी महाराज के शिष्य बने। इस प्रकार चार गुरु भाइयो की सुन्दर जोडी हो गई। श्री जीवराज जी महाराज ने अपने गुरुदेव से समता धर्म का पाठ पढा, इतना ही नही, उसे वे अपने जीवन के प्रत्येक क्षणो मे आत्म-सात कर रहे है। आपश्री बडे ही सरल परिणामी, मिलनसार, आत्मगुणग्राही, प्रसन्नचेता, आभ्यतर-तपी, चिंतन-मनन मे सदैव सलग्न रहने वाले है।

आपके शिष्य स्व० श्री कान्ति मुनि जी महाराज है जिन्होने वृद्धपन मे दीक्षा लेकर अपना महामार्ग ढूँढा।

वर्तमान मे आपकी सेवा मे सलग्न है श्री ऋषभ मुनि जी महाराज। आप जालना (महा०) के है। आपकी बचपन से ही धर्म मे लगन रही है। गृहस्थावास मे ही आप धर्म-प्रचारार्थ व्याख्यान आदि के लिये समय-समय पर जाया करते थे। आपने अपने भरे-पूरे परिवार अर्थात् धर्मपत्नी, पुत्र-पुत्री, धन-सम्पत्ति को छोडकर जैनेन्द्री दीक्षा स्वीकार की है।

आपकी प्रवचन शैली ओजस्वी-प्रेरणास्पद तथा गायनात्मक है जो सहज ही श्रोताओ को मत्रमुग्ध कर देती है। आप केवल प्रवचनकार ही नही, अच्छे कवि भी हैं। आपकी अनेको प्रेरणास्पद भजनो की पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। आशा है और भी प्रकाशित होती रहेगी जो जन-मानस मे नव चेतना का सचार करने मे सहयोगी सिद्ध होगी। आपश्री समाज के होनहार सत हैं।

दक्षिणकेशरी श्री मिश्रीलाल जी महाराज

बैगलोर निवासी श्रीमान् सुश्रावक हीराचन्द जी छाजेड का घर उस दिन अत्यन्त प्रसन्नता से आप्लावित हो गया, जिस दिन आपकी धर्मपत्नी सौ० धर्मशीला श्रीमती चुन्नीबाई ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक अपनी पूर्व पुण्याई के कारण बचपन से मधुर स्वभाव। के साथ दृढ प्रतिज्ञ भी था। जो बात (हठ) पकड लेता उसे पूर्ण किये विना उसे चैन नही पडती तभी तो—"यथानाम तथागुण" के अनुसार "मिश्रीलाल" नाम रखा गया। उन्हे धार्मिक सस्कार अपने माता-पिता से मिलते रहे, इसी कारण उनमे सहज ही धार्मिकता से प्रेम था, लगाव था। सन्तो के दर्शन और प्रवचन सुनना उन्हे बचपन से अच्छा लगता था, तभी तो कहा है—

जैसे होगे सघन विटप तो छाया भी वैसी होगी।
जैसे होगे मात-पिता तो सतति भी वैसी होगी॥

बस, इसी के अनुसार मिश्रीलाल जी के पूर्व जीवन की भूमिका उर्वरा थी, पूर्व के शुभ कर्मों के उदय के कारण तथा माता-पिता से मिलने वाले शुभ सस्कारो से हमारे मिश्रीलाल जी की प्रवृत्ति-प्रकृति आत्मिक-धार्मिक अनुष्ठानो से ओत-प्रोत थी।

जिसकी भावना आत्म-कल्याण की ओर लगने को तीव्रता से बढती है, उसे शुभ योग मिलता ही है। उन्ही दिनो कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, समक्ति धर्म प्रसारक, गुरु-गणेश, बावाजी श्री गणेशमल जी महाराज का शुभागमन ऐसा हुआ मानो चातक को स्वाति नक्षत्र का पानी मिला हो। कर्नाटक केशरी जी महाराज का सम्यक्‌धर्म से ओत-प्रोत वैराग्योत्पादक सदेश सुनकर श्री मिश्रीलाल जी को वैराग्य आ गया, वह भी कच्चा नही किरमची रग जैसा दृढ मजबूत। आपने अपने पिताश्री से दीक्षा की अनुमति चाही, वे दीक्षा दिलाना नही चाहते थे अत आपको खूब तपाया। अन्तत दृढ वैराग्य के सामने वे हार गये और हीराचन्द जी छाजेड आपके पिताजी ने आपको आज्ञा दे दी और दीक्षा भी बैंगलोर मे ही कर दी। आप तप पुरुष कर्नाटक केशरी जी महाराज के शिष्य बन गये।

कर्नाटक केशरी जी महाराज के प्रमुख तीन शिष्य बने—सर्वप्रथम महामुनि श्री खेमचन्द जी महाराज, सेवाभावी श्री अगरचन्द जी महाराज, तपस्वी श्री राजमल जी महाराज। तीनो का स्वर्गवास हो चुका है।

वर्तमान मे उग्र विहारी, घोर तपस्वी, दक्षिण केशरी, खद्दरधारी श्री मिश्रीलाल जी महाराज कर्नाटक केशरी जी महाराज के चतुर्थ शिष्य है। आप अपने शिष्य सेवाभावी श्री सम्पत मुनि जी के साथ धर्म प्रचार करने मे महाराष्ट्र मे लगे हुए है। शरीर अस्वस्थ होते हुए भी एकान्तर तप, उपवास, मौन, ध्यान-साधना आपश्री की गतिशील है। आपश्री बडे ही दृढ प्रतिज्ञ तथा सुदृढ मनोबली है।

ऐसे मुनिवरो के गुणानुवाद से हमे अपना जीवन बनाना चाहिये।

□

कोटा सम्प्रदाय की सतियाँ

'बीसाजी' मोटी सती, 'सूर्य कु वर' जी महान् ।
'गुलाब' सयम से सुवासित पाखण्ड भजन जान ।।

कोटा (सम्प्रदाय) परम्परा मे सबसे पहली महासती महान् चारित्र-वान श्री बीसाजी महाराज का नाम आता है, आपके बाद 'सूर्यकु वर जी' महासती का नाम प्राप्त होता है, किन्तु इतिहास अज्ञात है। आपश्री के पश्चा महासती श्री गुलाबकु वर जी का कुछ इतिहास मिलता है।

श्री गुलाबकु वर जी महाराज

आपश्री नासिक की निवासिनी थी, नासिक के नगरसेठ की धर्मपत्नी थी। एकदा श्री सूर्यकु वर जी महाराज अपनी शिष्या मडलो सहित नासिक पधारी, आपके वैराग्यमय सदेश से प्रभावित होकर, गुलाबबाई ने अपने पति से दीक्षा-आज्ञा चाही। वे बोले—"तुम क्या दीक्षा लोगी ? तुम्हारा शरीर कोमल हैं, सयम मे आये हुए कष्टो को सहन करना दुश्वार होगा।" तब गुलाब बाई ने कहा—"यदि आत्म-बल सुदृढ है तो कोई कार्य दुश्वार नही।" अपने सत्सकल्प पर वे डटी रही, अन्ततोगत्वा सेठजी ने इस शर्त पर आज्ञा दी कि—"छह महीने मे तुम्हे व्याख्यान शास्त्रीय ढग से देना होगा।" हुआ वैसा ही। आप महासती सूर्यकु वर जी की शिष्या बन गईं।

उस समय मे इस सम्प्रदाय मे छब्बोस महान् प० मुनिराज तथा सत्ताईसवी आपश्री पडिता थी। अन्त समय में आप कोटा मे १२ वर्ष स्थिरवास रही। उज्ज्वल भावो सहित वही आपने सथारा लिया। समाधि युक्त आपका स्वर्गवास हुआ।

महिमावती प्रर्वातनी श्री मानकु वर जी महाराज

आपने मध्यप्रदेश मे रामपुरा-मानपुरा के निकट 'सागरिया' गाँव मे जन्म लिया। आपके पिता धर्मप्रेमी श्रीमान् देवीलालजी एव माता सौ० धर्मशीला 'शोभादेवी' दोनो ही आपको पाकर फूले नही समाये। आपके दो भ्राता—दानमल जी तथा धन्नालाल जी थे। आपकी गोत्र सेठिया थी। ६ (नौ) वर्ष की लघु वय मे ही आपका विवाह बोलिया निवासी मलूकचन्द जो से हो गया था। दोनो का सयोग भी अल्प ही रहा, केवल चार महीने के पश्चात् ही आपके पति का स्वर्गवास हो गया।

बस, इसी के अनुसार मिश्रीलाल जी के पूर्व जीवन की भूमिका उर्वरा थी, पूर्व के शुभ कर्मों के उदय के कारण तथा माता-पिता से मिलने वाले शुभ सस्कारो से हमारे मिश्रीलाल जी की प्रवृत्ति-प्रकृति आत्मिक-धार्मिक अनुष्ठानो से ओत-प्रोत थी।

जिसकी भावना आत्म-कल्याण की ओर लगने को तीव्रता से बढती है, उसे शुभ योग मिलता ही है। उन्ही दिनो कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, समक्ति धर्म प्रसारक, गुरु-गणेश, बावाजी श्री गणेशमल जी महाराज का शुभागमन ऐसा हुआ मानो चातक को स्वाति नक्षत्र का पानी मिला हो। कर्नाटक केशरी जी महाराज का सम्यक्धर्म से ओत-प्रोत वैराग्योत्पादक सदेश सुनकर श्री मिश्रीलाल जी को वैराग्य आ गया, वह भी कच्चा नही किरमची रग जैसा दृढ मजबूत। आपने अपने पिताश्री से दीक्षा की अनुमति चाही, वे दीक्षा दिलाना नही चाहते थे अत आपको खूब तपाया। अन्तत दृढ वैराग्य के सामने वे हार गये और हीराचन्द जी छाजेड आपके पिताजी ने आपको आज्ञा दे दी और दीक्षा भी बेंगलोर मे ही कर दी। आप तप पुरुष कर्नाटक केशरी जी महाराज के शिष्य बन गये।

कर्नाटक केशरी जी महाराज के प्रमुख तीन शिष्य बने—सर्वप्रथम महामुनि श्री खेमचन्द जी महाराज, सेवाभावी श्री अगरचन्द जी महाराज, तपस्वी श्री राजमल जी महाराज। तीनो का स्वर्गवास हो चुका है।

वर्तमान मे उग्र विहारी, घोर तपस्वी, दक्षिण केशरी, खद्दरधारी श्री मिश्रीलाल जी महाराज कर्नाटक केशरी जी महाराज के चतुर्थ शिष्य हैं। आप अपने शिष्य सेवाभावी श्री सम्पत मुनि जी के साथ धर्म प्रचार करने मे महाराष्ट्र मे लगे हुए है। शरीर अस्वस्थ होते हुए भी एकान्तर तप, उपवास, मौन, ध्यान-साधना आपश्री की गतिशील है। आपश्री बडे ही दृढ प्रतिज्ञ तथा सुदृढ मनोबली हैं।

ऐसे मुनिवरो के गुणानुवाद से हमे अपना जीवन बनाना चाहिये।

□

कोटा सम्प्रदाय की सतियाँ

'बीसाजी' मोटी सती, 'सूर्य कु वर' जी महान् ।
'गुलाब' सयम से सुवासित पाखण्ड भजन जान ।।

कोटा (सम्प्रदाय) परम्परा मे सबसे पहली महासती महान् चारित्र-वान श्री बीसाजी महाराज का नाम आता है, आपके बाद 'सूर्यकु वर जी' महासती का नाम प्राप्त होता हैं, किन्तु इतिहास अज्ञात है। आपश्री के पश्चा महासती श्री गुलाबकु वर जी का कुछ इतिहास मिलता है।

श्री गुलाबकु वर जी महाराज

आपश्री नासिक की निवासिनी थी, नासिक के नगरसेठ की धर्मपत्नी थी। एकदा श्री सूर्यकु वर जी महाराज अपनी शिष्या मडली सहित नासिक पधारी, आपके वैराग्यमय सदेश से प्रभावित होकर, गुलाबबाई ने अपने पति से दीक्षा-आज्ञा चाही। वे बोले—"तुम क्या दोक्षा लोगी ? तुम्हारा शरीर कोमल है, सयम मे आये हुए कष्टो को सहन करना दुश्वार होगा।" तब गुलाब बाई ने कहा—"यदि आत्म-बल सुदृढ है तो कोई कार्य दुश्वार नही।" अपने सत्सकल्प पर वे डटी रही, अन्ततोगत्वा सेठजी ने इस शर्त पर आज्ञा दी कि—"छह महीने मे तुम्हे व्याख्यान शास्त्रीय ढग से देना होगा।" हुआ वैसा ही। आप महासती सूर्यकु वर जी की शिष्या बन गईं।

उस समय मे इस सम्प्रदाय मे छब्बीस महान् प० मुनिराज तथा सत्ताईसवी आपश्री पडिता थी। अन्त समय मे आप कोटा मे १३ वर्ष स्थिरवास रही। उज्ज्वल भावो सहित वही आपने सथारा लिया। समाधि युक्त आपका स्वर्गवास हुआ।

महिमावती प्रवर्तिनी श्री मानकु वर जी महाराज

आपने मध्यप्रदेश मे रामपुरा-मानपुरा के निकट 'सागरिया' गाँव मे जन्म लिया। आपके पिता धर्मप्रेमी श्रीमान् देवीलालजी एव माता सौ० धर्मशीला 'शोभादेवी' दोनो ही आपको पाकर फूले नही समाये। आपके दो भ्राता—दानमल जी तथा धन्नालाल जी थे। आपकी गोत्र सेठिया थी। ९ (नौ) वर्ष की लघु वय मे ही आपका विवाह बोलिया निवासी मलूकचन्द जो से हो गया था। दोनो का सयोग भी अल्प ही रहा, केवल चार महीने के पश्चात् ही आपके पति का स्वर्गवास हो गया।

लगभग १३-१४वें वर्ष मे आपको एक दिन रात्रि मे अपने सामने सिंह खड़ा है तथा वह यूँ बोल रहा है—"दीक्षा (सयम) ले लेना, घर मे मत रहना, नही तो मै तुझे नही छोडूँगा।" ऐसा स्वप्न दृष्टिगोचर हुआ। आपने अपनी सास से प्रार्थना की कि—"मुझे आज्ञा दे दो, मैं सयम लेना चाहती हूँ।" सास ने आपको दीक्षा की आज्ञा नही दी। कुछ महीनो के बाद आपकी सास भी चली गई।

इधर महान् पंडिता विदुषी साध्वीरत्ना प्रवर्तिनी श्री गुलाबकुंवर जी महाराज का शुभ योग मिला। आपने उनके पावन श्रीचरणो मे दीक्षा स्वीकार कर ली मन्दसौर के निकट नाहरगढ नामक गाँव मे। आपने दीक्षा लेने के बाद अल्प समय मे ही अपनी गुरुवर्या के निकट रहकर विनयपूर्वक अनेको आगमो का ज्ञान सम्पादन कर लिया।

आपकी योग्यता, व्यवहार कुशलता, विनयशीलता, विवेक विज्ञता को देख गुरुवर्या प्र० श्री गुलाब कुंवर जी महाराज ने कोटा सघ के समक्ष "प्रवर्तिनी" पद दे दिया। जब आपको प्रवर्तिनी पद मिला तब आपश्री को दीक्षा लिए केवल तीन वर्ष ही हुए थे।

धैर्य-गाम्भीर्य, क्षमा, शील गुणो से परिपूर्ण महासती प्र० श्री मानकुंवर जी महाराज की विहार स्थली मध्यप्रदेश, राजस्थान, खानदेश, विदर्भ, छत्तीसगढ प्रान्त रहे है। इन क्षेत्रो मे परिभ्रमण करके आपने जिन-शासन की बहुत प्रभावना बढाई है। आपकी सयम साधना के प्रभाव से प्रत्येक चातुर्मास मे केशर की वृष्टि होती है। यह कपोल-कल्पित बात नही है। सैकडो-हजारो लोगो ने इसे प्रत्यक्ष देखा है। लगभग १५ वर्षो तक आपश्री बुलढाणा नगर मे सकारण विराजित रही। बुलढाणा श्रीसघ ने आपकी महानता को देख 'विदर्भ-सिंहनी" पद से विभूषित किया। अभी आपश्री जालना (महा०) मे विराज रही है। आपकी प्रथम शिष्या श्री धूल-कुंवर जी महासती थी। आप बडी जबरदस्त तपस्विनी थी। एक-एक महीने का उपवास करती, उसमे भी सेवा का लक्ष्य रखती। आपने प्रौढावस्था मे दीक्षा ली थी। आपकी दीक्षा कोटा मे हुई थी। आपने बहुत वर्षों तक सयम-साधना का पालन किया। स० १९८४ मे सवाई माधोपुर मे ६ दिन के सथारे सहित स्वर्गवास प्राप्त किया। आपकी द्वितीय शिष्या श्री जडावकुंवर जी महाराज थी। आपका जन्म स० १९५५ फाल्गुन शुक्ला ११ को सवाई माधो-पुर (राज०) मे हुआ था।

लगभग २१ वर्ष की उम्र मे आपने अपने पितृगृह तथा पतिगृह दोनो को छोड दिया। छोडने का कारण कोई लडाई-झगडा नही, न कोई अन्य घर

बसाया। छोडने का कारण वैराग्य भाव था। महासती प्र० श्री मानकु वर जी महाराज के वैराग्यवर्धक उपदेश से जागृत हो उनकी शिष्या बन गई। आपकी प्रज्ञाशक्ति तीव्र थी। शास्त्रीय ज्ञान के साथ-साथ प्राकृत-सस्कृत-उर्दू-हिन्दी भाषा का भी आपने अच्छा अभ्यास किया।

आपका स्वर्गवास यवतमाल (जिला) के अन्तर्गत 'ढाणकी' गाँव मे सलेखना सथारा सहित स० २०२३ मे हुआ।

श्री धनकु वर जी महाराज

आप बारा नगर की निवासिनी हैं। लगभग १८ वर्ष की आयु मे मातृ एव ससुर पक्ष को छोडकर स० १९८० ज्येष्ठ शुक्ला ५ मगलवार के दिन कोटा नगर मे दीक्षा ली। आप बडे ही सरल, सेवाभावी प्रकृति के अक्षय कोष हैं। आप महासती श्री जडावकु वर महाराज की ससारी 'ननद' है।

पूज्या बा० ब्र० श्री वृद्धिकु वर जी महाराज

आपका जन्म वि० स० १९५८ की माह कृष्णा द्वितीया के दिन राजस्थान के टोक नगर मे हुआ था। आपके पिता श्रीमान् धर्मप्रेमी नाथूराम जी एव माता श्रीमती गट्टूबाई बम्ब थी। आपका विवाह एक धर्मवान् परिवार मे होने से आपका मन धर्मभावो मे लगा रहता था। कोटा सम्प्रदाय के महान् धर्माचार्य पूज्य श्रं। "श्रोमल जी महाराज" आपके ससारी पक्ष मे काकाजी लगते थे। आपने भी करीब २२ वर्ष की उम्र मे स० १९८४ मार्गशीर्ष कृष्णा पचमी मगलवार के दिन जैन भागवती दीक्षा स्वीकार की। आपको भी प्र० महासती जी श्री मानकु वर जी महाराज की शिष्या बनने का सुयोग प्राप्त हुआ। आपकी व्याख्यान शैली ओजस्वी एव शरीर तेजस्वी है। आप स्वभाव से बडी मृदु हैं। वर्तमान मे आप अपनी शिष्या समूह से नासिक (जिले) के अन्तर्गत "पीपल गाँव बसवन्त" मे विराजित हैं।

बा० ब्र० श्री पुष्पाकु वर जी महाराज

"यथानाम तथागुण" से परिपूर्ण श्री पुष्पाकु वर जी महाराज का जन्म बू दी रियासत के अन्तर्गत 'देई' नामक गाँव मे पोद्दार वश मे हुआ।

आपके पिता श्रीमान् हजारीमल तथा माता श्रीमती दाखाँबाई थे। लगभग १२ वर्ष की आयु मे महासती प्र० श्री मानकु वर जी महाराज का सदेश श्रवण कर कोटा नगर मे दीक्षा धारण की। हजारी पुष्प के समान कोमल स्वभावी द्राक्षा (दाख-किसमिस) के समान मृदु ही नही मधुर गुणो से युक्त महासती श्री पुष्पाकु वर जी महाराज अपनी गुरुवर्या की परिचर्या करती हुई शास्त्राभ्यास मे दत्तचित्त है।

अनेको भाषाओ की ज्ञाता, प्रवचनकार होते हुए भी निरभिमानता से युक्त अपनी गुरुवर्या की सेवा मे सलग्न है।

पू० श्री चाँदकु वर जी महाराज

आप घोटी (इगतपुरी) की निवासिनी थी, आपका जन्म ओसवाल वश मे हुआ था। पीचा परिवार मे आपकी शादी की गई थी। लगभग ३५ वर्ष की उम्र मे आपने प्रर्वत्तिनी महा० श्री मानकु वर जी महाराज के चरणो मे दीक्षा ली। आपका स्वर्गवास घोटी मे ही हुआ।

श्री कान्तीकु वर जी महाराज

आपका जन्म 'गीरनारा' गाँव मे काकरिया परिवार मे हुआ था। आपने प्रर्वतिनी महासती चिरायु स्थविरा श्री मानकु वर जी महाराज के चरणो मे कोपरगाँव मे दीक्षा ली थी। आपका स्वर्गवास अमलनेर (खानदेश) मे हुआ। आप पचम देवलोक मे इन्द्र के सेनापति के रूप मे उत्पन्न हुई। यह दृश्य आपने अपनी गुरुवर्या प्र० महासती श्री मानकु वर जी महाराज को दिखाया था।

श्री हीराकु वर जी महाराज

आपका जन्म वि० स० १९७८ मे राजस्थान के 'हरडई' गाँव मे श्रीमान तेजराज बोथरा के घर धर्मशीला सौ० मीराबाई की कुक्षि से हुआ, वह भी ज्येष्ठ शुक्ला २ को। आप आपने बोथरा परिवार की महान् हीराकणी के समान थी। अपने २५-२६ वर्ष उम्र मे दीक्षा स्वीकार की।

आप भी महासती श्री मानकु वर जी की शिष्या है। सस्कृत-प्राकृत आगम की अच्छी ज्ञाता तथा व्याख्यात्री है। आप अभी नासिक जिला के अन्तर्गत धर्म प्रचार कर रही है।

आपको खद्दरधारी गुरु गणेशमल जी महाराज की पावन सेवा का लगभग ९ वर्ष तक लाभ प्राप्त हुआ।

श्री सदाकु वर जी महाराज

आपका जन्म नासिक (जिला) के अन्तर्गत 'निफाड' गाँव मे हुआ। आपके पिता छोडीराम जी चोरडिया तथा माता सुन्दरबाई थी। आपका विवाह बसन्त पीपल गाँव निवासी बकटलाल जी गाग के साथ हुआ था।

आपकी दीक्षा वाघली (खानदेश) मे हुई। आपके दीक्षादाता प० श्री कल्याण ऋषिजी महाराज है। आप अपनी गुरुवर्या स्थविरा श्री वृद्धि कु वर जी महाराज की प्रथम शिष्या है। आप सेवाभावी, शास्त्रज्ञाता के साथ तपस्विनी भी हैं।

श्री एलमकुवर जी महाराज

आपका जन्म हैद्राबाद (आ० प्र०) मे हुआ। आपके पिता श्री नरसिंह जी रेड्डी तथा माता गोपीबाई थी। आपश्री प्र० महासती श्री मानकुवर जी महाराज के वैराग्यमय सदेश से प्रभावित हो लोणार धार मे स० १६६६ की कार्तिक शुक्ला ५ को जैनार्या बन गई।

आपश्री पडिता साध्वीरत्ना श्री जडावकुवर जी महाराज की शिष्या बनी। आपका शास्त्र ज्ञान बडा अच्छा था, व्याख्यान अति सरल-सरस था। आपका स्वर्गवास समाधि पूर्वक 'निजामाबाद' (आ० प्रदेश) मे हुआ।

धैर्यात्मा श्री धीरजकुंवर जी महाराज

आपका जन्म ननीहाल (लोणार-सेवली) मे हुआ। आपके पिता का नाम मुलतानमल जी तथा माता शृगारबाई थी। आपका विवाह 'धार लोणार' मे हुआ था। आपके पति श्रीमान श्रीचन्द जी वेदमूथा से करीबन ३८ वर्ष की उम्र मे आपने दीक्षा की आज्ञा प्राप्त की।

स० १६६६ मे आषाढ शुक्ला २ रविवार को बुलढाणा मे महासती प्र० श्री मानकुवर जी महाराज के चरणो मे दीक्षा स्वीकार की, आप शिष्या भी उन्ही की बनी। आपने अपनी पुत्री को भी दीक्षा दी। आप बडे ही सरल स्वभावी, व्यवहार कुशल, यथानाम तथागुण सम्पन्न, धैर्यता से युक्त, स्वाध्याय प्रेमी, शातमूर्ति हैं।

वर्तमान मे आप अपनी गुरु बहनो के साथ विदर्भ मे विचरण कर रही है। आपको शास्त्रीय ज्ञान तथा थोकडे आदि का अच्छा ज्ञान है।

प्रखरवक्ता श्री प्रभाकुवर जी महाराज

आप धैर्यशीला महासती श्री धीरजकुवर जी महाराज की सुपुत्री है। बचपन से ही आपको धार्मिक क्रिया कलापो से लगाव रहा है, तभी तो लगभग १४ वर्ष की आयु मे आपने दीक्षा ग्रहण की। आप प्र० म० श्री मान-कुवर जी महाराज की शिष्या बनी।

आपने अपनी गुरुवर्या के निकट रहकर सस्कृत-प्राकृत, अग्रेजी, उर्दू आदि भाषाओ का अच्छा ज्ञान सम्पादन किया। आपने प्रयाग की साहित्य-रत्न तथा पाथर्डी बोर्ड की आचार्य तक की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की है।

आप सती समाज मे जिनशासन की शुभ प्रभावना बढाने मे सलग्न है। आपकी वक्तृत्व शैली बडी ही ओजस्वी, सारगर्भित तथा स्पष्ट है। आप प्रवचनकार, लेखिका तथा कुशल सम्पादिका है। आपसे समाज को साहित्य क्षेत्र मे बहुत आशा है।

बा० ब्र० श्री रोशनकु वर जी महाराज

आपका जन्म पाढर कवडा (यवतमाल) मे हुआ। आपके पालक पिता श्री चादमल जी बोगावत एव माता लक्ष्मीबाई थी। आपने १५ वर्ष की उम्र मे पाढर कवडा मे वसन्त पचमी के दिन स० २००३ मे बडी घूमधाम से दीक्षा ली। आप व्याख्यानी स्थविरा श्री वृद्धिकु वर जी महाराज की शिष्य बनी। आप व्याख्यानी, सेवाभावी है। अपनी गुरुवर्या की सेवा मे सलग्न है। आपने कलकत्ता की न्यायतीर्थ प्रथमा की परीक्षा दी है।

श्री चम्पाकु वर जी महाराज

आपका जन्म मनमाड नगर मे स० १९६९ की वैशाख शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ था। आपके पिताजी का नाम खुशालचन्द जी बरडिया तथा माता का नाम हरकु वर बाई था। आपके दीक्षादाता तपोमूर्ति, महान् साधक श्री गणेशमल जी महाराज थे। आपकी दीक्षा वैशाख शुक्ला त्रयोदशी स० २०११ मे पूना शहर मे सम्पन्न हुई। आपश्री की भतीजी ने भी भागवती दीक्षा स्वीकार की है।

आप स्व० महासती जडावकु वर जी की शिष्या बनी। आप व्यवहार कुशल, सयम साधना मे रत तथा व्याख्यान देती हैं।

महासती श्री प्रमोदकु वर जी

आपका जन्म बुलढाणा जिला (बरार मे) हुआ। आपके पिता नथमल जी कावडिया तथा माता तीजाबाई थी। आपकी दीक्षा दुर्ग मे वि० स० २०१२ मृगसर शुक्ला ५ सोमवार को हुई। आपने पाथर्डी बोर्ड की आचार्य तक की परीक्षा सम्पन्न की।

आप सेवाभावी, मधुर गायन कला मे प्रवीण है।

महासती श्री जगत्कु वर जी

आपका जन्म वि० स० १९६९ मे वैशाख शुक्ला चतुर्दशी को हुआ। आपकी जन्मस्थली बार्शी है। आपके पिता किशनदास जी सोलकी तथा माता गोदीबाई थी। आपका विवाह सुराणा परिवार मे हुआ। आप अपने बेटे-पोते आदि भरे-पूरे परिवार को छोडकर स० २०१५ मे साध्वी बनी। आपकी दीक्षा नान्देड शहर मे हुई। दीक्षादाता कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज थे। आप महासती श्री जडावकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आपको शास्त्र स्वाध्याय ज्यादा अभीष्ट है।

श्री दिलीपकु वर जी महाराज

आपका जन्म राजस्थान के चूरू नामक गाँव मे हुआ। आपने लगभग

२० वर्ष की आयु मे वि० स० २०१५ की चैत्र शुक्ला पूर्णिमा सोमवार को चौथ का बरवाडा मे दीक्षा ग्रहण की। आप श्री वृद्धिकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आपका कठ मधुर है। आप व्याख्यान भी देती है वह भी सारगर्भित। आपने पाथर्डी की परीक्षा दी है।

श्री श्रेयासकु वर जी महाराज

आपका जन्म धुलिया (खानदेश) मे हुआ। आपके पिता अभयराजजी कुचेरिया तथा माता जोदीबाई थी। आपने ६० वर्ष की आयु मे स० २०१८ की चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन ढाणकी (यवतमाल) मे दीक्षा ली। आपके दीक्षादाता कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज थे। आप महासती श्री वृद्धिकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। लगभग १५-१६ वर्ष तक सयम का पालन किया। अन्तिम समय मे सलेखना सहित स्वर्गवास प्राप्त किया।

तपस्विनी श्री प्रेमकुंवर जी महाराज

आपका विवाह दुर्ग मे हुआ। आपके पिता खुशालचन्द जी साखला तथा माता तुलसीबाई थी। आपने अपना ससुराल पक्ष छाजेड परिवार तथा साखला दोनो को भरा-पूरा छोडकर लगभग तीस-पैंतीस वर्ष की आयु मे दीक्षा स्वीकार की। आपकी गुरुवर्या महासती श्री जडावकु वर जी महाराज थी। आपकी दीक्षा हिंगोली जिला परभणी मे बडे धूम-धाम से हुई।

बा० ब्र० श्री प्रकाशकु वर जी महाराज

आपका जन्म वि० स० २००२ मे पोष शुक्ला १ (एकम) को सेलू नगर (महा०) मे हुआ। आपके पिता पन्नालाल जी बोरा एव माता जतनबाई है। आपने १९ वर्ष की आयु मे स० २०२१ मे आश्विन शुक्ला १० गुरुवार के दिन परतूर नगर मे दीक्षा ग्रहण की।

आप प० रत्ना प्र० श्री मानकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आपकी ज्ञान-ध्यान-चिन्तन के प्रति विशेष रुचि रहती है। आपने वर्धा की राष्ट्र भाषा हिन्दी को रत्न तथा पाथर्डी बोर्ड की सि० आचार्य तक की परीक्षा उत्तीर्ण की है। आपकी व्याख्यान शैली बडी रोचक-प्रभावोत्पादक है।

श्री विनोदकु वर जी महाराज

आप गेलडा परिवार की सुपुत्री हैं। महासती श्री मानकु वर जी महाराज का धर्मोपदेश सुनकर तथा बहुत दान देकर लगभग ५५-५६ वर्ष की आयु मे दीक्षा स्वीकार की।

आप भी महासती प्र० श्री मानकु वर जी महाराज की शिष्या हैं। आपको फुटकर बोलचाल का अच्छा ज्ञान है।

बा० ब्र० श्री ज्योतिसुधा जी महाराज

आपने झाबड परिवार मे जन्म लिया है। आपके पिता नेमीचन्द जी तथा माता का नाम मदनबाई है। आपने लगभग १६ वर्ष की उम्र मे पूज्या प्र० महासती श्री मानकु वर जी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की।

आपने पाथर्डी बोर्ड की प्रभाकर परीक्षा उत्तीर्ण की है। आपकी व्याख्यान शैली बडी अच्छी है। आप लेखिका भी है।

बा० ब्र० श्री प्रतिभाकु वर जी महाराज

आपका जन्म स्थान "सतोरा पिंपरी" जि० परभणी हिंगोली ता० है। आपके पिता मिठालाल जी बाफना एव माता झनकारबाई है। आपने १६ वर्ष की आयु मे मेट्रिक पास करके ता० ५-१२-७३ को दीक्षा स्वीकार की। आपकी दीक्षादाता म० श्री प्रभाकु वर जी महाराज है। आप श्री पडिता प्र० महासती श्री मानकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। राष्ट्र भाषा वर्धा की 'कोविद' की परीक्षा उत्तीर्ण की और पाथर्डी बोर्ड की जैन सिद्धान्त शास्त्री। वर्तमान मे आप आचार्य का अभ्यास कर रही है। आपकी व्याख्यान शैली भी मजी हुई है।

बा० ब्र० श्री उज्ज्वलकु वर जी महाराज

आपने वेदमूथा परिवार मे जन्म लिया। आपके पिता का नाम पुखराज जी वेदमूथा तथा माता का नाम कन्चरीबाई था। आपने लगभग १७-१८ वर्ष की वय मे दीक्षा धारण की। आप व्याख्यानी महासती श्री हीरा कु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आप महासती श्री प्रभाकु वर जी महाराज की ससार पक्ष की भतीजो है। आपने भी ज्ञानाभ्यास अच्छा किया और कर रही है।

श्री शान्तिसुधाजी महाराज

आपने अपने पति-पुत्र आदि परिवार को छोडकर दीक्षा स्वीकार की। आपने निफाड (नासिक) मे दीक्षा ग्रहण की। महासती स्व० श्री एलम कु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आपको थोकडो का अच्छा ज्ञान है।

पाथर्डी बोर्ड की जैन सि० प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप व्याख्यान भी देती है। लगभग ५० (पचास) वर्ष को वय मे दीक्षा ली, फिर भी आपकी बुद्धि बडी अच्छी है।

महासती श्री सुशील कु वर जी महाराज

आप श्रीमान परसराम जी झाबड की सुपुत्री है। आपकी माता का नाम तपस्विनी शकुन्तलाबाई है। आपने लगभग १६-२० वर्ष की आयु मे मनमाड

नगर मे दीक्षा स्वीकार की। आपके दीक्षादाता आचार्य सम्राट् जैन धर्म दिवाकर परमश्रद्धेय श्री आनन्द ऋषिजी महाराज हैं।

विदुषी महासती श्री एलमकु वर जी महाराज की आप शिष्या बनी। गुरुवर्या की सेवा करती हुई पाथर्डी बोर्ड की 'प्रभाकर' तथा हैद्राबाद की हिन्दी प्रचार सभा की 'विद्वान' परीक्षाएँ उत्तीर्ण की है। वर्तमान मे आप महासती श्री प्रभाकु वर जी महाराज के साथ विचरण कर रही है। आप महासती श्री प्रकाशकु वर जी की ससार पक्ष की वहन है। आप जैन सिद्धान्त शास्त्रो का अभ्यास पूर्ण कर चुकी है।

महासती श्री सुमनकु वर जी महाराज

आपने ओसवाल परिवार को छोडकर महासती स्थविर पद विभूषिता श्री वृद्धिकु वर जी महाराज के पास दीक्षा ली। आप बडी सेवाभावी थी। दो वर्ष पूर्व सथारा सहित आपका स्वर्गवास हुआ है।

बा० ब्र० श्री किरणप्रभाजी महाराज

आपने बरडिया कुल मे जन्म लिया है। आपश्री महासतो चम्पाकु वर जी महाराज की भतीजी हैं, तथा शिष्या भी उन्ही की बनी। आप अपने आत्मा-साधना, ज्ञान-ध्यान मे दत्तचित है। महासती श्री चम्पाकु वर जी महाराज के साथ वर्तमान मे विचरण कर रही है।

बा० ब्र० श्री प्रफुल्लकु वर जी महाराज

आपका जन्म बाफना कुल मे हुआ। आपके पिता मिठालाल जी तथा माता झनकारबाई है। आप महासती श्री प्रतिभाकु वर जी महाराज की सगी बहन है। आपको वैराग्य भावना नौ वर्ष की आयु मे ही बलवती हो गई। आपने दीक्षा कटगी (ठाना) मे दीक्षा धारण की। आपके दीक्षादाता वाणी भूषण प० श्री रतनमुनि जी महाराज हैं। आप महासतो प्र० श्री मान कु वर जी महाराज की शिष्या बनी।

वर्तमान मे आप महासती श्री प्रभाकु वर जी महाराज के साथ विचरण कर रही है। आपने वर्धा की राष्ट्रभाषा हिन्दी की तथा पाथर्डी बोर्ड की जैन सि० विशारद की परीक्षा दी है।

श्री बसन्तमाला जी महाराज

आप मद्रास की निवासिनी है। आपने महासती श्री वृद्धिकु वर जी महाराज से दीक्षा ग्रहण की। आप उन्ही की शिष्या बनी। आप आत्म-सयम-साधना मे सलग्न हैं।

बा० ब्र० श्री दर्शनप्रभाजी महाराज

आपका जन्म बाफना परिवार मे हुआ। आपके पिता गणेशमल जी बाफना एव माता कान्ताबाई है। आपने महासती प्र० श्री मानकु वर जी महाराज के चरणो मे बुलढाणा शहर मे दीक्षा ली। आप महासती प्रतिभा कु वर जी के काका की लडकी है।

वर्तमान मे आप महासती प्र० श्री मानकु वर जी महाराज की सेवा मे रत है। विद्याभ्यासी, सरल स्वभावी तथा गायन प्रेमी है।

श्री कान्तिसुधा जी महाराज

आप श्रीमान् कन्हैयालाल भसाली की ससारी पक्ष मे धर्मपत्नी है। आप अपने पुत्र-पौत्र आदि परिवार को छोडकर महासती श्री एलमकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। आपके पति श्री कन्हैयालाल जी महान् सत, सरल स्वभावी श्री जीवराज जी महाराज के शिष्य बने।

आप (श्री कान्तिसुधाजी महाराज) की दीक्षा हैद्राबाद मे हुई। आप श्री शान्तिसुधा जी महाराज की ससारी बहन है। आपका त्याग-वैराग्य सराहनीय है।

बा० ब्र० श्री भक्तिप्रभा जी महाराज

आपका जन्म ओसवाल वश मे हुआ। आप अपने दो भाइयो के बीच एक ही है। आप महासती श्री वृद्धिकु वर जी महाराज की शिष्या बनी। वैसे आपका जन्म 'कुन्देवाडी' निफाड का है। वही आपने दीक्षा ली। आप वर्तमान मे महासती श्री रोशनकु वर जी महाराज के साथ विचरण कर रही है।

श्री प्रशान्तकु वर जी महाराज

आपके पिता उगमराज जी सुराणा एव माता गेंदाबाई है। आपने यवतमाल (महा०) मे ता० ११/७/८० को पू० श्री कान्तीमुनि जी महाराज से दीक्षा स्वीकार की। आप महासती श्री मानकु वर जी म० की शिष्या बनी।

आपने पाथर्डी बोर्ड की प्रथमा तथा विशारद की परीक्षा दी। अभी आप महासती श्री प्रभाकु वर जी महाराज के साथ विचरण कर रही है।

बा० ब्र० श्री ज्ञानसुधा जी महाराज

आप बुलढाणा जिला के कोराण निवासी श्रीमान् रूपचन्द जी वेद-मूथा की सुपुत्री है। आपकी माता का नाम सौ० कमलाबाई है। आपने 'खामगॉव' मे दीक्षा स्वीकार की।

आपके दीक्षादाता, प्रशान्तात्मा प० श्री जीवराज जी महाराज हैं।

आप महासती प्र० श्री मानकुवर जी महाराज की शिष्या बनी। आप महासती श्री प्रमोदकुवर जी महाराज की सगी भाणजी है। आप ज्ञानाभ्यास मे रत है।

श्री साधनासुधा जी महाराज

आप श्री उदेराज जी चडालिया की सुपुत्री है। आपने "कीनगाँव जट्टू" मे दीक्षा ग्रहण की। आप प्र० महासती श्री मानकुवर जी महाराज की शिष्या है। आप नवदीक्षिता है, ज्ञानाभ्यास मे सलग्न है।

बा० ब्र० श्री ऋद्धिसुधा जी महाराज

आप खानदेश तोडापुर निवासी श्रीमान चम्पालाल जी ललवाणी की सुपुत्री हैं। आपकी माता का नाम सौ० सूरजबाई है। आपने 'वणी' नगर मे सन् १९७९ कार्तिक शुक्ला २ को दीक्षा स्वीकार की। आपको दीक्षादाता महासती श्री प्रभाकुवर जी महाराज हैं। आप भी महासती प्र० श्री मानकुवर जी महाराज की शिष्या बनी। अभी ज्ञानाभ्यास मे सलग्न है।

महासती श्री कुसुमवती जी महाराज

आपका जन्म श्रीरामपुर मे हुआ। आपके पिता श्रीमान् पोपटलाल जी तथा माता का नाम कमलाबाई है। आपकी दोक्षा ओझर (जि० नासिक) मे स० २०३२ मृगसिर कृष्णा ६ सोमवार २४/११/७५ को हुई। आपकी दोक्षा-दाता महासती श्री रोशनकुवर जी महाराज हैं। आप अपनी गुरुवर्या को परिचर्या करती हुई ज्ञानाभ्यास मे सलग्न हैं।

दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, नन्दोसूत्र, सुखविपाक आदि का आपने अभ्यास किया है। पाथर्डी बोर्ड से जैन सि० विशारद परीक्षा उत्तीर्ण की है।

बा० ब्र० सिद्धिकुवर जी महाराज

आप श्रीमान् सेठ भवरीलाल जी बोरा की सुपुत्री है। आपको माता का नाम सौ० ललिताबाई बोरा है। लगभग १९ वर्ष को आयु मे महासती श्री प्रभाकुवर जी महाराज से ता० ७/२/८२ रविवार को 'रालेगाँव' मे दीक्षा ग्रहण की। आप भी प्र० पडिता महान स्थविरा श्री मानकुवर जी महाराज की शिष्या बनी।

ज्ञान-ध्यान हेतु आप वर्तमान मे ज्ञानमूर्ति श्री प्रभाकुवर जी महाराज के साथ विचरण कर रही है।

इस प्रकार अनेको भाग्यशोला महान् सति वृन्दा जिनशासन की शोभा मे अभिवृद्धि करती हुई, सयम पथ की पथिका बनी हुई है तथा भविष्य मे बनती जायेंगी। □

सद्गुरुनाथ के चातुर्मासो से लाभान्वित गाँव और नगर

वि० सवत्	नगर का नाम	वि० सवत्	नगर का नाम
१९७१	नासिक (महाराष्ट्र)	१९९५	घोडनदी
१९७२	रास्ता	१९९६	नासिक
१९७३	आष्टि	१९९७	हिंगणघाट
१९७४	सातारा	१९९८	सिकन्द्राबाद (आ प्र)
१९७५	औरगाबाद	१९९९	लातूर (महाराष्ट्र)
१९७६	घोडनदी	२०००	जालना ,,
१९७७	सातारा	२००१	कोप्पल (कर्नाटक)
१९७८	चिंचवड	२००२	अरसी खेडा ,,
१९७९	चिंचपोकली (बम्बई)	२००३	कुकनूर (महाराष्ट्र)
१९८०	लूणार	२००४	परली बैजनाथ ,,
१९८१	अमरावती	२००५	कुरूडवाडी ,,
१९८२	जालना	२००६	जामखेड ,,
१९८३	हिगणघाट	२००७	टेंभूर्णी ,,
१९८४	जालना	२००८	वार्शी ,,
१९८५	खेड (खेरपुरा)	२००९	जालना ,,
१९८६	कोप्पल (कर्नाटक)	२०१०	मनमाड ,,
१९८७	बैंगलोर ,,	२०११	बैजापुर ,,
१९८८	नासिक (महाराष्ट्र)	२०१२	मालेगाँव ,,
१९८९	खामगाँव	२०१३	चिंचवड ,,
१९९०	जालना	२०१४	गगाखेड ,,
१९९१	बडोरा	२०१५	परभणी ,,
१९९२	सिकन्द्राबाद (आ प्र)	२०१६	औरगाबाद ,,
१९९३	रायचूर (कर्नाटक)	२०१७	चौसाला ,,
१९९४	बैंगलोर ,,	२०१८	नादेड़ ,,

□□

खण्ड
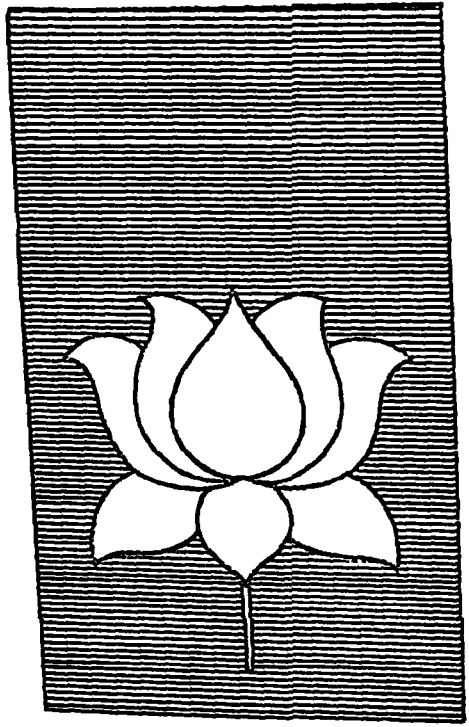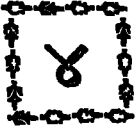
तप पूत सद्गुरुनाथ कर्णाटक केसरी
श्रीगुरु - गणेश जीवन - दर्शन

शुभकामना
श्रद्धार्चन

महाराष्ट्र तपोकेशरी जी का आशीर्वाद लेते हुए श्रीमान चम्पालाल जी गाधी, सो० मोहनीबाई एव पुत्र-पुत्री परिवार

जीवन ग्रन्थ प्रकाशन मे विशिष्ट सहयोगी

स्वर्गीय गुरुदेव कर्णाटककेशरी गुरु गणेश के अनन्य भक्तो मे मद्रास निवासी श्रीमान सेठ सी० चम्पालाल जी उत्तमचन्द जी गाधी का प्रमुख स्थान है।

राजस्थान—मारवाड मे जवाली आपकी जन्मभूमि है।

आप हृदय से वडे ही उदार, धर्मप्रेमी, दानवीर तथा साधु सन्तो के प्रति असीम भक्ति रखते है। आपकी धर्मपत्नी सेठानी जी भी बडी ही भावनाशील, भक्ति-परायण सुश्राविका हैं। आपके पुत्र-पुत्री परिवार मे धर्म-सस्कार रमे हुए हैं।

तपोकेशरी श्री बसन्तमुनि जी महाराज की प्रेरणा व गुरुभक्तिवश आपने इस प्रकाशन मे २१०००) रु का विशिष्ट सहयोग प्रदान किया है।

तदर्थ शत-शत धन्यवाद !

मद्रास मे आपका प्रतिष्ठान है —

सी0 चम्पालाल उत्तमचन्द गांधी

५००, टी० एच० रोड, धोवी पैठ,
मदास-६०००२१

शुभकामना श्रद्धार्चन

शुभ कामना

श्री कर्नाटक केशरी जी महाराज से सम्बन्धित "जीवन दर्शन" पुस्तक प्रकाशित होने जा रही है, यह परम सतोप का विषय है।

जिनका हृदय नवनीत सा कोमल एव सयमी स्व-जीवन के प्रति वज्र-सा कठोर था, जिन महान् सतात्मा ने मुनि जीवन मे कठोरातिकठोर तपश्चर्या की, शीत-उष्ण आतापना ली, शरीर के अधीन न रहकर उसे अपने अनुकूल बनाया। जिन्होने स्थानकवासी परम्परा को सुदृढ बनाये रखने के लिए एव मिथ्यात्व मे फँसी हुई आत्माओ को शुद्ध सम्यक् पथ पर लाने का अथक प्रयास किया। जीव दया के लिये गौशालाओ का उपदेश दिया। अनेको दीन दु खियो को गले लगाया। खद्दर का पुरजोर प्रचार किया, जनता को सादगी से जीने का अमर सदेश दिया।

जिनके कठोर शब्द भी धारण करने वाले श्रोताओ के लिये वरदान स्वरूप थे। जिनके मागलिक तथा तप निमित्त को पाकर अनेको के शारीरिक रोग दूर हो गये। उन तप पूत चारित्रनिष्ठ सत प्रवर का स्थानकवासी समाज पर महान् उपकार है। उस ऋण से मुक्त होना असम्भव है। ऐसे महामना का जीवन-दर्शन सस्मरण प्रकाशित किया जा रहा है। इस प्रस्तुत पुस्तक द्वारा श्रद्धालु श्रावको की श्रद्धा बढे तथा वे शुद्ध क्रिया के मार्ग पर चलने के लिये तत्पर रहे।

यही मेरी शुभ कामना।

☐ आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी महाराज

श्रद्धोद्‌गार

☐☐

श्रद्धोद्गार

☐ युवाचार्य श्री मधुकर मुनि जी महाराज

मुनि प्रवर परमश्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज का जीवन कठोरतम तपस्यामय था। आपश्री आध्यात्मिक पथ के सफल-सबल पथिक थे। सयम, तितिक्षा (सहनशीलता), सम्यक्त्व धर्म प्रसार ये तीन आपके जीवन के महत्त्वपूर्ण गुण थे। श्रमण सस्कृति के प्रेरक आदर्शों को सजीव रूप मे स्थापित करने वाले श्रमणरत्नो मे आपका स्थान भी जुडा हुआ है।

आपने जो कार्य महाराष्ट्र एव कर्नाटक मे किया वह सर्वथा प्रशस्य एव स्मरणीय रहेगा। उनके द्वारा प्रेरित होकर अनेको आत्माएँ सद्धर्म के सम्मुख हुई, ऐसे पुण्यचेता कर्नाटक केशरी दिवगत सतपुरुष के प्रति जिसकी भी श्रद्धा बढेगी वे सम-सवेग तथा निर्वेदमय मार्ग की ओर बढते हुए अपने जीवन का आत्मोत्थान करेंगे।

तपस्वीरत्न के प्रति मेरे श्रद्धोद्गार! ☐

शत-शत वन्दना

☐ जैनागम तत्त्व विशारद प्रवर्तक श्री हीरालाल जी महाराज (जावरा)

महान् तपस्वीरत्न कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज का जीवन साधनामय था। जीवन के अन्तिम क्षणो तक आपश्री ने सम्यक्ज्ञान तथा तप-चिंतन को अपना सहयोगी बनाया। आप जैसी विरल विभूति सैकडो-हजारो सत-मुनिराजो के बीच कोई एकाध भी मिलनी मुश्किल है।

आप स्वय खद्दरधारी थे तथा इसी का प्रचार किया। साथ ही समकित पर विशेष जोर दिया। सैकडो-हजारो को मुँहपत्ति बँधाई। लगभग तीस वर्ष से ऊपर एकान्तर उपवास किये। आपका सम्पर्क पाकर बहुतो के रोग मिटे। ऐसे महामना मुनिपुगव के पावन दर्शन करने का मुझे भी सौभाग्य मिला था।

सम्यक्त्व धर्म के प्रसारक तपस्वीराज को शत-शत वन्दना के साथ श्रद्धाजलि। ☐

तपोज्योति के चरणो मे वन्दन !

□ कविरत्न श्री केवल मुनि

सूर्य पूर्व मे उदित होता है और विशाल गगन की यात्रा करता-करता पश्चिमाचल मे जाकर छिप जाता है। किन्तु जैन जगत का यह तप सूर्य भारत के पश्चिमाचल मे उदित हुआ, अपनी प्रचण्ड तप किरणो से सम्पूर्ण मानव-लोक को प्रकाशित करता हुआ भारत के दक्षिणाचल मे आलोक बिखेरता रहा। जन-मन के दु ख एव मिथ्यात्व अन्धकार को दूर भगाता रहा।

तपस्वीरत्न श्री गणेशमलजी महाराज एक महान् चमत्कारी पुरुष थे। तप ज्योति से उन्होने सैकडो-हजारो श्रद्धालुओ के जीवन को जगमगाया, और सम्यक् आलोक के मार्ग पर बढाया।

सन् १९५६ मे बोदवड चातुर्मास था। बोदवड श्रीसघ ने बडे ही उत्साह से चातुर्मास कराया था। आस-पास के गाव वालो ने प्रवचन-श्रवण और धर्मध्यान का अच्छा लाभ लिया। वहाँ वाले श्री नथमलजी भी आये हुए थे। उनके साथ उनका बडा पुत्र भी था। बातचीत के प्रसग मे नथमलजी ने बताया—महाराज ! मेरा यह बडा पुत्र पागल हो गया था, इसका इलाज तपस्वीराज के आशीर्वाद ने ही किया।

कैसे ?—मैंने पूछा।

नथमल जी ने बताया—हमारा पूरा परिवार तपस्वीराज श्री गणेश-मल जी महाराज के प्रति अनन्य श्रद्धा रखते हैं। मेरा बडा बेटा अचानक पागल हो गया तो सब लोग चिंतित हो उठे। किसी ने कही, किसी ने कही ले जाने को कहा, मगर मे सीधा तपस्वीराज के चरणो मे पहुँच गया। उन्होने इसे देखकर कहा—इसे यहाँ क्यो लाये ? मैं क्या कोई डाक्टर वैद्य हूँ। जो इसका इलाज करूँ ?

मैंने कहा—गुरुदेव ! आप हमारे सब कुछ हो, हम आप पर पूर्ण श्रद्धा रखते है, यह आपके चरणो की शरण मे है, आपकी कृपा से ही यह अच्छा होगा। हमे और कही नही जाना है। आप जैसा कहेंगे, वैसा ही हम करेंगे।

तपस्वीराज कुछ सोचते रहे, फिर बोले—इसे पाँच तेला करा दो।

हम लोग घर आ गये । पाँच तेला कराया और यह बिल्कुल अच्छा हो गया । आज आपके सामने है ।

नथमलजी की यह आपबीती सुनकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई, इस पचम काल मे भी ऐसे तपस्वी श्रमण है, जिनके वचनो को श्रद्धापूर्वक धारण करने वाले का कल्याण होता है, तप की अखण्ड साधना-आराधना से जिनके वचनो मे सिद्धि हो गई है और जिनका शुभाशीर्वाद ही अनेक दु स्साध्य वाधाओ को दूर भगा देता है ।

तपस्वीराज कोटा सम्प्रदाय के प० श्री प्रेमराज जी महाराज के शिष्य-रत्न थे । श्री प्रेमराज जी महाराज के दर्शन मैंने गुरुदेव श्री जैन दिवाकर जी महाराज के साथ चिचवड मे किये थे । उस समय तपस्वी जी महाराज वहाँ नही थे । उनके दर्शनो का सौभाग्य मुझे नही मिला, किन्तु बोदवड और घुलिया, दो चातुर्मास महाराष्ट्र मे किये तब उनकी महिमा बहुत सुनी थी । वे निस्पृह तपोयोगी थे । उनके चरणो मे दूर-दूर से श्रद्धालुजन पहुँचते थे । मद्रास, बेंगलोर, दिल्ली, पजाव, राजस्थान आदि दूर-दूर क्षेत्रो से प्रतिवर्ष हजारो की सख्या मे श्रद्धालु उनके चरणो मे उपस्थित होते, तपोधनी का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर अपने को कृतकृत्य समझते ।

८४ वर्ष की उम्र होते हुए भी तपस्वीराज एकान्तर तप निरन्तर करते रहे । दिन मे सोना नही, रात मे भी बहुत कम सोना, ध्यान-जप-स्वाध्याय चालू रहता । आत्मनिष्ठ श्रमण आत्मभाव मे लीन रहते, त्याग-प्रत्याख्यान-अभिग्रह का क्रम चालू रहता । निर्मल चारित्र के धनी तप की मूर्तिमान ज्योति थे, सयम-साधना के देवता थे ।

तपस्वीराज के जीवन की सबसे बडी विशेषता थी वे सत्य के कठोर समुपासक थे । तप के उदग्र आराधक थे । सच्चा जैनत्व उनकी रग-रग मे रमा था । मिथ्यात्वी देवताओ की आराधना, उपासना, मान्यता को वे कतई पसन्द नही करते थे । उन्होने श्रावको को स्पष्ट समझाया, वीतराग देव ही सच्चे देव है, उनकी आराधना से ही समस्त दु ख, शोक, भय, पीडा, बाधा शान्त होती हैं, फिर मिथ्यात्वी देवी-देवताओ के चक्कर मे क्यो पडते हो ? उन्होने नियम कर लिया था जो श्रावक श्राविका मिथ्यात्वी देवो की उपासना करते है, उनके यहाँ का आहार नही लेना । बडा कठिन था यह व्रत ! होली-दिवाली पूजन कौन छोडता ? विवाह मण्डप मे अग्नि-प्रज्वलित कर यज्ञ किये बिना विवाह कैसे हो सकता है ? जनता के दिलोदिमाग मे देवी-देवताओ के विचार ऐसे घुस चुके थे कि उनका निकलना मुश्किल था

परन्तु तपस्वीराज की प्रेरणा, उद्बोधन और बार-बार के मार्गदर्शन से लोगो मे सस्कार बदले। अनेक लोगो ने मिथ्या रीति-रिवाज, कुरूढि और मिथ्या देवी-देवताओ के अन्धविश्वासो का त्याग किया। जागृति की लहर, चेतना की नई अगडाई सर्वत्र लहरा उठी।

उनकी प्रवचन सभा मे फैशनेबिल या अति बारीक, महीन कपडे पहनने वाले, जेवरो से अपनी शान-प्रतिष्ठा बढाने वाले सम्मिलित नही हो सकते थे। वे सादगी पसन्द, समत्वयोगी थे। बिना यतना के, बिना मुँहपत्ति उनके नजदीक पहुँचना सम्भव नही था। वे मुँहपत्ति रखने वालो और शुद्ध खादी पहनने वालो से ही बात करते थे।

तपस्वी जी महाराज दया के सागर थे। जीवदया के मसीहा थे। गऊ-सेवा से उन्हे आन्तरिक लगाव था। गो-सेवा और शुद्ध खादी उनके दो प्रमुख सूत्र थे। तपस्या और यतना दो प्रमुख साधना थी। एक उपवास नही करने वाले भी उनकी प्रेरणा से हँसते-हँसते अठाई तप कर जाते। तप के जीवन्त प्रकाश स्तभ थे वे। सम्यक्श्रद्धा और सम्यक्तप—(चारित्र) यही उनका साधना पथ था, उनके इस प्रकाश से हजारो अन्धकार-पीडितो के जीवन मे प्रकाश की किरण चमक उठी।

तप के प्रकाश स्तभ को शत-शत नमन। □

महाप्रभावी-महामुनि

□ अनुयोग प्रवर्तक मुनि श्री कन्हैयालाल जी "कमल"

स्वर्गीय गणेशमल जी महाराज साहब "खादी धारी" उपनाम से प्रसिद्ध थे। वे लब्धिसम्पन्न महाप्रभावी तपस्वी महामुनि थे, और अपने उपासको को भी तप करने की प्रबल प्रेरणा देने वाले चमत्कारी मुनिराज थे।

"तप करने से ही कर्म खपते है"—इस सिद्धान्त का साक्षात्कार कराने वाले इस युग के आदर्श-युग पुरुष थे।

वे न आचार्य थे और न गणी थे, फिर भी अनेकानेक भक्तगणो के श्रद्धेय ईश थे, अत वे विघ्नविदारक सच्चे "श्रीगणेश" थे।

खादी के वस्त्र उनकी आध्यात्मिक निष्ठा के प्रतीक थे। खाली कर दी थी अशुभ कर्म कालिमा से भरी देह दिवडी को। अतएव धारी थी शुभ शुद्ध शुभ्र सूत्र-सृजित श्वेत चादर को।

ऐसे तपोधन के तपोपूत पाद पद्मो मे हार्दिक श्रद्धासुमन समर्पित है। □

हम लोग घर आ गये। पाँच तेला कराया और यह बिल्कुल अच्छा हो गया। आज आपके सामने है।

नथमलजी की यह आपबीती सुनकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई, इस पचम काल मे भी ऐसे तपस्वी श्रमण है, जिनके वचनो को श्रद्धापूर्वक धारण करने वाले का कल्याण होता है, तप की अखण्ड साधना-आराधना से जिनके वचनो मे सिद्धि हो गई है और जिनका शुभाशीर्वाद ही अनेक दु स्साध्य बाधाओ को दूर भगा देता है।

तपस्वीराज कोटा सम्प्रदाय के प० श्री प्रेमराज जी महाराज के शिष्य-रत्न थे। श्री प्रेमराज जी महाराज के दर्शन मैंने गुरुदेव श्री जैन दिवाकर जी महाराज के साथ चिंचवड मे किये थे। उस समय तपस्वी जी महाराज वहाँ नही थे। उनके दर्शनो का सौभाग्य मुझे नही मिला, किन्तु बोदवड और धुलिया, दो चातुर्मास महाराष्ट्र मे किये तब उनकी महिमा बहुत सुनी थी। वे निस्पृह तपोयोगी थे। उनके चरणो मे दूर-दूर से श्रद्धालुजन पहुँचते थे। मद्रास, बेंगलोर, दिल्ली, पजाब, राजस्थान आदि दूर-दूर क्षेत्रो से प्रतिवर्ष हजारो की सख्या मे श्रद्धालु उनके चरणो मे उपस्थित होते, तपोधनी का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर अपने को कृतकृत्य समझते।

८४ वर्ष की उम्र होते हुए भी तपस्वीराज एकान्तर तप निरन्तर करते रहे। दिन मे सोना नही, रात मे भी बहुत कम सोना, ध्यान-जप-स्वाध्याय चालू रहता। आत्मनिष्ठ श्रमण आत्मभाव मे लीन रहते, त्याग-प्रत्याख्यान-अभिग्रह का क्रम चालू रहता। निर्मल चारित्र के धनी तप की मूर्तिमान ज्योति थे, सयम-साधना के देवता थे।

तपस्वीराज के जीवन की सबसे बडी विशेषता थी वे सत्य के कठोर समुपासक थे। तप के उदग्र आराधक थे। सच्चा जैनत्व उनकी रग-रग मे रमा था। मिथ्यात्वी देवताओ की आराधना, उपासना, मान्यता को वे कतई पसन्द नही करते थे। उन्होने श्रावको को स्पष्ट समझाया, वीतराग देव ही सच्चे देव है, उनकी आराधना से ही समस्त दु ख, शोक, भय, पीडा, बाधा शान्त होती है, फिर मिथ्यात्वी देवी-देवताओ के चक्कर मे क्यो पडते हो ? उन्होने नियम कर लिया था जो श्रावक श्राविका मिथ्यात्वी देवो की उपासना करते है, उनके यहाँ का आहार नही लेना। बडा कठिन था यह व्रत! होली-दिवाली पूजन कौन छोडता ? विवाह मण्डप मे अग्नि-प्रज्वलित कर यज्ञ किये विना विवाह कैसे हो सकता है ? जनता के दिलोदिमाग मे देवी-देवताओ के विचार ऐसे घुस चुके थे कि उनका निकलना मुश्किल था

परन्तु तपस्वीराज की प्रेरणा, उद्‌बोधन और बार-बार के मार्गदर्शन से लोगो मे सस्कार बदले। अनेक लोगो ने मिथ्या रीति-रिवाज, कुरूढि और मिथ्या देवी-देवताओ के अन्धविश्वासो का त्याग किया। जागृति की लहर, चेतना की नई अगडाई सर्वत्र लहरा उठी।

उनकी प्रवचन सभा मे फैशनेबिल या अति बारीक, महीन कपडे पहनने वाले, जेवरो से अपनी शान-प्रतिष्ठा बढाने वाले सम्मिलित नही हो सकते थे। वे सादगी पसन्द, समत्वयोगी थे। बिना यतना के, बिना मुँहपत्ति उनके नजदीक पहुँचना सम्भव नही था। वे मुँहपत्ति रखने वालो और शुद्ध खादी पहनने वालो से ही बात करते थे।

तपस्वी जी महाराज दया के सागर थे। जीवदया के मसीहा थे। गऊ-सेवा से उन्हे आन्तरिक लगाव था। गो-सेवा और शुद्ध खादी उनके दो प्रमुख सूत्र थे। तपस्या और यतना दो प्रमुख साधना थी। एक उपवास नही करने वाले भी उनकी प्रेरणा से हँसते-हँसते अठाई तप कर जाते। तप के जीवन्त प्रकाश स्तभ थे वे। सम्यक्‌श्रद्धा और सम्यक्‌तप—(चारित्र) यही उनका साधना पथ था, उनके इस प्रकाश से हजारो अन्धकार-पीडितो के जीवन मे प्रकाश की किरण चमक उठी।

तप के प्रकाश स्तभ को शत-शत नमन। ☐

महाप्रभावी-महामुनि

☐ अनुयोग प्रवर्तक मुनि श्री कन्हैयालाल जी "कमल"

स्वर्गीय गणेशमल जी महाराज साहब "खादी धारी" उपनाम से प्रसिद्ध थे। वे लब्धिसम्पन्न महाप्रभावी तपस्वी महामुनि थे, और अपने उपासको को भी तप करने की प्रबल प्रेरणा देने वाले चमत्कारी मुनिराज थे।

"तप करने से ही कर्म खपते हैं"—इस सिद्धान्त का साक्षात्कार कराने वाले इस युग के आदर्श-युग पुरुष थे।

वे न आचार्य थे और न गणी थे, फिर भी अनेकानेक भक्तगणो के श्रद्धेय ईश थे, अत वे विघ्नविदारक सच्चे "श्रीगणेश" थे।

खादी के वस्त्र उनकी आध्यात्मिक निष्ठा के प्रतीक थे। खाली कर दी थी अशुभ कर्म कालिमा से भरी देह दिवडी को। अतएव धारी थी शुभ शुद्ध शुभ्र सूत्र-सृजित श्वेत चादर को।

ऐसे तपोधन के तपोपूत पाद पद्मो मे हार्दिक श्रद्धासुमन समर्पित है। ☐

कर्णाटक-केशरी

(सार छन्द)

☐ कविरत्न श्री चन्दन मुनि (पजाबी)

[१]

याद आज है करती जिनको
जैनी जनता सारी
गुणी "गणेशलाल जी" नामी
सत हो गये भारी

[२]

"उगनी सौ छत्तीस" विक्रमी
सवत शुभ जब आया
"कार्तिक शुक्ला षष्ठि" को था
जन्म आपने पाया

[३]

राजस्थान का नगर "बिलाडा"
फूला नही समाया
जन-जन मे आनन्द अलौकिक
श्याम घटा-सा छाया

[४]

माता "धूलीदेवी जी" गद्गद्
पुत्र रत्न को पाकर
नव्य भव्य-सा देव द्रव्य-सा
मुखडा चाद लखाकर

[५]

"पूनमचन्द" सेठ ललवानी
पुलकित था अति मन मे
हर्ष-खुशी का अद्भुत अवसर
आया था जीवन मे

[६]

बडे हुए तो दीक्षा धारी
छोडी दुनियादारी
महातपस्वी "प्रेमचन्द" गुरु
पाये पर-उपकारी

[७]

"मगसिर शुक्ला नौमी", सवत–
था "उगनी सौ सत्तर"
झूम उठा था सभी "नगर शूल"
खुशियो मे वह भरकर

[८]

जैनागम का ज्ञान प्राप्त कर
लगे उसे फैलाने
जगह-जगह प्रारम्भ किये थे
भाषण मधुर सुनाने

[९]

भेद सतासठ समकित के वे
खोल-खोल बतलाते
झूम-झूम सुन श्रद्धा से थे
लोग उन्हे अपनाते

[१०]

प्रतिक्रमण, सामायिक आदिक
कण्ठ बहुत करवाये
श्रावक के व्रत बारह देकर
श्रावक बहुत बनाये

[११]

खद्दर बिन न वस्त्र दूसरा
देखा उनके तन पर
छाप सादगी की ही पक्की
लगी हुई थी मन पर

[१२]

उनके त्याग, तपस्या की थी
दुनिया बडी पुजारी
जो भी उन्हे देखते कहते
बाबा खद्दरधारी

[१३]

गुणखानी जिनवाणी का यह
जगत बने अनुयायी
धर्म अहिंसा समझाते थे
सबको ही सुखदायी

[१४]

सदाचार को, प्रेम-प्यार की
शिक्षा करते रहते
अन्धकार अज्ञान हृदय से
सबके हरते रहते

[१५]

बने देवता दुनिया सारी
बने सभी या मानव
उनकी थी अभिलाषा कोई—
बने कभी न दानव

[१६]

करते रहे प्रयत्न निरन्तर
जीवन भर ही ऐसा
करुणाधारी, पर-उपकारी
सन्त कहाँ उन जैसा

[१७]

समता योगी, सिद्ध श्रमण थे
देह दमन थे करते
मन के विकट विकार निकट न
कदम उन्हो के धरते

[१८]

बूढे, बाले, बनिये, लाले
ज्ञानी, गोरे, काले
कर्नाटक के उन्हे केसरी
कहते थे जग वाले

[१९]

"दो हजार अष्टादश" सम्वत
माघ अमावस आई
कर सथारा देवलोक को
सुख से करी चढाई

[२०]

पिंड छुडाया भले आपने
अपने भौतिक तन से
मानेंगे यदि चले आप जो
जाओ जन-गण-मन से

[२१]

नव जागरण-सन्देश प्रदाता
धन्य ! आपका जीवन
चरण कमल मे करता वन्दन
पजाबी "मुनि चन्दन"

□□

एक दैदीप्यमान नक्षत्र

☐ (मेवाड भूषण गुरुदेव श्री प्रतापमल जी महाराज के शिष्य)
महाराष्ट्र तपोकेशरी श्री बसन्तलाल जी महाराज

आज मुझे महान् प्रसन्नता हो रही है कि—मुझे उन महान् सत-आत्मा के प्रति दो शब्द लिखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। ख्याति सम्पन्न कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज स्थानकवासी मुनि परम्परा के एक दैदीप्यमान नक्षत्र थे। वे महाराष्ट्र तथा कर्नाटक प्रान्त मे भी "सद्गुरुनाथ" किंवा "गुरु-गणेश" इस नाम से जाने जाते थे तथा अभी भी इसी नाम से जाने जाते है। कोई 'खद्दरधारी बाबाजी महाराज' तथा कोई 'कर्नाटक केशरी' इस नाम से भी उन्हे पुकारते है।

अन्ध मान्यताओ, द्रव्य पूजा-पाठ का उन्होने खुलकर विरोध किया था। सम्यक्त्व धर्म तथा मुँहपत्ति का प्रचार-प्रसार उन्होने जमकर किया था, सैकडो-हजारो आत्माओ ने जिस राह का सहृदय सश्रद्धा आदर किया इतना ही नही उनके सन्देशो पर वे चल पडे।

उनकी दैनिक चर्या तप-त्याग-स्वाध्याय-चिंतन तथा धार्मिक सदेशो के बीच ही गुजरती थी। उनका आत्म-बल बडा अजब-गजब का था। उन्हे विदेशी वस्त्रो से बडी चिढ थी और वह इसीलिए कि—महा आरम्भ (पाप) से जिनका निर्माण होता है। वे स्वय खादी पहनते थे तथा अन्य को खादी पहनने का सदेश देते थे, यहाँ तक कि—अग्रेजी बाल कटिंग वालो को भी वे ऐसा करने से रोकते थे। उनके तप-त्यागमय साधना बल के सामने सभी को नतमस्तक होना पडता था। मुझे भी उन तप पूत चारित्रात्मा की सेवा मे लगभग दो वर्ष तक रहने का सुअवसर मिला था, मैंने उन्हे निकटता से देखा तथा जहाँ तक समझ पाया वे बाह्य आडम्बर—नाम, पदलिप्सा से सर्वदा परे ही रहते थे। उनकी महान् साहसिकता के शुभ दर्शन मुझे अनेको बार हुए है, और कभी-कभी होते भी है। उन महान् सन्तरत्न सद्गुरुनाथ के सदेशो पर चलने वाली आत्मा सम्यक् पथिक बनेगी, ऐसी मेरी श्रद्धा है।

☐

जिनशासन के वफादार प्रहरी

☐ श्री अशोक मुनि 'साहित्यरत्न'

कोटा सम्प्रदाय के घोर तपस्वी मनस्वी श्री गणेशमल जी महाराज स्थानकवासी समाज के प्रसिद्ध सन्त थे। उन्होने सिह जैसे उत्साह मे दीक्षा ली और वैसे ही उत्साह से जीवन पर्यन्त उसका पालन किया।

तपस्वी रत्न—

दीक्षा लेने के अनन्तर कुछ समय बाद से ही आपने तपाराधन प्रारम्भ कर दिया तथा जीवन पर्यन्त उसका पालन किया। एकान्तर तपोपवास तो आयुष्य भर करते रहे, साथ ही तेला आदि तपस्या बीच-बीच मे करते रहे।

आगम प्रेमी—

आगमो पर आपकी अत्यन्त श्रद्धा एव रुचि थी। आगमो का आप नियमित स्वाध्याय करते थे। कई लोगो से सुना कि इनके हाथो मे विशेष कर सूत्र के पाठ ही रहते थे। ४५ आगमो को आपने अपने हाथो से लिपिबद्ध किया था।

विचरण प्रेमी—

आपको विहार अधिक प्रिय था। छोटे-छोटे गाँवो मे विशेष रूप से विहार और धर्म प्रभावना का कार्य होता। शहरो की अपेक्षा गाँवो मे अधिक चातुर्मास और शेष काल मे विचरते थे। उनकी यह धारणा थी कि गाँवो मे सयम अधिक शुद्ध पलता है। कर्नाटक, आन्ध्र एव महाराष्ट्र के कई क्षेत्र आपके चरणो से पावन हुए है।

खादी के हिमायती—

आप शुद्ध खादी पहनने के विशेष हिमायती थे। जब गाधीजी की अहिंसा और खादी की आवाज उठी तब से ही आपने आपने तन पर खादी धारण कर ली। अपने उपासको को वे खादी का उपदेश देते और आगे चल कर तो खादी धारको से ही बात करते। उन्होने अपने जीवन मे खादी का विशेष प्रचार किया। उनकी प्रेरणा से खादी भण्डार चलता था। आपकी प्रेरणा एव उपदेश से कइयो ने खादी धारण कर मिल के वस्त्रो का त्याग कर दिया था।

गौ प्रेमी—

तपस्वीराज छ काय जीव के दयालु एव रक्षक थे। जब भारत मे गायें कत्लखाने मे जाने लगी तब आपको पीडा पहुँची। आपने उनकी रक्षा के लिए गौशालाएँ खुलवाईं। आप लोगो को गौ पालन का उपदेश देते थे। आपकी यह मान्यता थी कि यदि भारतवासी घर-घर मे गाय पालने लग जाएँ तो कत्लखानो मे गायें नही जायेंगी। आपकी प्रेरणा से ही जालना, कोप्पल, शोलापुर, चौसाला, औरगाबाद आदि स्थानो पर गौशालाएँ खुली एव कार्यरत है।

परम्परा प्रेमी—

आपश्री धार्मिक परम्परा के पोषक थे तथा उसका कट्टरता से पालन करने-कराने के हिमायती थे। शुद्ध जैनत्व के आप प्रबल प्रचारक थे। आपके समवसरण मे या आपके समीप खुले मुँह बैठने वाले को फटकार देते थे। कभी-कभी तो वहाँ से उठाकर बाहर भेज देते थे। आपश्री के तप प्रभाव से कइयो ने अपने शुद्ध धर्म को पहचाना। सान्निध्य मे आने वालो से आप तपस्या करवाते थे। तेले, अठाइयाँ आदि की झडी लग जाती थी। महाराष्ट्र या दक्षिण मे मासखमण जैसी बडी तपस्याएँ होना आपश्री की प्रेरणा का ही पुण्यफल है। आपने सदा मिथ्यात्व का विरोध किया और समकित का प्रचार किया। नियम और सयम के आप विशेष हामी थे। सौ वर्ष पूर्व आपका आविर्भाव हुआ। आपका सयम, तपाराधना, दृढता एव कट्टरता पर आधारित कार्य का प्रकाश जन-मन पर छाया हुआ है। युग की दिव्य विभूति के रूप मे आपका स्मरण रहेगा।

आपश्री का नश्वर देह तो अपनी जन्म शताब्दी देखने के लिए नही है किन्तु आपश्री का यश देह जो अवस्थित है। वह जन-जन के हृदय मे परम श्रद्धा का केन्द्र बना हुआ है। ऐसे दिव्य महान पुण्यश्लोक को युग युग-युग तक याद करता रहेगा। □

कर्णाटक का केसरी भक्तन का शिरमौर...

☐ मरुधरा रत्न प० मुनि श्री रूपचन्द जी म० 'रजत'

दोहा— कर्णाटक हरियक्ष थे, दक्ष दिव्य तप माय।
रक्षक थे षट काय के, स्पष्ट पक्ष रहिताय॥
तपी जपीलब्धी धनी, कठिन क्रिया की कोर।
कर्णाटक का केसरी, भक्तन का शिरमोर॥

मनहर छन्द— जैन को सितारो तारो, प्यारो प्राण भक्तन को।
दीन दुखीहु को सारो, भारो गुणवारो थो॥
नारी की निहारी यारी, क्यारी विषवारी सारी।
सुमति गुपति धारी, शिव पथु प्यारो थो॥
"प्रेम" को प्रधान शिष्य, व्योम मुनि निधिचन्द्र।
अगहन सित्त नोमी, सयम स्वीकारो थो॥
० २ ६ १
सपूत पूत पूनम को, अक, नेत्र निधि शशि।
जन्म "धूली" मात साथ, मारू-देश प्यारो थो॥

☐☐

श्रद्धा-सुमन

☐ श्री महेन्द्र मुनि 'कमल'

अगणित भक्तो के जीवन के, परम वद्य ! ज्योतिर्मय ईश।
जय कर्णाटक गज केशरी, प्यारा-प्यारा नाम गणीश॥
ज्ञान-क्रिया का अद्भुत सगम, जिनके जीवन मे था शुभ।
जो भी आ जाता चरणो मे, टल-जाते थे तुरन्त अशुभ॥
तन भी निर्मल मन भी निर्मल, पूरा जीवन था निर्मल।
निर्मलता की मूरत थे वे, नही जरा सा भी कलिमल॥
गुरु-गणेश खादी वाले को, प्रतिपल जन-मन ध्याता है।
मुनि 'कमल' भी श्रद्धापूर्वक, श्रद्धा सुमन चढाता है॥

☐☐

श्रद्धा के दो फूल

□ कवि मुनि विनयकुमार "भीम"

जप तप मे तल्लीन थे, मुनिवर श्री गणेश।
खादी पहनो तुम सदा, दिया यही सन्देश॥
दूर-दूर तक आपने, किया धर्म प्रचार।
फक्कड थे वे जोर के, याद करे ससार॥
कर्नाटक के केहरी, गूंजे सिह समान।
उच्च साधना के धनी, जो थे सन्त महान॥
श्रद्धा के दो फूल है, करिये आप स्वीकार।
चरणो मे शुभ भेंट है, करता विनयकुमार॥

□□

जय गणेश

□ श्री चन्दन मुनि

[भजन तर्ज—जय बोलो महावीर]

जय-जय हो साधक मुनिवर की।
समता के धारक ऋषिवर की॥
गुरु-गणेश नाम ये प्यारा था।
भक्तो को एक सहारा था॥
आशा के पूरक गुरुवर की॥१॥
ये मुखवस्त्रिका बधवा करके।
श्रद्धा की सुधा पिला करके॥
जय खादीधारी गुणिवर की॥२॥
हो श्रद्धा दीप जन-जन के।
आलोक किरण हो मन-मन के॥
जय गुरु बसन्त रत्नाकर के॥३॥
श्रद्धा से जो गुण गाता है।
जीवन मे सुख प्रगटाता है॥
मुनि चन्दन जय हो जयवर की॥४॥

□□

गुरुदेव के परमभक्त धर्मप्रेमी सुश्रावक

श्रीमान अनराज जी साहब सांखला

[बेंगलोर]

धर्मशीला सुश्राविका

श्रीमती चांदकवर बाई सांखला

[धर्मपत्नी—श्रीमान अनराज जी साहब सांखला (बेंगलोर)]

तपो-तेज का चमत्कारी व्यक्तित्व

□ श्री अजित मुनि 'निर्मल'

मैंने देखा कि जब-जब भी श्रद्धा का जन्म हुआ है, समर्पण स्रोत हमेशा प्रसन्न हो उठे है।

मैंने पाया कि जब-जब भी चेतना के आयाम जागे है, भरम के साये दूर-दूर तक उज्ज्वलता मे परिवर्तित हो गये है।

मैंने सोचा कि विभु-व्यक्तित्व के लिए कुछ भी तो असामान्य नही लगता है।

ऐसा ही एक समीकरण तपो व्यक्तित्व स्व० श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज के नामाकन के रूप मे हम सभो के सन्मुख आया। जिन्हे भक्त हृदय 'बाबाजी महाराज' 'कर्णाटक गज केशरो' तथा 'खादी वाले महाराज' के नाम बोध से परिचित करते हैं। वह प्रभापु ज आज भी प्रभासित है, उनके अनुयायियो की अटूट आस्था मे उनकी नाम ज्योति आज भी लहराती है।

वे तपस्वी थे, तपस्या ही उनका वैभव था। वे तप के लिए ही जनमे थे, उन्होने तप को ही जीवन समझा था। उन्होने जिनवाणी के उद्घोष "अहिसा-सजमो-तवो" को जन जीवन की साधना बनाने का प्रमुख प्रयास किया था। किसी भी आशा-विश्वास के साथ जिसने भी आपका सान्निध्य दर्शन लाभ किया उसे एक ही स्पष्ट आदेश रहता, कि 'तप करो! तप से ही कर्मान्तराय समाप्त होती है।' आपने तप की ज्योति जगाई, उसका चमत्कार प्रत्यक्षत जन-मानस को मिला भी।

मेरे जैसे अन्य कई भाई-बहनो को आपके दर्शन का अवसर नही मिल पाया। किन्तु मैंने सुना अवश्य है कि उनके नाम की 'मानता' आज भी तत्काल फलवती होती है। अनेको निराश-हताश मन-जीवन के आगन मे वाछित वरदान की ऋतु महक उठी है। ऐसो के लिए तपस्वी जी महाराज 'भगवान' की विरुद-शक्ति रहे।

दक्षिणापथ का क्षेत्र ऋणी रहेगा कि उन्होने मिथ्यात्व के मोहक नशे को समाप्त करके शाश्वत सम्यक्त्व की ओर जन-रुचि को मोडा। सम्यक्त्व की सत्य प्ररूपणा करना भी जिनाराधक की एक विशिष्टता प्रमा-

धर्मशीला सुश्राविका

श्रीमती चांदकवर बाई सांखला

[धर्मपत्नी—श्रीमान अनराज जी साहब साखला (बेंगलोर)]

तपो-तेज का चमत्कारी व्यक्तित्व

☐ श्री अजित मुनि 'निर्मल'

मैंने देखा कि जब-जब भी श्रद्धा का जन्म हुआ है, समर्पण स्रोत हमेशा प्रसन्न हो उठे है।

मैंने पाया कि जब-जब भी चेतना के आयाम जागे है, भरम के साये दूर-दूर तक उज्ज्वलता मे परिवर्तित हो गये हैं।

मैंने सोचा कि विभु-व्यक्तित्व के लिए कुछ भी तो असामान्य नही लगता है।

ऐसा ही एक समीकरण तपो व्यक्तित्व स्व० श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज के नामाकन के रूप मे हम सभी के सन्मुख आया। जिन्हे भक्त हृदय 'बाबाजी महाराज' 'कर्णाटक गज केशरी' तथा 'खादी वाले महाराज' के नाम बोध से परिचित करते हैं। वह प्रभापु ज आज भी प्रभासित है, उनके अनुयायियो की अटूट आस्था मे उनकी नाम ज्योति आज भी लहराती है।

वे तपस्वी थे, तपस्या ही उनका वैभव था। वे तप के लिए ही जनमे थे, उन्होने तप को ही जीवन समझा था। उन्होने जिनवाणी के उद्घोष "अहिंसा-सजमो-तवो" को जन जीवन की साधना बनाने का प्रमुख प्रयास किया था। किसी भी आशा-विश्वास के साथ जिसने भी आपका सान्निध्य दर्शन लाभ किया उसे एक ही स्पष्ट आदेश रहता, कि 'तप करो। तप से ही कर्मान्तराय समाप्त होती है।' आपने तप की ज्योति जगाई, उसका चमत्कार प्रत्यक्षत जन-मानस को मिला भी।

मेरे जैसे अन्य कई भाई-बहनो को आपके दर्शन का अवसर नही मिल पाया। किन्तु मैंने सुना अवश्य है कि उनके नाम की 'मानता' आज भी तत्काल फलवती होती है। अनेको निराश-हताश मन-जीवन के आगन मे वाछित वरदान की ऋतु महक उठी है। ऐसो के लिए तपस्वी जी महाराज 'भगवान' की विरुद-शक्ति रहे।

दक्षिणापथ का क्षेत्र ऋणी रहेगा कि उन्होने मिथ्यात्व के मोहक नशे को समाप्त करके शाश्वत सम्यक्त्व की ओर जन-रुचि को मोडा। सम्यक्त्व की सत्य प्ररूपणा करना भी जिनाराधक की एक विशिष्टता प्रमा-

णित करती है। अन्ध-विश्वास मे भटकते लोगो को तपस्वी जी महाराज ने यथार्थ की दृष्टि दी और वह दृष्टि रही, सम्यक्त्व की। इस कारा की कैद से लोगो की कु ठित विवेक-बुद्धि को उन्होने मुक्ति दी। जो नास्तिक-मन धर्म को बकवास कहते थे, वही सर्वात्मना आस्तिकता के प्रति समर्पित हो गए। गुमराह को उसे मजिल से मिला दिया।

उन्होने अकेले ही इस अलख को जगाया। क्योकि आचार-निष्ठा की दृष्टि से उनके अपने कुछ नियम थे। ये नियम-मर्यादा सामान्य जनो के लिए कठोरतम सीमा निर्धारित करते थे। किन्तु तपस्वी जी महाराज इसे सत्य-श्रद्धा के लिए अनुशासन पूरित मानते थे। महावीर के दरबार मे तो मर्यादा पालन ही प्रवेश पत्र है।

आज उन परम श्रद्धास्पद कर्णाटक गज केशरी जिनशासन सूर्य तपोधन स्व० श्री गणेशमल जी महाराज के प्रति भावाजलि का श्रद्धामयी पुण्यावसर उपस्थित हुआ है। उनके तप-श्रद्धा-प्रभावना व्यक्तित्व को सघ का नमन! युग-युग का नमन! साथ ही मेरे भी मानस-नमन!

□□

महामहिम

□ मुनि सुरेश 'समता भूषण'

कभी-कभी अतीत की गहराई मे पहुँचता हूँ तो मेरी स्मृति मे कोटा सम्प्रदाय के उन महा-महिम, गरिमा मडित मुनियो, आचार्यो-विदुषी पडिता साध्वियो का सहज ही स्मरण हो जाता है जिनके आगमिक ज्ञान-कोष तेज से तथा प्रामाणिक अनुभूतियो से जैन-समाज ही नही जैनेतर बन्धु भी काफी प्रभावित थे, इतना ही नही उनके निर्देशित मार्ग पर चलने को वे कटिबद्ध भी हो जाते थे।

श्रद्धेय कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज भी उसी पावन तेजोमय श्रमण शृखला की एक कडी थे। जिनके साधनामय जीवन के अन्तिम क्षण मानव समाज के लिये आलोक देते रहे है। जिनका समग्र जीवन स्व-पर कल्याण मे व्यतीत हुआ उन आत्मा को मेरे श्रद्धा सुमन समर्पित हो।

□□

श्रद्धेय को श्रद्धांजलि

☐ मुनि भास्कर "साहित्य रत्न"
(वणी—महा०)

कर्नाटक केशरी श्रद्धेय बाबाजी श्री गणेशमल जी महाराज के पावन दर्शन का मुझे शुभावसर नही मिला किन्तु सैकडो-हजारो श्रद्धालु भक्तो, उपासको के मुँह से तपस्वीराज की महानता, आदर्श साधुता, सहज सरलता दिव्यता की प्रशसा सुनी है, सचमुच वे मानवता के लिये वरदानस्वरूप थे, सम्यक्त्व धारियो के प्राण थे।

उन तपोपूत श्रद्धेय बाबाजी महाराज (जिन्हे "सद्गुरुनाथ" कहकर पुकारा जाता है) को अल्पज्ञ की लघु श्रद्धांजलि।

☐☐

एक छोटी सी श्रद्धांजलि

☐ मुनि कमल 'शास्त्री'

प्रभु महावीर के शासन काल मे अनेक भव्य आत्माओ ने सयम, सत्य, अहिंसा के मार्ग को स्वीकार कर स्व-पर का कल्याण किया है। उसी कडी मे महान तपस्वी कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज ने अपने जीवन मे और जन-जीवन मे महावीर प्रभु के सिद्धान्त को सिद्ध करके बता दिया। जिस पर कि दुनिया विश्वास नही करती और शान्ति के लिए बाह्य दौड लगा रही थी।

उसी समय अनेक लोक मिथ्या धारणा के कारण अपने सही स्वरूप को न समझने के कारण यही मान बैठे थे कि हमारी बीमारी वैद्य, डाक्टर, हकीम ही ठीक कर सकते है। "कडाण कम्माण न मोक्ख अत्थि" इस सूत्र की ओर ध्यान दिलाया, इस प्रकार सम्यक्दर्शन का मार्ग प्रशस्त करते हुए भगवान महावीर की वाणी का अधिक से अधिक प्रचार किया। आपकी वाणी मे ओज था। जिस व्यक्ति को डाक्टर ने इन्कार कर दिया, उसका इलाज गुरुदेवश्री ने 'तप ही औषधि है' के बल पर निराशा को आशा रूप मे साकार किया। ऐसा था बाबाजी खद्दरधारी श्री गणेशमल जी महाराज का जीवन। भव्य आत्माओ को सही मार्ग पर लाने का श्लाघनीय कार्य किया है।

☐☐

भावकुसुमाञ्जलि

☐ उपदेशाचार्य श्री राजेन्द्र मुनि जी महाराज
कडा (मडा)
(मेवाड भूषण गु० श्री प्रतापमल जी म० के शिष्य)

स्थानकवासी सत परम्परा मे तपस्वीराज श्री गणेशमल जी महाराज का स्थान भी महत्त्वपूर्ण रहा है। जहाँ तक मैंने लोगो के मुँह से सुना-समझा तो पाया कि—वास्तव मे उनका जैसा नाम वैसा ही उनमे गुण था। उन्होने अपने सयमी जीवन मे आत्म साधना-आराधना के साथ परमार्थ कार्य बहुत किया था।

आज वो महान् सतात्मा हमारे बीच नही है किन्तु उनकी कठोर त्याग-तप-साधना की पावन सौरभ विद्यमान है। मैं उन महान् आत्मा के प्रति श्रद्धा पूर्वक शब्द कुसुमाञ्जलि अर्पित करता हूँ। ☐

वे युग पुरुष थे

☐ वीरपुत्र सोहन मुनि जी
(मेवाड भूषण जी म० के शिष्य)

कर्नाटक केशरी स्व० श्री गणेशमल जी महाराज का त्यागमय प्रभाव महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक मे सुमन सौरभवत् छाया हुआ था तथा वर्तमान मे भी उनके नाम का प्रभाव है।

उन्होने भगवान महावीर की वाणी का सम्यक् प्रचार किया, भूले भटके पथिको को धर्म की पवित्र राह दिखाई। वे अपने युग के एक महान् सत पुरुष थे। अपनी हृदय की असीम आस्था के साथ आदराञ्जलि अर्पित करता हूँ। ☐

अनमोल सत रत्न

☐ श्री नरेन्द्र मुनि जी "सा० रत्न"
(मे० भू० जी महाराज के प्रशिष्य)

"सद्गुरुनाथ" शब्द से ख्याति प्राप्त कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज स्थानकवासी सत समाज के एक अनमोल सत रत्न थे। उनका त्यागमय जीवन सम्पूर्ण मानव समाज लिये वरदानस्वरूप सिद्ध हुआ है।

वे जिस ओर भी परिभ्रमण करते थे, वहाँ त्याग-तपस्या की मानो झडी-सी लग जाती थी। उनका जैन समाज पर ही नही जनेतर समाज पर भी बहुत उपकार है। उन विरल विभूति के प्रति मेरे भाव सुमन असीम निष्ठा के साथ अर्पित करता हूँ। ☐

प्रे ी उदारहृदय ी ा खींवरा जी गादिया
ीला ौ० चंचलाबाई ादिया

श्रीमान खीवराज जी साहब समाज एव धर्मसेवा के कार्यों मे सदा अग्रणी रहते है। उदार हृदय होने के साथ ही बडे मिलनसार, व्यवहारकुशल तथा उद्योगपति है। आपकी धर्मशीला धर्मपत्नी सौ० चचलाबाई भी बडी सेवापरायण, दयावती, मधुर स्वभाव की हैं। प्रस्तुत प्रकाशन मे आपने ११००० रुपये का उदार सहयोग प्रदान किया है। धन्यवाद !

भावकुसुमाञ्जलि

□ उपदेशाचार्य श्री राजेन्द्र मुनि जी महाराज
कडा (मडा)
(मेवाड भूषण गु० श्री प्रतापमल जी म० के शिष्य)

स्थानकवासी सत परम्परा मे तपस्वीराज श्री गणेशमल जी महाराज का स्थान भी महत्त्वपूर्ण रहा है। जहाँ तक मैंने लोगो के मुँह से सुना-समझा तो पाया कि—वास्तव मे उनका जैसा नाम वैसा ही उनमे गुण था। उन्होने अपने सयमी जीवन मे आत्म साधना-आराधना के साथ परमार्थ कार्य बहुत किया था।

आज वो महान् सतात्मा हमारे बीच नही है किन्तु उनकी कठोर त्याग-तप-साधना की पावन सौरभ विद्यमान है। मैं उन महान् आत्मा के प्रति श्रद्धा पूर्वक शब्द कुसुमाञ्जलि अर्पित करता हूँ। □

वे युग पुरुष थे

□ वीरपुत्र सोहन मुनि जी
(मेवाड भूषण जी म० के शिष्य)

कर्नाटक केशरी स्व० श्री गणेशमल जी महाराज का त्यागमय प्रभाव महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक मे सुमन सौरभवत् छाया हुआ था तथा वर्तमान मे भी उनके नाम का प्रभाव है।

उन्होने भगवान महावीर की वाणी का सम्यक् प्रचार किया, भूले भटके पथिको को धर्म की पवित्र राह दिखाई। वे अपने युग के एक महान् सत पुरुष थे। अपनी हृदय की असीम आस्था के साथ आदराञ्जलि अर्पित करता हूँ। □

अनमोल सत रत्न

□ श्री नरेन्द्र मुनि जी "सा० रत्न"
(मे० भू० जी महाराज के प्रशिष्य)

"सद्गुरुनाथ" शब्द से ख्याति प्राप्त कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी महाराज स्थानकवासी सत समाज के एक अनमोल सत रत्न थे। उनका त्यागमय जीवन सम्पूर्ण मानव समाज लिये वरदानस्वरूप सिद्ध हुआ है।

वे जिस ओर भी परिभ्रमण करते थे, वहाँ त्याग-तपस्या की मानो झडी-सी लग जाती थी। उनका जैन समाज पर ही नही जनेतर समाज पर भी बहुत उपकार है। उन विरल विभूति के प्रति मेरे भाव सुमन असीम निष्ठा के साथ अर्पित करता हूँ। □

हार्दिक पुष्पांजलि

☐ कांति मुनि (साहित्य रत्न)
रतलाम (म० प्र०)
(मे० भू० गु० श्री प्रतापमल जी म० के शिष्य)

कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, महान् तपस्वी श्री गणेशमल जी महाराज का नाम आज भी श्रद्धा के साथ लिया जाता है। आपने अपना अमूल्य समय तप-जप मे व्यतीत किया। आपके नाम से आज भी कई भक्तो के कार्य सिद्ध होते हैं। आपकी प्रवचन शैली बडी ही प्रभाविक थी। महाराष्ट्र-कर्नाटक मे सम्यक्त्व धर्म का प्रचार आपने पूरे जोर से किया है।

कहते है—जालना शहर मे आपका चातुर्मास था वहाँ एक सर्पराज प्रतिदिन प्रवचन सुनने आता तथा मांगलिक सुनकर लौट जाता, आप उसे बडे चाव से मांगलिक सुनाते थे। यह आपकी तपस्या एव साधना का ही प्रभाव था।

ऐसे महान् तपस्वी, समकित धर्म प्रसारक, जन-जन के प्राण, कर्नाटक केशरी, श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज को मेरी भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित हो।

☐☐

☐ युवा तपोनिधि अभय मुनि "अक्षय"

स्व० कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज का पावन दर्शन का, प्रवचन सुनने का एव अभिनन्दन करने का मुझे अवसर नही मिला परन्तु कस्तूरी की महक को छिपाने पर भी कदापि छिप नही सकती है। उसी तरह बाबाजी महाराज के सयमी जीवन की महक सुनने को एवं पढने को मिली। मन को बहुत बडा स्वाभिमान हुआ कि इस प्रकार महा-तपस्वी ने कठोरतम कष्टो को झेल करके भगवान महावीर के अहिंसा धर्म को महाराष्ट्र और कर्नाटक मे फैलाने का अच्छा काम किया है। मैं अपनी ओर से भाव श्रद्धा अर्पित करता हूँ।

☐☐

हार्दिक पुष्पांजलि

□ कांति मुनि (साहित्य रत्न)
रतलाम (म० प्र०)
(मे० भू० गु० श्री प्रतापमल जी म० के शिष्य)

कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी, महान् तपस्वी श्री गणेशमल जी महाराज का नाम आज भी श्रद्धा के साथ लिया जाता है। आपने अपना अमूल्य समय तप-जप मे व्यतीत किया। आपके नाम से आज भी कई भक्तो के कार्य सिद्ध होते हैं। आपकी प्रवचन शैली बडी ही प्रभाविक थी। महाराष्ट्र-कर्नाटक मे सम्यक्त्व धर्म का प्रचार आपने पूरे जोर से किया है।

कहते है—जालना शहर मे आपका चातुर्मास था वहाँ एक सर्पराज प्रतिदिन प्रवचन सुनने आता तथा मांगलिक सुनकर लौट जाता, आप उसे बडे चाव से मांगलिक सुनाते थे। यह आपकी तपस्या एव साधना का ही प्रभाव था।

ऐसे महान् तपस्वी, समकित धर्म प्रसारक, जन-जन के प्राण, कर्नाटक केशरी, श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज को मेरी भावभीनी श्रद्धान्जलि अर्पित हो।

□□

□ युवा तपोनिधि अभय मुनि "अक्षय"

स्व० कर्नाटक केशरी श्रद्धेय श्री गणेशमल जी महाराज का पावन दर्शन का, प्रवचन सुनने का एव अभिनन्दन करने का मुझे अवसर नही मिला परन्तु कस्तूरी की महक को छिपाने पर भी कदापि छिप नही सकती है। उसी तरह बाबाजी महाराज के सयमी जीवन की महक सुनने को एवं पढने को मिली। मन को बहुत बडा स्वाभिमान हुआ कि इस प्रकार महा-तपस्वी ने कठोरतम कष्टो को झेल करके भगवान महावीर के अहिंसा धर्म को महाराष्ट्र और कर्नाटक मे फैलाने का अच्छा काम किया है। मैं अपनी ओर से भाव श्रद्धा अर्पित करता हूँ।

□□

वे चमकते सितारे थे

□ विदुषी महासती प्र० श्री मानकुंवर जी महाराज
(जालना—महा०)

भारतवर्ष मे समय-समय पर महान्-महान् सन्त रत्न हुए थे, हुए है तथा भविष्य मे भी होते रहेगे। उसी सन्तरत्न की शृखला मे पूज्य गुरुदेव कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी श्री गणेशमल जी महाराज का तेजस्वी जीवन आता है। वे अपने समय के एक अनमोल चमकते सितारे थे।

उनका सयमी जीवन सरिता-सा निर्मल तथा मधुर फलो सा आत्म-गुणो का पूरक था। वे जिस सन्देश का प्रचार-प्रसार करते उस—"भगवान महावीर की वाणी" का आचरण करने के लिये स्वय तत्पर रहने का प्रयत्न करते थे। वे ज्ञान-दर्शन-चारित्र की परिपालना करने के लिये कटिवद्ध रहते थे। तप तथा जप ये दोनो उनके सुनियोजित कार्य क्षेत्र थे। एकान्तर उपवास के साथ प्रति माह मे एक तेला (अट्ठम) करना उनकी भीष्म प्रतिज्ञा थी और वैसा ही वे करते थे। वे कभी-कभी फरमाते—

"मैं जो साधना-आराधना करता हूँ वह यदि लोकैषणा भावना से रहित (मुक्त) होकर करूँगा तो उससे कर्मनिर्जरा विशेष होगी और यदि यश-कीर्ति प्रतिष्ठा की चाहना रखकर करता हूँ तो कर्म बन्धन ही बढेगा।"

आप अपने प्रति प्रवचनो मे आगम-वाणी के द्वारा सम्यक्त्व की प्ररूपणा करते। इतना ही नही सैकडो-हजारो श्रोताओ को आपने सम्यक् राह पर स्थापित किया। बाहर कुछ, भीतर कुछ—ऐसा दुहरा जीवन जीना उन्हे कतई पसन्द नही था। उन महान् परमोपकारी सत-आत्मा के प्रति जितना कहा-सुना-लिखा जाय उतना ही अल्प है। उन आत्मा को भव-भव मे आत्म-साधना की राह मिले तथा वे जगत् मे भटकने वाली आत्माओ को पथ पर लावें, ऐसी मेरी शुभ कामना है।

□□

ज्योतिर्मय महान् विभूति

□ महासती शान्तिसुधा एव कान्तिसुधा जी महाराज

जैन जगत् की ज्योतिर्मय महान् विभूति बाल-ब्रह्मचारी, कोटा सम्प्रदाय, के स्थानकवासी परम्परा के महान् सितारे, घोर तपस्वी, कर्नाटक केशरी,

श्रद्धाष्टक

□ तत्त्व व्याख्याता गौतम मुनि शास्त्री
(मे० भू० गु० श्री प्रतापमल जी म० के प्रशिष्य)

[१]

धन्य धन्य थे पूज्यवर,
जिनका नाम गणेश।
शत - सहस्रो भक्त गण,
करते याद हमेश॥

[२]

माता 'धूलि' नन्द सुहाये,
'पूनमचद' कुल उजियारे।
बिलाडा के सुमन सुवासित,
दीन-दयालु वे प्यारे॥

[३]

प्रेमराज गुरु के चेले बन,
ज्ञान खजाना पाया था।
त्याग-तपस्या से जीवन को,
जिनने दिव्य बनाया था॥

[४]

'गणेश' नाम है अति आकर्षक,
ऋद्धि सिद्धि दाता है।
भूत-प्रेत सब दूर भगे थे,
'गणेश' सौख्य प्रदाता है॥

[५]

कर्नाटक की महाविभूति,
महाराष्ट्र के सत प्रवर।
खद्दरधारी, तपी-जपी थे,
उच्चमति सम्पन्न गुणिवर॥

[६]

गौ माता के रक्षक पूरे,
धर्मवीर फक्कड मुनिराज।
देह नही है वर्तमान मे,
गुण से याद करें अब आज॥

[७]

अज्ञानी को मिथ्यामति को,
समकित का शुभदान दिया।
भूले-भटके जन मानस को,
महावीर का ज्ञान दिया॥

[८]

घर-घर दया धर्म का झडा,
आपश्री ने फहराया।
स्थान-स्थान पर गौशाला का
अभ्युदय भी हो पाया॥

[९]

गुरु 'नन्द' 'प्रताप' कृपा से
अष्टक भेंट चढाता हूँ।
'गौतम' श्रद्धा गौरव गाकर,
श्रद्धा सुमन चढाता हूँ॥

□□

वे चमकते सितारे थे

☐ विदुषी महासती प्र० श्री मानकुवर जी महाराज
(जालना—महा०)

भारतवर्ष मे समय-समय पर महान्-महान् सन्त रत्न हुए थे, हुए है तथा भविष्य मे भी होते रहेगे। उसी सन्तरत्न की शृखला मे पूज्य गुरुदेव कर्नाटक केशरी, खद्दरधारी श्री गणेशमल जी महाराज का तेजस्वी जीवन आता है। वे अपने समय के एक अनमोल चमकते सितारे थे।

उनका सयमी जीवन सरिता-सा निर्मल तथा मधुर फलो सा आत्म-गुणो का पूरक था। वे जिस सन्देश का प्रचार-प्रसार करते उस—"भगवान महावीर की वाणी" का आचरण करने के लिये स्वय तत्पर रहने का प्रयत्न करते थे। वे ज्ञान-दर्शन-चारित्र की परिपालना करने के लिये कटिवद्ध रहते थे। तप तथा जप ये दोनो उनके सुनियोजित कार्य क्षेत्र थे। एकान्तर उपवास के साथ प्रति माह मे एक तेला (अट्ठम) करना उनकी भीष्म प्रतिज्ञा थी और वैसा ही वे करते थे। वे कभी-कभी फरमाते—

"मैं जो साधना-आराधना करता हूँ वह यदि लोकैषणा भावना से रहित (मुक्त) होकर करूँगा तो उससे कर्मनिर्जरा विशेष होगी और यदि यश-कीर्ति प्रतिष्ठा की चाहना रखकर करता हूँ तो कर्म बन्धन ही बढेगा।"

आप अपने प्रति प्रवचनो मे आगम-वाणी के द्वारा सम्यक्त्व की प्ररू-पणा करते। इतना ही नही सैकडो-हजारो श्रोताओ को आपने सम्यक् राह पर स्थापित किया। बाहर कुछ, भीतर कुछ—ऐसा दुहरा जीवन जीना उन्हे कतई पसन्द नही था। उन महान् परमोपकारी सत-आत्मा के प्रति जितना कहा-सुना-लिखा जाय उतना ही अल्प है। उन आत्मा को भव-भव मे आत्म-साधना की राह मिले तथा वे जगत् मे भटकने वाली आत्माओ को पथ पर लावें, ऐसी मेरी शुभ कामना है।

☐☐

ज्योतिर्मय महान् विभूति

☐ महासती शान्तिसुधा एव कान्तिसुधा जी महाराज

जैन जगत् की ज्योतिर्मय महान् विभूति बाल-ब्रह्मचारी, कोटा सम्प्रदाय, के [illegible]सी परम्परा के महान् सितारे, घोर तपस्वी, कर्नाटक केशरी,

सद्गुरुनाथ परम दयालु, महान् कृपालु, असीम श्रद्धा के केन्द्र, पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज का जीवन आत्म-सुधारक तो था ही साथ ही पर-कल्याण मे भी पूर्ण रूप से प्रयत्नशील था। जग हितेच्छु, स्पष्ट वक्ता के साथ ही लोक हित की कामना से भरपूर जिनका हर पल-क्षण व्यतीत होता था।

उनमे स्वय मे तप-त्याग की निर्मल सरिता बहती थी तथा जो आपके निकट आता उसे भी सामायिक, दया, सम्यक्त्व का पाठ देते। अनेको आत्माओ ने आपके निकट पहुँचकर मिथ्यात्व से मुक्ति ली तथा सम्यक्त्व का वरण किया। आपका त्यागमय जीवन प्रतिपल तप-जप की साथ ही आत्म चितन-शास्त्र स्वाध्याय की सबल प्रेरणा देता था।

आपके सन्देशो से प्रेरित होकर ही मैंने (शान्ति सुधा) तथा मेरी ससारी बहन कान्ति सुधा दोनो ने दीक्षा स्वीकार की। यह महान् कृपा उन्ही परम गुरुदेव की है। मेरे तथा कान्ति सुधा के जीवन मे अनेको बार दु खद तथा भयकर प्रसग आये पर गुरुदेव की शुभ कृपादृष्टि कहो किवा उनका निमित्त तथा हमारा पुण्य प्रबल कहो जो सभी कठिनाइयो से बचते गये। ऐसे महामना मुनिपु गव के प्रति हृदय की असीम आस्था के साथ श्रद्धाजलि।

□□

सश्रद्धा-वन्दन

यह समाचार सुन हृदय उत्साह से भर गया कि आप कर्नाटक केशरी स्व० श्री गणेशमल जी म० सा० की जन्म शताब्दी के उपलक्ष मे उनके जीवन और विचार पर एक पुस्तक प्रकाशित कर रहे हैं।

एक तपस्वी के प्रति यह उचित ही तरह की श्रद्धाजलि है। साधना-विधि और उपलब्धि को लेकर सविस्तार चर्चा हो सके तो निश्चित ही अध्यात्म क्षेत्र के साधको के लिए आपकी यह पुस्तक बहुत उपयोगी हो सकेगी।

जिन आध्यात्मिक सिद्धियो को श्री गणेशमल जी म० सा० उपलब्ध हुए, वह सर्व विदित है। यही आध्यात्मिक उपलब्धि जीवन की परम सम्पदा है। जिसका एहसास तरुण पीढी को हो सके ऐसा रूप-स्वरूप आपके परिश्रम पूर्ण प्रकाश से प्राप्त हो यह परमात्मा से प्रार्थना है।

श्री गणेशमलजी म० सा० समय के धारणा के ज्योति थे, जिनकी

सयम माधुरी की मोहकता से स्वत ही पावन रग मे हर प्राणी सरोवार हो जाता था और आज भी उन्ही स्मृतियो मे रगकर हृदय आनन्दित रहता है।

उस महापुरुष की वाणी ने जादुई करिश्मा दिखाया है। उनके उपदेशो से प्रभावित होकर लोक दुर्व्यसनो से मुक्त हुए और इसी कारण साम्प्रदायिक कट्टरता को मिटाने मे आप अति अग्रणी रहे। आपका त्यागमय जीवन इस भौतिकवाद के युग मे जैन श्रमणो के प्राचीन त्यागमय रूप का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

श्री गणेशमल जी म० सा० सही अर्थ मे अमानवीय अधकार को दूर करने वाले दिवाकर ही थे। "सर्वे भवन्तु सुखिन" प्राणी मात्र आनदित हो, यह उनकी हार्दिक भावना थी एव इसके लिए उन्होने जीवन भर एक सच्चे धर्मयोगी रूप मे कार्य किया। सामाजिक सघटन एव एकता के लिए उनकी दी हुई प्रेरणा आज की भी तरुण पीढी को मार्गदर्शन करती रहती है।

नरक रूपी कुण्ड मे डूबते हुए प्राणी को धर्म-अधर्म के प्रगट करने तत्पर गुरु से अन्य पिता-माता और परिवार का कोई भी व्यक्ति समर्थ नही है। श्री गणेशमल जी म० सा० हमेशा-हमेशा यही कहते थे कि धर्म का निवास, शास्त्रो, ग्रन्थो और मन्दिर एव उपाश्रयो मे नही किन्तु मनुष्य के आत्मा मे है। सरल और पवित्र आत्मा मे ही धर्म निवास करता है। इसलिए सैकडो नर-नारी आपके धर्मोपदेश का पानकर अपने जीवन का हितवाहिनी दिशा का योग्य चुनाव किया है।

श्री गुरुदेव सबको सम्यक्त्व देते थे। वह किसी का खण्डन नही करते थे। गुरुदेव का त्याग, तप पर अधिक जोर था। हर समय पर किसी से भी यही कहते कि मोह उतारो, त्याग सीखो। त्याग बिना मानव जीवन व्यर्थ है। मानव का आयुष्य तो नदी के पूर समान है, जो जल नदी का चला जाता है, पलटकर नही आता—वैसे ही मनुष्य की बीती हुई उम्र पलटकर वापस नही आती। वे हमेशा कहते—

करो परोपकार सदा, मरे बाद रहोगे जिन्दा।
नाम जिनका जिन्दा रहे, उनका तो मरना क्या है॥

अन्त मे फिर एक बार समस्त शुभकामनाओ सहित आपकी सफलता के लिए सर्वशक्तिमान प्रभु से अनुरोध !

—मदनलाल कोटेचा
(व्यवस्थापक)
(श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन
श्रावक सघ, जालना)

कोटि-कोटि वन्दन

घोटी (महा०) का प्रसग है, प्रवचन हॉल खचाखच भरा हुआ था, महान श्रमणरत्न, तपस्वीराज, गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज जब व्याख्यान हॉल मे पधारे तो जनता को ऐसा लगा, जैसे—"देवलोक से अवतरित हुई पुण्यात्मा ही व्यास-पीठ की ओर पधार रही है।" जनता भाव विभोर हो जय-जयकार के नारो से प्रवचन मण्डप को गु जायमान करने मे सलग्न थी।

वे पुण्यात्मा और कोई नही थे, मेरे असीम श्रद्धा के केन्द्र, कर्नाटक केशरी पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज थे। "आत्म-साधको के चरणो मे जनता अनायास ही झुक जाती है, वे जो साधना करते है, चमत्कार दिखाने के लिये नही अपनी कर्मनिर्जरा के लिये। लगभग ३१ वर्ष तक एकान्तर उपवास-एकासने-तेले (अट्ठम) की अत्यन्त कठोर तपस्या करने वाले, अभिग्रह आदि भी लेने वाले थे, वे गुरुदेव। तप-जप के कारण ही जिन्हे अमोघ शक्ति प्राप्त हुई, मुखकमल दिव्य तेज से चमकता था, शरीर स्वर्ण-सा देदीप्यमान था, जिनकी आत्म-शक्ति बडी गजब की थी।

जिनवाणी के अमर सन्देशवाहक, जिनके वचनो मे स्पष्टत दृढ निष्ठा झलकती थी। जिनके जीवन का एक-एक श्वास तथा रक्त की एक-एक बूँद महावीर-वाणी के अमृत रस से लबालब भरी थी। स्वाध्याय-चिंतन जिनके जीवन का प्राण था। आगम लेखन भी जिन्होने बडी तन्मयता से किया था। लगभग ३२ आगम सूत्र जिन्होने अपने हाथो से लिखे। शास्त्र सेवा मे क्षण-क्षण का उपयोग करके जिन्होने अपना जीवन धन्यशाली बनाया, ससार के लिये वे दीपस्तम्भ के समान थे। "सम्यक् पुरुषार्थ से मनुष्य कठिन से कठिन कार्य भी कर सकता है।" इसका साक्षात्कार करके गुरुदेव ने अपने जीवन काल मे दिखाया।

नासिक क्षेत्र को भी पूज्य गुरुदेव के तीन चातुर्मासो का सुहाना लाभ मिला है। क्षेत्रोद्धारक, अनन्त उपकारी गुरुदेव पू० श्री प्रेमराज जी महाराज का अनन्त-अनन्त उपकार है जिन्होने इस क्षेत्र को धर्म प्रभावना से आप्लावित किया साथ ही जिनशासन-प्रभावक, महान् पुण्य पुञ्ज, अनमोल ज्ञान-रत्न श्रमण श्री गणेशमल जी महाराज को दीक्षा देकर। यह अत्यन्त गौरव का विषय है कि—उन महान् आत्मा ने हजारो भटकते राहगीरो को जिन-

धर्म का प्रतिबोध देकर धर्म-मार्ग मे अग्रसर किया, प्रान्त-प्रान्त मे परिभ्रमण कर जैनत्व का झडा फहराया, उनका हम पर अनन्त-अनन्त उपकार है, ऐसे तपोधनी महान् पुण्यात्मा सन्त रत्न के चरणो मे कोटि-कोटि वन्दन।

—माणकचन्द फतेचन्द कुमट
(नासिक) (महा०)

□□

सहनशीलता के आगार

परम श्रद्धेय, कर्नाटक केशरी, पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज इगतपुरी विराजमान थे। मैं सादडी (मारवाड) सत सम्मेलन देखकर वम्बई आया, वहाँ से अपने घर चालीसगाँव जा रहा था, बीच मे ही पता लगा कि—"बाबाजी महाराज इगतपुरी विराजमान है।" दर्शन के निमित्त से तथा मेरे सालाजी से मुलाकात हो जायेगी। इसी भावना से इगतपुरी उतरा। अपने सालाजी के घर पहुँचा।

जब मैं घर पहुँचा ही था—तपस्वीराज पारणे के लिये मेरे सालाजी श्री गम्भीरमल जी छाजेड के यहाँ पधारे ही थे, मैंने भी बहराने को भावना से हाथ लम्बा किया तो महाराज ने इन्कार कर दिया। मैंने इन्कार करने का कारण पूछा—तो उन्होने फरमाया—"तुम सट्टा करते, झूठा व्यवहार-व्यापार करते हो इसीलिए तुम्हारे हाथ का आहार मैं ग्रहण नही करता।" मैंने भी परवाह न करते हुए जोश मे कह दिया—

"तुम भी क्या सत हो ? ये सत बनने के लक्षण नही हैं।"

महाराज कुछ भी नही बोले, चुपचाप चले गये। मेरे सालाजी ने मुझे कहा—तुमने अच्छा नही किया बाबाजी को ऐसा बोलकर अतएव जाकर क्षमा माँग लो, साथ ही जैसा कहे वैसा कर लो। मैं अपने सालाजी की बात मानकर, तपस्वीराज के चरणो मे पहुँचा, और बोला—"मुझे माफ करो, और पुन पधारकर मेरे हाथ से आहार ग्रहण करो।" महाराज ने "सट्टे का त्याग करो तो मैं आहार लूँ" बडे ही शान्त भाव से फरमाया। मैं उनकी सहनशीलता को देखकर दग रह गया। उसी समय बाबाजो से प्रभावित हो मैंने सट्टा नही करने का प्रत्याख्यान कर लिया। त्याग करने के बाद मेरी स्थिति सुधर गई, यह उन्ही प्रतापी तपस्वीराज का प्रभाव है। ऐसे गुरुदेव के चरणो मे अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

—राजमल चोरडिया
(अमरावती—महा०)

जैन श्रमणो मे कर्नाटक केशरी

मैंने जितना पढा, सुना तथा समझ पाया उससे यही प्रतीत हुआ कि सम्यक्त्व धर्म का यथार्थ प्रसार तथा मिथ्यात्व अन्धविश्वास मे डूबी मान्यताओ का परिहार करने वाले, दानवता की श्रेणी मे पहुँचने वाले इन्सानो को मानवता के पथ पर खडे करने वाले जैन श्रमणो मे कर्नाटक केशरी पूज्य श्री गणेशमल जी म० सा० का नाम भी हृदय कोष मे सुरक्षित है। क्योकि जिन्होने अपनी मर्यादा मे रहते हुए आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक तथा महाराष्ट्र मे जिनधर्म का तथा मुँहपत्ती का पूरे जोर से प्रचार किया है। उनके चरणो मे सश्रद्धा मेरी भी श्रद्धाजलि।

—ओमप्रकाश बी० पी० जैन
हरपुर-गोरखपुर (उ० प्र०)

□□

श्रद्धा-सुमन

कर्नाटक केशरी श्री गणेशमल जी म० सा० ने कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र मे उग्र विहार कर भगवान महावीर स्वामी की वाणी का सम्यक् प्रचार प्रसार किया। उन्होने गोशाला निर्माण तथा सातो व्यसनो के त्याग पर अधिक बल देते हुए लोगो को सही रास्ते पर लाये। वह महामनस्वी तप केशरी सद्गुरुनाथ आज हमारे बीच नही है, लेकिन उनकी त्यागमयी वाणी जन-जन मे युग-युगान्तर तक दिशा निर्देश करती रहेगी। आज भी त्यागमय जीवन की झाकी जन-जन को प्रेरित करती रहे। यह ग्रन्थ रूप पुस्तक लोगो मे अधिक लोकप्रिय बने। उन्ही महापुरुष के चरणो मे मेरी यह श्रद्धाजलि समर्पित हो।

—शातीलाल सहलोत
रतलाम (म० प्र०)

□□

महान्-उपकारी

मेरे पिता श्री भिकचन्द जी पारख का पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज से अच्छा परिचय था। बाबाजी महाराज ने जब नासिक मे चातुर्मास किया तब मेरे पिताजी को ज्ञान चर्चा मे भाग लेने को विशेष रूप से आनन्द आया।

बाबाजी महाराज खद्दरधारी थे इसीलिए उन्हे खादी वाले बाबा कहते थे। मेरे पिताजी भी खादी पहनते थे।

एकदा मेरे पिताजी के साथ मैं भी उनके दर्शनार्थ देवलाली गाँव गया, तब पूज्य गुरुदेव ने मुझे फरमाया—"तुम्हारे पिताजी खादी पहनते है तुम भी खादी पहनो और एक सामायिक प्रतिदिन करो।" मैंने उसी समय आजीवन खादी पहनने तथा सातानुसार सामायिक करने का नियम ले लिया। उससे पूर्व मुझ मे धर्म की लगन नहीवत् ही थी।

पूज्य गुरुदेव बाबाजी महाराज का महान उपकार मानूँगा जो उन्होने मेरे जीवन का निर्माण कर दिया। उनको कोटि-कोटि वन्दना करते हुए श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

—वर्धमान भिकचन्द पारख
(नासिक—महा०)

□□

गुणी गणेश

ध्यान धनू तन धार लियो, तपतीर सुसयम सनाह सज्यो।
ज्ञान सुढाल धरी उर मे, सत शील सुरगन शक वज्यो॥
कामरु क्रोध धस्यो धरणी, निरवृत्ति लखी अग पथ लज्यो।
"रूप" सुधन्य "गणेश मुनि", धुनि धार के पारसनाथ भज्यो॥

दोहा— "वसन्त मुनि" सेवावरी, सरस सोभायो पाट।
ता प्रताप कर्णाटके—रूप जमायो ठाट॥
"रतन" जतन से यह सजा—स्मृति ग्रन्थ सुचग।
श्रद्धाजली मुनि रजत की—गुणी गणेशी सग॥

—विजयराज जैन
(विरक्त)

□□

पूज्य श्री गणेशमलजी म० सा० का जीवन दर्शन

□ डॉ० श्रेणिकराज मेहता
(कोप्पल)

ससार मे नित्य प्रति कई प्राणी जन्म लेते है और काल के गाल मे समा जाते है। लेकिन उनका जन्म लेना और मृत्यु को प्राप्त होना समाज के लिए कोई विशेष महत्व नही रखता। किन्तु उन असख्य प्राणियो मे बिरले ही कुछ ऐसे पराक्रमी और प्रतिभासपन्न व्यक्ति होते है जिनका जीना और मरना समाज और देश के लिए बहुत महत्व रखता है और उस पर गौर करना पडता है।

ऐसे ही महान पुरुषो मे एक थे हमारे पूज्य गुरु गुणेशमलजी महाराज, जिनका समूचा जीवन ही एक आन्दोलन और क्राति का मूर्त रूप था। आपका जन्म मरुधर देश मे बिलाडा ग्राम मे श्रीमान पूनमचन्दजी ललवानी के घर मे स्वनाम धन्य श्रीमती धूलीबाई की रत्नकुक्षि से विक्रम सवत १९३९ कार्तिक सुद ६ को हुआ।

आप एक कुशल और परिश्रमी व्यापारी थे। नैतिक परम्पराओ को निभाते हुए परिश्रम की कमाई पर अपना जीवन निर्वाह करते थे तथा जीवन मे एक सच्चे स्वामिभक्त और अपने सेठ को सच्ची सलाह देने वाले एक कुशल व्यवस्थापक भी थे। उनकी नेक और सच्ची सलाह को अमान्य करने पर एक स्वाभिमानी पुरुष की तरह उस कार्य से इस्तीफा देकर निवृत्त होने वाले एक निर्भीक स्वाभिमानी व्यक्ति भी आप थे।

दुनिया की इस दुरगी नीति और आचार व व्यवहार देखकर आपके जीवन मे एक नया मोड और परिवर्तन आया। कधे पर कपडे की गठरी लेकर ग्राम-ग्राम मे घूमकर कपडे मापने वाला एक कुशल बजाज जीवन के सच्चे तथ्यो को त्याग और तपस्या के मापदण्डो से मापने लगा। हमारे चरितनायक पूज्य गुरुदेव ने ससार की असारता को समझ कर जीवन मे आत्मा को उज्ज्वल बनाने का सकल्प ले लिया। दिन प्रतिदिन उनके डग आत्मा का चरम लक्ष्य प्राप्त करते हुए तप, सयम, ध्यान और साधना के मार्ग मे निरन्तर बढते ही गये। आपने ३४ वर्ष की तरुण अवस्था मे तपस्वी मुनि श्री प्रेमराजजी म० सा० के पास दीक्षा ग्रहण की।

वे शास्त्रो की बातो के केवल गूढ ज्ञाता ही नही बल्कि उनमे निहित गूढ मर्मों के जानकार, पालनहार और सच्चे अर्थों मे जीवन की इस लम्बी-चौडी प्रयोगशाला मे परीक्षण करके उसके सही अर्थों के सशोधन कर्त्ता और पालनकर्त्ता भी थे ।

जिस प्रकार महाभारत की कथा मे धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने गुरु द्रोणाचार्य से अपने सभी पाँचो पाडव एव सौ कौरव भाइयो के साथ "सत्य बोलो" का एक छोटा-सा पाठ पढा था और केवल उसके मौखिक शाब्दिक अर्थ का याद हो जाना ही काफी नही मानकर जब तक जीवन मे उसे नही उतार लिया और सत्य बोलने का जीवन मे सफल प्रयोग करके नही दिखला दिया तब तक "सत्य बोलो" का पाठ याद हो गया, ऐसा नही कहा । उसी प्रकार हमारे चरितनायक पूज्य गुरुदेव ने भी शास्त्रो मे उल्लखित छोटी से छोटी बात पर भी पूरी लगन के साथ जोर दिया और जीवन मे उसका सफल परीक्षण एव प्रयोग भी किया, बाद मे ही उसका उपदेश अन्यो को दिया ।

उन्होने शास्त्रो मे देखा कि तपस्या रोग नाश करने की अचूक दवा है । इस बात पर उनकी अटल श्रद्धा जम गई । बस, उन्होने जीवन मे स्वय पर इस रामबाण औषधि का प्रयोग किया और निरन्तर एक लम्बी अवधि तक एकान्तर की तपस्या की आराधना करते रहे और उनके ससर्ग मे जो भी आया उन हजारो भक्तो को, भाई-बहनो को तप का ही उपदेश दिया । ऋद्धिधारी सन्त की महिमा से हजारो के रोग शोक के कष्ट टले और असख्य भूत-पिशाचो के कष्टो का निवारण हुआ । यह सब तपस्या की महिमा थी और उस पर अटल विश्वास की महिमा से अनेको को शारीरिक, मानसिक एव आत्मिक शाति प्राप्त हुई ।

पूज्य महात्मा गाधी जी की तरह आप भी एक प्रकार से राष्ट्र सत थे । स्वतन्त्रता सग्राम की देशव्यापी लहर का प्रभाव आप पर भी हुआ और आप उसका औचित्य भी समझने लगे और उसे पूरा करने का उनका अपना एक अनूठा तरीका ही निकल पडा ।

मिल के कपडो के महारभ से बचने और तत्कालीन विदेशी कपडो का बहिष्कार करने के लिये एव स्वदेशी का प्रचार करने के लिए उन्होने खादी का जोर-शोर से प्रचार किया । उन्होने स्वय खादी को अपनाया और अनेक भक्तो को भी प्रेरित करके बहुतो को आजीवन शुद्ध खादी पहनने का नियम भी दिलवा दिया । खादी के प्रचार करने का उनका अनूठा तरीका था । उन्होने स्वय प्रतिज्ञा कर ली कि जनरल व्याख्यान एव गोचरी के समय के

अलावा वे मिल के कपडे पहनने वालो से बातचीत नही करेंगे। उनके इस अनूठे सत्याग्रह के प्रभाव से हजारो लोग महारभ से निवृत्त होकर अल्पारभ की ओर मुडे। खादी के प्रचार एव प्रसार के लिए हजारो रुपयो की खादी श्री महावीर जैन खादी भण्डार से श्रीमान रगलाल जी नेमीचन्द जी कोठारी, जालना वालो की कुशल व्यवस्था और देख-रेख मे इच्छुक श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ मे बाँटी जाती थी वह भी इस शर्त पर कि अमुक-अमुक कपडे के लिए अमुक-अमुक प्रकार का उपवास, आयबिल, गरम जल का इस्तेमाल, विगयो के त्याग, खद के प्रत्याख्यान आदि-आदि करने पडे गे। "आम के आम और गुठली के भी दाम" की कहावत तो यहाँ चरितार्थ होती है। एक पथ दो काम भी इसे ही कहते है। अल्पारभ का पालन हुआ, जीवन मे सादगी आई और विदेशी वस्त्रो का अवाछनीय मोह छूटा और साथ ही साथ तपस्या करके सचित पापो को नाश करने का मौका मिला तथा आर्थिक पहलू से विचार करने पर खादी एव स्वदेशी प्रचार से खादी के ग्रामोद्योग के माध्यम से हजारो की रोजी रोटी का सवाल भी कुछ अश मे हल हुआ। अभी तक खादी की उस पुनीत परम्परा को तपस्वी मुनि श्री मिश्रीलाल जी म० सा० की प्रेरणा से श्री गुरु-गणेश खादी भण्डार, जालना द्वारा कायम रखा गया है।

गुरुदेव सच्चे अर्थों मे अहिंसा के पुजारी थे। उनकी अहिंसा वीरो की अहिंसा थी। वे सच्चे गो-प्रेमी, गोभक्त और गोपाल थे। शास्त्रो मे श्रावको की महिमा उनके गोकुल और गायो की सुव्यवस्था से थी। उसी महिमा को पुन स्थापित करने का प्रयास किया। मूक पशुओ पर होते हुए अत्याचार को देखकर उनकी आत्मा अनुकम्पा से जाग उठी और उन्होने ललकार कर अन्याय के विरुद्ध अपना अहिंसा का बिगुल बजा दिया।

महाराष्ट्र मे चौशाला ग्राम मे चातुर्मास काल मे सायकाल प्रतिक्रमण के बाद वराडा मे आप बैठे ही थे कि सामने से एक कसाई कुछ गायो को कत्लखाने ले जा रहा था। मृत्यु के मुँह के समीप जाती हुई पशुओ की करुण चीत्कार से आपकी अत्मा दहल उठी। उसी समय उन्होने सिंह गर्जना करते हुए सामने बैठे हुए श्रावको को ललकार कर कहा—बैठे-बैठे क्या देखते हो? जाओ, उन गायो को मृत्यु के मुख से छुडा क्यो नही लेते?

बस, उनका साहस भरा इतना कहना ही काफी था। तत्काल श्रावक लोग गये और उन पशुओ को छुडा लाये। उस निर्मम कसाई ने पहले तो बहुत धूम मचाई लेकिन गुरुदेव के तेजस्वी दैदीप्यमान चेहरे के सामने एव निर्भीक प्राणी रक्षा के आह्वान के समक्ष उसकी एक न चली। गुरुदेव का

स्पष्ट कथन था कि प्राण चाहे भले जाए लेकिन शरण मे लाये गये इन प्राणियो का बाल भी बाँका नही होने पावे। फिर गाँव के पटेल, पटवारी, मुखिया आदि के समझाने पर वह कसाई हिंसा-त्याग के मर्म को जानकर चला गया।

उसी स्थान पर जीवदया और प्राणीरक्षा की एक नयी सस्था श्री महावीर जैन गोशाला, चौशाला को स्थापना ता० ३-३-५४ को हुई। उत्तरोत्तर उनका ध्यान जीवदया पर बढता गया और फलस्वरूप सोलापुर, रायपुर, कोप्पल, औरगाबाद, जालना आदि कई स्थानो पर गोरक्षण सस्थाओ की स्थापना हुई। □

हमारे जीवन प्रणेता .

तपस्वी कर्नाटक गजकेशरी जी म० सा०

□ निर्मल कुमार लोढा (निम्बाहेडा)

सत विश्व के लिए आशीर्वाद है। पाप से झुलसती हुई दुनियाँ को शान्ति प्रदान करने वाले देवदूत हैं। उनकी तपयुक्त साधना द्वारा जन-जीवन आलोकित एव प्रकाशित होता है। भारतवर्ष को इस वसुन्धरा पर अनेक महापुरुषो एव सन्तो ने जन्म लिया। अज्ञानान्धकार मे भटकते जन-मानस को पुकारा एव प्रेरणा दी। इसीलिए प्रस्तुत शायर की आतुर पुकार कहती हैं

कुछ गुल तो दिखलाकर बहार हैं अपनी जाते।
कुछ गुल फक्त काँटो की तरह नजर आते।
कुछ गुल हैं फूले नहीं जामे मे समाते।
गुञ्चे बहुत ऐसे हैं जो खिलने भी नहीं पाते।

परम श्रद्धेय कर्नाटक गज केशरी सन्तरत्न खद्दरधारी पूज्य गुरुदेव श्री गणेशमल जी महाराज भी विश्व की महान् विभूति थे। भारत के दक्षिण भागो मे अहिंसा का जो महान कार्य किया है वह जन-मानस कभी भी नही भूल सकता है। पूज्यश्री की प्रेरणा से अनेक गोशालाओ का निर्माण हुआ। आपश्री की प्रेरणाओ से अनेको के जीवन मे नूतनमयी सचार हुआ। गुरुदेव श्री खादी के प्रबल समर्थक थे। आपने खादी पहनने की प्रेरणायें दी। मुझे यद्यपि गुरुदेव के दर्शन का अवसर नही मिला—लेकिन आपके द्वारा किये गये कार्य जन-जन को आनन्दित तथा मगलमयी पथ की ओर अग्रसर होने की प्रेरणाएँ देते रहेगे। पूज्यश्री की स्मृति मे ग्रन्थ का प्रकाशन हो रहा है यह जानकर प्रसन्नता हुई। मैं भी अपनी विनम्र श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ। □

गुरु-गणेश-गरिमा

□ महासती मानकुवर जी
(महासती प्रभाकुवर जी महाराज की सुशिष्या)

रत्नैव भाति अखिले महामुनिषु !
ब्याति जगत्सु कर्णाटककेशरीव !
प्राप्त तु गौरवपद श्री तपो विभूति !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥१॥

तुभ्य नम सकल-विघ्न-विदारकाय !
तुभ्य नम सकल-सौख्य-प्रदायकाय !
तुभ्य नम पतित पावन भावनाय !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥२॥

तुभ्य नम भवि भवोदधि तारणाय !
तुभ्य नम गहन ज्ञान प्रदायकाय !
तुभ्य नम सकल प्राणि सुरक्षणाय !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥३॥

तुभ्य नम सतत खद्दरधारकाय !
तुभ्य नम परम सयम पालकाय !
तुभ्य नम सरल मार्ग प्रदर्शकाय !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥४॥

तुभ्य नम करुण स्रोत समुद्रकाय !
तुभ्य नम शत सहस्र गुणाधिकाय !
तुभ्य नम अभयदान-प्रदायकाय !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥५॥

तुभ्य नम विकल पन्थ विभञ्जनाय !
तुभ्य नम विषयभोग प्रहारकाय !
तुभ्य नम निरतध्यान-निमग्नकाय !
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥६॥

तुभ्य नम सकल आगम लेखकाय !
तुभ्य नम चरण सप्तति पालकाय !

तुभ्य नम सकल सद्गुण भूषणाय ।
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥७॥
नात्यद्भुत भुवन पावन प्राण-नाथ ।
यत्ते कृता सतत प्राण सुरक्षण ते ।
यै त्याग राग किरणै प्रविलोकितस्त्वम् ।
पूज्य गणेश गुरुराजमह नमामि ॥८॥
श्रद्धाजलि मया दत्ता, कर्णाटक गज केशरी ।
मानकुमार्या सुशिष्या, प्रभाऽख्या क्रम सेविका ॥९॥

□□

श्री गणेश अष्टक

मालिनी छन्द

मरुधर सुवीर वीरभूमौ अजन्मत, सुकुल ललवाणी मातु धूलि सुकुक्षौ ।
रजनिचतुर्यमि पूर्णचन्द्रो पिताश्री, जन्मे बिलाडापुरी पावित्र्यक्षेत्रे ॥१॥
सतत तपतापाद्दीन तापापहारी, असन वसन शुद्धिरेषणा इष्टकारी ।
तव चरण धूलिरष्टकर्मापहारी, गणपति गणेश यच्छतु वाछित मे ॥२॥
निरत सतत ध्याने ज्ञान सम्यक्त्व दृष्टि मे, तिमिर गलन दीपो खड पाखडकारी ।
कलिमल कुदृष्टिर्घ्नन्तु अर्कोऽद्वितीय , ददतु मम ज्योतिर्ज्योतिदाता गणेश ॥३॥
उदयति यदि तारा लक्षकोप्यैसंख्या, न किमपि तमिस्र दूरी कर्तु समर्थ ।
गगन सघन ध्वान्तै पूर्ण चन्द्रो भवत , ददतु-ददतु सौख्य सौख्यदाता गणेश ॥४॥

उपजाति छन्द

श्री—मत मीड्या गुणिन प्रशस्तम्,
ग—वा सुरक्षा कृतवान्नितान्तम् ।
ने—त्रादमृत नितरा वहन्तम्,
श—रीर सौम्य वर कीर्तिकान्तम् ॥५॥
गु—ण निकाय्य विलसत् हृदन्तम्,
रु—णद्धि अशिष्ट पथ , प्रयान्तम् ।
व—क्ता सुस्पष्ट विदुषा महन्तम्,
र—राज तेज च चिदुल्लसन्तम् ॥६॥
च—न्वत्क्षमा द्यु च्च गुणान् धरन्तम्,
र—त्नत्रय शान्ति वधू वहन्तम् ।

ण—स्थान मुद्यद् दुरित हरन्तम्,
प—चेषु मुख्यारि गण जयन्तम् ॥७॥
क—पूर भासा यशसा स्फुरन्तम्,
ज—भारि पूज्य प्रतिभ भदन्तम् ।
व—दे मुदा सौख्य लता वसन्तम्,
दे—वेन्द्र वन्द्य मुनिराड् भवन्तम् ॥८॥
इत्थ सस्तुति मार्गमुज्ज्वल गुणग्रामाभिरामस्फुरत्,
कीर्तिस्त्व गमितो गणेशमुनिराड् विघ्नान् विनष्ट क्षय ।
मूर्धस्थ स्वकनाम षोडशदलाभोजेन भक्त्या मया,
हे कर्नाटक केसरीन्द्रियजये देहीति मे प्रार्थना ॥९॥

□□

शत-शत वदन—शत-शत प्रणाम

□ मोतीलाल सुराना (इन्दौर)

ज्ञानी गुरु-गणेश ने
जोर दिया सर्वदा
एक ही तप पर केवल
भव-ताप हो अथवा
चाहे हो ससारी व्याधि
करले तेला, करले अठाई
और कहा करने को मासखमण
कोई न बचा ऐसा
जिसकी दूर न हुई हो व्याधि
दोनो हाथो मे लड्ड
यह लोक भी साताकारी
परलोक भी सुख की खान
खद्दरधारी गुरु-गणेश ने
जालना मे था किया प्रयाण
जोर न चला अतिवृष्टि बाढ का
शत-शन वदन हे गुरुवर
शत-शत मम तुझको प्रणाम !

□□

[विलम्ब से प्राप्त सामग्री एव विमोचन समारोह-विवरण]

शुभाशा : बधाई !

कर्णाटक केशरी तपोधनी श्री गणेशलाल जी महाराज साहब का जीवन तपस्तेज से दीप्त, सत्य के प्रकाश से आलोकित और साधना से सफलीभूत था। सम्यक्त्व धर्म के प्रचार-प्रसार मे उनकी अथक प्रेरणा रही। तप से विकार-चिकित्सा का अनूठा प्रयोग उनकी महान् उपलब्धि है।

तपस्वी जी महाराज का जीवन चरित्र मरुधरा भूषण श्री रमेश मुनि ने लिखा है। इसके मूल मे तपोनिधि श्री वसन्त मुनिजी की प्रेरणा तथा श्री रतन मुनि 'रत्नाकर' का उत्साह-वर्धन है। यह सुन्दर आयोजन सफल हो, यही मेरी शुभाशा है तथा उक्त मुनित्रय को बधाई !

जीवन-ग्रन्थ सभी के लिए प्रेरणाप्रद सिद्ध होगा— यही मगल भावना है।

—महास्थविर उपाध्याय श्री कस्तूरचन्द जी महाराज

(जैन स्थानक, रतलाम)

प्रकाशन सहयोग

सादर धन्यवाद

१५००) श्री जे० धनराज जी सियाल, बेंगलूर ।

५०१) श्री जे० भँवरलाल जी सियाल, बेंगलूर ।

५०१) डो० माणकचन्द जी कोठारी, बेंगलूर ।

दानवीर तपस्वी श्रावक रत्न श्रीमान हस्तीमल जी मुणोत सिकन्दराबाद द्वारा पुस्तकें नि शुल्क वितरण हेतु ५ हजार की सहयोग राशि का अनुदान ।

बहुत बहुत धन्यवाद ।

सशोधन

प्रारम्भ के दानदाता सूची मे कृपया निम्न सशोधन कर लेंवें ।

२१००) श्री गणेश वस्त्र निकेतन, (राधा कृष्ण नाका) रत्नागिरी

गुरू गणेश जीवन दर्शन का विमोचन :- दिनांक 12 फरवरी को तपोनिधि श्री बसन्त मुनि जी महाराज को पुस्तक का समर्पण करते हुए समाज के प्रसिद्ध उत्साही युवक सिविल इंजीनियर श्री शांतिलाल जी दुगड (नासिक)

विमोचन समारोह

दिनाक १२ फरवरी के पुण्य-प्रसग पर परतूर जि० जालना मे तपोनिधि श्री वसन्त मुनिजी महाराज के सान्निध्य मे गुरु गणेश-जीवन दर्शन' पुस्तक का विमोचन कार्यक्रम सादगी के साथ अत्यन्त उत्साहपूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुआ।

इस प्रसग पर मद्रास, बैगलूर, हैदराबाद, सिकन्द्राबाद, नासिक, आगरा- बम्बई, इन्दौर आदि सुदूर क्षेत्रो से समागत सैकडो श्रद्धालुजन उपस्थित थे। अनेक वक्ताओ ने गुरुदेवश्री के जीवन तथा तप प्रभाव के सम्बन्ध मे अपने विचार व श्रद्धोद्‌गार प्रकट किये। जिनमे श्रीचन्द सुराना (आगरा) हस्तीमलजी मुणोत (सिकन्द्राबाद) श्रीशातिलालजी दुगड (नासिक) श्री डुंगरवालजी (लासलगांव) शेरमल जी बोहरा (सिकन्द्राबाद), सोहनलाल जी साखला (बैगलूर) आदि प्रमुख है। नगर के श्रावको ने अत्यन्त उत्साह के साथ सुन्दर व सुविधापूर्ण आदर्श व्यवस्था रखी।

तपोनिधि श्री वसन्त मुनिजी महाराज ने गुरुदेवश्री की अमूल्य शिक्षा व साधना से सम्बन्धित अनेक सस्मरण सुनाये। कार्यक्रम चार घटा तक बहुत ही शान्तिपूर्ण ढग से चला।

पुस्तक प्रकाशन मे सहयोग हेतु चावल के दानो पर लिखित नवकार मत्र की ऊँची बोली भी श्रीमान हस्तीमल जी मुणोत की तरफ से रखी गई। तथा श्री मुणोतजी ने अपने ट्रस्ट से भी पाँच हजार की राशि के उदार दान की घोषणा की।

पुस्तक का विमोचन—तपस्वी श्री वसन्त मुनिजी म० को समर्पण नासिक के उत्साही युवक सिविल इजीनियर श्री शान्तिलाल जी दुगड ने किया।

तपस्वी श्री रतन मुनिजी 'रत्नाकर' का प्रेरणाप्रद प्रवचन तथा उत्साहवर्धन सराहनीय रहा।

विशिष्ट संस्मरण

विमोचन प्रसग पर वाहर से पधारे हुए गुरुदेव के भक्तो ने अपने विविध सस्मरण भी सुनाये। जिन्हे सुनकर लगा, यदि एक वर्ष का समय हमारे पास होता तो सभवत सैकडो अनूठे अद्भुत और रोमाचक संस्मरण और इस ग्रन्थ की शोभा वढाने को मिल जाते।

कुछ महत्वपूर्ण सस्मरण श्रीमान हस्तीमलजी मुणोत (सिकन्द्राबाद) ने सुनाये। जिनमे से कुछ इस प्रकार है —

☐ श्री हस्तीमलजी मुणोत —

गुरुदेव श्री गणेशलालजी महाराज बहुत ही निस्पृह एव फक्कड वृत्ति के सन्त थे। तप-जप-ध्यान एव साधना, सयम एव मौन के प्रभाव से उनकी वाणी मे अनूठा चमत्कार पैदा हो गया था।

(१) वि० स० २०१८ चोसाला मे गुरुदेव का चातुर्मास था। मैं कार लेकर सपरिवार दर्शन करने आया। वापस जाते समय किसी मोड पर गाडी का एक्सीडेंट हो गया। किसी पेड से टकराकर गाडी १५ फीट ऊँची उछली और फिर एक गड्ढे मे ओधी गिर गई। गाडी पूरी उलट गई और हम सब भीतर बैठे थे सभी उलटे गिर गये। गाडी का एक्सीडेंट इतना जबर्दस्त था कि डिग्गी मे रखी पानी की झारी टुकडे टुकडे हो गई। परन्तु भीतर बैठे किसी को भी कोई चोट नही लगी। यह था गुरुदेव का पुण्य प्रभाव!

(२) गुरुदेवश्री का नादेड चातुर्मास था। वर्षा बहुत हुई। नदी मे भारी बाढ आ गई, और पानी नगर मे भरने लगा। पानी वढता हुआ स्थानक मे भी घुस गया। गुरुदेव उस समय स्थानक मे एक चबूतरे पर विराजमान थे। चबूतरे के किनारे तक पानी आ गया। लोगो मे भगदड मच गई। गुरुदेव से श्रावको ने कहा—गुरुदेव! पानी आ रहा है, आप ऊपर पधारें।

गुरुदेवश्री ने अविचल शान्त भाव से कहा—जहां पानी होता है वही पानी आता है, शान्त रहो!

गुरुदेव रातभर उसी चबूतरे पर विराजमान होकर ध्यान करते रहे। पानी ऊपर नही आया। दूसरे दिन सुबह पानी उतर गया। तब गुरुदेव ध्यान से उठे।

ऐसे निर्भीक एव शान्त धीर चेता थे तपस्वीराज!

□□

अतिथि-सत्कार व सेवा का सुफल

नादेड मे श्री मिश्रीलाल जी सकलेचा गुरुदेव के प्रति अनन्य भक्ति रखते थे। उन दिनो इनकी स्थिति बहुत साधारण थी। फिर भी गुरुदेव के प्रति श्रद्धा और अतिथि-सत्कार की भावना तीव्र थी। कर्ज लेकर भी इन्होने गुरुदेवश्री की सेवा मे आने वाले दर्शनार्थी स्वधर्मि-बन्धुओ का आतिथ्य-सत्कार किया। उसी का फल है कि आज उनकी स्थिति सभी प्रकार से बहुत ही अच्छी व सम्पन्न है।

□ कुछ अन्य श्रावको ने भी स्व० गुरुदेवश्री के सस्मरण सुनाये। ज इस प्रकार हैं—

श्री मानिकचन्द जी बाफना बडगांव (पूना) वाले गुरुदेवश्री की सेवा मे आये। उनकी पत्नी को टी० बी० हो गया था। अनेक इलाज कराने पर भी ठीक नही हो पा रही थी। गुरुदेव श्री ने उनको मगलीक सुनाई। भक्ति मे बल होता है, धीरे-धीरे वे बिना दवा के ही पूर्ण स्वस्थ व नीरोग हो गई।

दूरदृष्टि :—

सेठ श्री चुन्नीलाल जी धोका नीमगांव चौहान (नगर) के निवासी थे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती हरकुबाई गुरुदेवश्री के प्रति असीम भक्ति रखती थी। हरकुबाई की पुत्री थी चचलाबाई।

गुरुदेवश्री के सामने एक बार हरकुबाई धोका ने कहा—मैं अपनी पुत्री को किसी गरीब युवक को दूंगी जो पढ़ा-लिखा हो, पर गरीब हो।

तभी वहाँ के एक युवक खीवराज जी गादिया (जो उस समय बहुत ही गरीब स्थिति मे थे) गुरुदेवश्री की सेवा मे दर्शनार्थ आ रहे थे। उन्हे देखते ही गुरुदेव ने कहा—हरकु ! तू कह रही है न गरीब लडका चाहिए सो यह आ गया। अब क्या देखती है, तेरे सामने आ गया है।"

हरकुबाई ने भी गुरुदेवश्री की दूरदृष्टि को समझ लिया और तुरन्त ही सगाई पक्की कर ली। १० दिन मैं ही शादी हो गई। उस शादी मे गाँव के व आसपास के करीब १५ हजार लोग उपस्थित थे। तब से श्री गादिया जी को गुरुदेव का आशीर्वाद मिला तो आज बहुत ही अच्छी आर्थिक स्थिति मे है। इस पुस्तक के प्रकाशन मे भी आपने ११ हजार की राशि प्रदान की है। चित्र देखें।

इस प्रकार गुरुदेवश्री से सम्बन्धित विभिन्न रोचक सस्मरण अनेक श्रद्धालुजनो ने सुनाये।

हम विश्वास करते है, इस पुस्तक के प्रकाशनोपरात प्राप्त सस्मरण अगले सस्करण मे यथास्थान देने का प्रयत्न किया जायेगा।

□□